प्रथम आवृत्ति : १९४६

मूल्य दो रुपये

मुद्रक—श्रीपतराय, सरस्वती प्रेस, बनारस.

अनुक्रमणिका

प्रस्तावना

.ानता हूँ कि मैं इस बार खाली हाथों लौटा हूँ, लेकिन मुझे इस बात का नहीं, गर्व भी है कि जिस झण्डे की इज्जत मेरे हाथों में सौंपी गई थी, को मैंने नीचे न झुकने दिया, और न उसकी इज्ज़त ही कम होने दी। सावधान रहकर, ईश्वर से प्रार्थना की है कि मेरी गफ़लत या दुर्बलता ी क्षण में मुझसे ऐसा कोई काम न हो जाय, जिससे मेरे देश का गौरव और मैं देश-भाइयों द्वारा भेजे गये विश्वास और श्रद्धा के लिए अपात्र न्दन की गोलमेज़-परिषद् से लौटने के बाद, गांधीजी ने अपनी यात्रा के परिणाम को इन्हीं चन्द चिरस्मरणीय वाक्यों द्वारा व्यक्त किया था। जब .लायत में थे, तब वहाँ के एक अंग्रेज़ राजनीतिज्ञ उनके मित्र होने का थे, और अपनी मित्रता को वाणी और व्यवहार से प्रदर्शित करने को : रहते थे। लेकिन जब गांधीजी हिन्दुस्तान लौटे तो उन मित्र ने रंज़ीदा कि विलायत में जो लोग राजनीति और अधिकार में नेता गिने जाते थे, ता का जो सुन्दर मौका गांधीजी को मिला, उसका उन्होंने सदुपयोग न तो सिर्फ पादरियों, सनकी और निम्न लोगों से ही मिल-जुलकर रह गये। ाना से तो यही सिद्ध होता है कि ये सज्जन शायद गांधीजी की विला- े उद्देश्यों और काम करने के ढङ्ग से भी वाक़िफ न थे। अगर गांधीजी 'राजनैतिक सौदा' करने विलायत गये होते तो यह बात ठीक मानी जाती; ग ध्येय तो उस वक्त ब्रिटिशों को हिन्दुस्तान की सही हालत समझाना ी-साथ ब्रिटिश जनता की सहानुभूति पाना तथा हिन्दुस्तान के प्रति उनके दक़ियानूसी विचारों को पलटना भी था; क्योंकि इससे वे लोग हिन्दुस्तान ये गये अत्याचारों का निवारण करके भारत और इंग्लैण्ड के सम्बन्ध के एक नया प्रकरण जोड़ने का प्रयत्न करते। गांधीजी को अहिंसा के पुजारी पूर्ण अहिंसात्मक ढङ्ग से काम करना था, और वे गये भी थे हिन्दुस्तान

के अहिंसात्मक संग्राम के प्रतिनिधि बनकर ही। यदि हिन्दुस्तान और इंग्लैण्ड का सौ साल का पुराना झगड़ा बिना मार-काट और हिंसा के निबट जाता तो यह अहिंसा की जीत का एक खूबसूरत उदाहरण होता और उसी बीज में से किसी दिन विश्व-शान्ति के उत्पन्न होने की आशा रखी जा सकती थी।

अर्थात् उन्हें उस वक्त अंग्रेजों के सामने हिन्दुस्तान की हालत, यहाँ के अहिंसात्मक संग्राम, उसके पीछे छुपे इतिहास को रखकर बातचीत करनी थी। उन्हें वहाँ की जनता को यह भी बताना था कि हिन्दुस्तान ब्रिटेन के द्वारा किस तरह चूसा जा रहा है, और इस शोषण में सभी अंग्रेज़ खुले और छुपे तौर पर किस तरह लगे हैं। जिसका नतीजा हिन्दुस्तान भुखमरी, रोग और नीचता के रूप में भोग रहा है। इसीलिए उन्होंने लंकाशायर के मज़दूरों से कहा था कि 'हिन्दुस्तान की गरीब औरतों और जुलाहों के मुँह से, जो किसी तरह सूत कातकर अपना गुज़ारा करते हैं, तुम लोग रोटी का टुकड़ा भी छीन लेना चाहते हो? मैं तुमसे उन दीन, हीन, असहायों की तरफ़ से यह पूछता हूँ।' उस वक्त सिर्फ लंकाशायर ही नहीं, बल्कि तमाम विदेशी कपड़े का बहिष्कार (Boycott) भारत क्यों करता है, यह बात उन मज़दूरों की समझ में अच्छी तरह आ गई थी। उस वक्त औरतों ने अपनी गोद के बच्चों को गांधीजी के सामने रखकर उनसे आशीर्वाद लिये। उन्होंने वहाँ के ईस्ट एण्ड (पूर्वी हिस्से) के लोगों और पादरियों के सामने, हिन्दुस्तान के अहिंसात्मक आन्दोलन में जो आत्मसंतोष और रचनात्मक कार्यों का भाव है, उसका विशद वर्णन किया। गांधीजी ने उन्हें यह भी बताया कि ब्रिटिश सरकार शराब और अफ़ीम के दुष्परिणामों की ओर खयाल न करके उन्हें टिकाये रखने के लिए क्या-क्या तरकीबें चलती है, और दूसरी ओर हिन्दुस्तान के औरत, मर्द और बच्चे इसके विरुद्ध कैसे आन्दोलनों में संलग्न हैं। भारत के गरीबों को मसाले के नाम पर सिर्फ नमक मिलता है, जिससे नमक-कर के कारण उन लोगों पर कितना बोझ बढ़ जाता है, यह भी उन्होंने कहा। अस्पृश्यता के पाप की जड़ उखाड़ने के लिए वर्तमान भारत क्या-क्या प्रयत्न कर रहा है, यहाँ की कांग्रेस ने इस कार्य को खास महत्व दिया है, और सवर्ण हिन्दू-समाज अपने पुराने पापों को धो डालने के लिए हरिजनों की कैसी सेवा कर रहा है, इसका भी वर्णन उन्होंने किया। वे जान-बूझकर लन्दन में, गरीबों की बस्ती में ठहरे, उन लोगों के जीवन में मिल-जुल गये और इस तरह लोगों को बता

न्दन के गरीबों और हिन्दुस्तान के कंगालों के बीच कितनी आत्मीयता है। लन्दन के इन गरीब मजदूरों ने गांधीजी की रहन-सहन, सादगी, ूझकर अपनाई गई गरीबी, उनकी जीवनगत विशुद्धि और आस्तिक भावना को अपनी आँखों से देखा, और समझे कि हिन्दुस्तान के अहिंसा-ोलन की बुनियाद और आधार क्या है। उन्हें इस बात का भी अनुभव ा रहा कि वह आन्दोलन किसीसे शत्रुता करना नहीं सिखाता, उसका 'विश्व-प्रेम' है।

ारायण से अपना मानसिक और रचनात्मक सम्बन्ध निरन्तर जारी रखने धीजी लन्दन में भी नियमित रूप से चर्खा कातते थे, उनका यह व्रत टता न था। अगर सारा दिन भी काम-काज में बीत गया हो, साँस लेने ात न मिली हो, ऐसी हालत में कभी-कभी किंग्सली हाल तक पहुँचने में बीत जाती थी। एक बार तो वे रात को ढाई बजे घर आये; झट आधे घण्टे के लिए चर्खा कातने बैठे; कुछ देर सोकर फिर चार बजे के लिए उठ बैठे। और इस तरह पुनः दूसरे दिन के काम-काज का चक्र चला। ली हाल में, गांधीजी कई बार हम लोगों को भोजनालय में मदद करने के थे। वहाँ आलू के छिलके निकालने, तरकारी काटने, बर्तन मांजने वगैरह हमारे साथ-साथ किंग्सली हाल के भाई-बहनों को भी बहुत आनन्द आता जो 'मूक-प्रार्थना' होती, उसमें हम लोग भी चुपचाप जा बैठते। शनिवार ो हाल में मनोरंजक कार्यक्रम रखा जाता, जिसमें स्त्री-पुरुष मिलकर गाते थे, गांधीजी भी कभी-कभी देखने के लिए आ बैठते थे।

ी एक अवसर पर किसीने पूछा—'गांधीजी, हमारे इस लोक-नृत्य में ल नहीं होंगे?' गांधीजी ने हँसते-हँसते कहा—'क्यों नहीं?' फिर हाथ ताकर बोले—'यह लाठी मेरी साथिन बनेगी!' उनकी यह चतुराई और कर सब-के-सब हँस पड़े। दूसरे एक अवसर पर हमारी मण्डली की एक बहन क साथ इस नृत्य के प्रति घृणा प्रदर्शित करने लगीं। तब गांधीजी ने उन्हें ना देते हुए कहा—'तुम्हें यह समझना चाहिए कि इन लोगों के लिए एक श्रेष्ठ मनोरञ्जन है; हमें जिन लोगों में शामिल होना है, उनके रहन जन में भी हमें मन से साथ देना चाहिए, और उसकी अच्छाई को सम-

करने की आदत डालनी चाहिए। तुम्हें यह भी न भूलना चाहिए कि लोक-हृत्य, विलायत का एक पुराना रिवाज़ है, और इंग्लैंड के राष्ट्रीय जीवन का अब एक अविभाज्य अङ्ग बन गया है।

शहर के इस हिस्से में रहनेवाले मज़दूरों के घर भी गांधीजी कई बार गये थे। वहाँ की छः-छः पेनी में भोजन देनेवाली ग़रीबों को सादे 'होटलों' तथा मिल के उपहार-गृहों, मनोरञ्जन के स्थानों और इसी तरह के सार्वजनिक, विशेष कर मज़दूरों की बस्ती में जाने के लिए वे हम लोगों से भी आग्रह करते थे। उन्होंने हमें रोज़, कम-से-कम सोलह मील चलने की सलाह दी थी, लेकिन इतना वक्त हम कहाँ से पाते? उन्होंने हमें यह भी कहा था कि हम विलायत के पुलिस-मैनों से पहिचान करें, वहाँ की विभिन्न संस्थाओं की जानकारी हासिल करें, और वहाँ के संग्रहालयों (अजायबघरों), लायब्रेरियों, कला-संग्रहालयों को देख आयें, इसके साथ-ही-साथ वहाँ के जनसाधारण के स्वभाव—उसकी नियमित क्रियाशीलता तथा सामुदायिक अनुशासन और उनके आन्तरिक जीवन का सूक्ष्म अवलोकन करें। गांधीजी खुद लगातार परिश्रम करते थे। बहुत ही कम नींद में काम चला लेते और फल, कच्ची तरकारी, खजूर और कुछ तोले बादाम से आहार की पूर्ति कर लेते थे। ऐसी स्थिति में भी उनके लिए जो फल वग़ैरह लाये जाते, उनके बारे में बारीकी से पूछताछ करते थे। एक बार मैंने योंही, बग़ैर खास खयाल किये, 'छः पेंस में एक छोटी-सी शहद की शीशी खरीद ली; उसके लिए' मुझे जो कुछ उनसे सुनना पड़ा, उसे मैं ज़िन्दगी-भर नहीं भूल सकता। उस भूल के लिए उन्होंने आधे घण्टे तक उपदेश दिया। उन्होंने उस वक्त का भी वर्णन किया, जब वे विद्यार्थी बनकर लन्दन में रहते थे; बोले—'उस वक्त मैं एक-एक पैसा बचाने की कोशिश करता था। शाम को रोटी, कोको और एक सेब से ही काम चला लेता था। एक दिन, रोज़ की तरह सेब-वाले से एक सेब लेकर बाक़ी के दो पेंस लेना भूल गया, और वे दो पेंस मैंने यूँ ही खोये! लन्दन में, मेरी पैसे की बाबत ग़ैरखयाली का यह एक ही उदाहरण है, लेकिन यह मुझे अभी तक याद है, और जब-जब याद आता है तब-तब खेद और पछतावा होता है। मैंने अपने बचाव के तौर पर कहा—'मैं तो अनजान था, मुझे उसकी क़ीमत कैसे मालूम होती?' इस तर्क के लिए मुझे और ज़्यादा उलाहना सुनना पड़ा—'तुम्हें यह सोच लेना चाहिए था; चार जगह तलाश करके ख़रीदना चाहिए था।

। जानना चाहिए था कि यह तुम एक ग़रीबों के प्रतिनिधि के लिए ख़रीद
ीबों का प्रतिनिधि ग़रीबों के पैसे का ट्रस्टी होता है; अगर ट्रस्टी में ही
परवाहियां होंगी तो वह गुनहगार माना जायगा।' यह कहकर उन्होंने मुझसे
ो वह व्यथा भी कही, जो रात-दिन उनके दिल में घर किये रहती
ने उड़ीसा में जो कङ्काल देखे थे, उनकी हालत पर वे बोले—'उस दशा
न-रात मेरी नजरों में समाया ही रहता है ; मेरी बड़ी श्रद्धा मुझे रोकती
र ईश्वर की योजना ही कल्याणकारी साबित होगी।' यह कहते-कहते
भारी हो गया और आंखों से आंसू टपकने लगे। उस वक्त सर पुरुषो-
त्तदास वहीं थे। गांधीजी की यह दशा देखकर वे आश्चर्य से अवाक्
र मैं एक ऐसा पाठ सीख गया जो मुझे ज़िन्दगी भर काम देगा।
त नहीं कि लन्दन के ईस्ट एंड के ग़रीब लोग गांधीजी की इन सब बातों
समझते हों। वे यह बात अच्छी तरह समझ गये थे कि गांधीजी भी
एक व्यक्ति हैं। और वे जो आन्दोलन ग़रीबों के उद्धार के लिए चला
भारत के साथ-साथ उनका अपना भी है। गांधीजी ने वहां के पादरियों
बात समझाई कि हिन्दुस्तान के अहिंसात्मक आन्दोलन में ईसामसीह
ा ही व्यावहारिक उपयोग हो रहा है ; धार्मिक प्रतिनिधि के तौर पर
ह फ़र्ज है कि वे शाही हुक्म के अधीन न हों ; यही नहीं, जब शासक
भूलकर अपनी सत्ता का दुरुपयोग करे, तब उसे रोक-टोककर ठीक
ना चाहिए। केवल सत्य और न्याय के पक्ष में रहकर अधिकार के लिए
ादरियों का एक फ़र्ज़ है; हिन्दुस्तान के आन्दोलन का आधार भी यही
उन्हें हिन्दुस्तान के अधिकारों के पक्ष में निडर होकर खड़े रहना चाहिए —
ीजी ने उन्हें समझाया। गांधीजी सम्राट् की सत्ता और ठाट-बाट से
यह भी उन्होंने दिखा दिया था। जब वे खास निमन्त्रण से सम्राट् के
हल के जलसे में सम्मिलित होने के लिए गये, तब भी उन्होंने अपनी
ली ; यहां तक कि गले में रोज़ पहने जानेवाले दुपट्टे की जगह धुला
डाला, उसे पलटकर ओढ़ लिया। सम्राट् के साथ की बातचीत में भी
स्पष्टता से काम लिया। सम्राट् ने उनसे कहा—'मैं जब दक्षिण अफ्रिका
प मुझे मिले थे। उस वक्त, और बाद सन् १९१८ तक तो आप अच्छे

आदमी थे, लेकिन बाद में बहुत कुछ गड़बड़ी हो गई है।' गांधीजी ने गंभीर मौन धारण कर इन शब्दों को सुना; लेकिन जब फिर बादशाह ने पूछा कि 'आपने मेरे बेटे का बहिष्कार क्यों किया?' तब गांधीजी ने जवाब दिया—'आपके बेटे का नहीं, बल्कि ब्रिटिश ताज की सरकार द्वारा नियुक्त प्रतिनिधि का बहिष्कार किया गया है।' तब सम्राट् आगे बढ़कर बोल उठे—'किसी भी देश में राजद्रोह माफ़ नहीं किया जा सकता; सरकार को अपना शासन-यंत्र चलाने के लिए उसे दबा देना ही चाहिए।'— ये शब्द सम्राट् ने कहे इसलिए भी सहन करके चुपचाप नहीं रहा जा सकता था। गांधीजी ने अपने स्वाभाविक शिष्टाचार के साथ दृढ़ता से कहा—'इस विषय में मैं वाद-विवाद करूँ, इसकी तो आप आशा भी नहीं करते!'

ऐसी ही साफ़-साफ़ बातें उन्होंने रोम में मुसोलिनी से भी कही थीं। मुसोलिनी ने गांधीजी को खुश करने के लिए पूछा—'क्या तुम यह नहीं चाहते कि स्वतन्त्र हिन्दुस्तान हमारी इटली से भी सम्बन्ध स्थापित करे?' गांधीजी इस बात का आशय समझ गये; वे उस बात से लुभा जाते, ऐसा तो था ही नहीं; बोले—'मेरी कल्पना का स्वतन्त्र हिन्दुस्तान, सिर्फ़ इटली नहीं बल्कि सारी दुनिया से मित्रता रखकर शान्ति से रहना चाहेगा।' तब उस फासिस्ट डिक्टेटर ने पुनः व्यंग्य से पूछा—'क्या तुम सचमुच यह मानते हो कि अहिंसा से हिन्दुस्तान को आज़ादी मिल जायगी? मैंने जो यह फासिस्ट ढङ्ग से सैनिक-राज्य का निर्माण किया है, इसके विषय में आपका क्या खयाल है?' गांधीजी ने सत्यवक्ता की तरह स्पष्ट शब्दों में कह दिया—'मुझे तो लगता है, यह आपका खयाली महल ही होकर रहेगा।'

रोम के सीन्यौर गायडा ने अपने "ज्यौर्नेल-डी-इटालिया" नामक पत्र में गांधीजी की जो 'मुलाक़ात' प्रकाशित की थी, उसका उल्लेख 'गांधीजी की यूरोप-यात्रा' में किया गया है। यह 'मुलाक़ात' शुरू से आखिर तक बनावटी थी। जब गांधीजी विल्नव में महर्षि रोमां रोलां के यहाँ ठहरे, तब महर्षि ने गांधीजी को वहाँ के छल-कपट से सावधान करते हुए कहा—'आप किसी भी नये आदमी को सामने हाज़िर रखे बिना किसी भी इटलीवाले से न मिलें।' स्वदेश पहुँचने के पहले ही गांधीजी ने 'सविनय-अवज्ञा-आन्दोलन' की योजना तैयार कर ली है, यह बात भी सही न थी। वे तो यहाँ तक कोशिश करना चाहते थे कि अगर 'गोलमेज़-परिषद्' के अवशेषों में से कुछ अंश बचाये जा सकें तो बचा लें; वे इस बारे में एकदम निराश भी न हुए

ते रवाना होने के पहले उन्होंने सर सैम्युअल होर को इस आशय का लिखा था, और हिन्दुस्तान पहुँचने पर उनके जवाब का इन्तज़ार भी सके बाद वैसा उत्तर भी आया जिसमें आशा के लिए काफ़ी स्थान था ; श के सत्ताधीश ज़रा भी खतरा मोल लेने के लिए तैयार न थे। यहाँ ाजी के जहाज़ 'पिल्स्ना' के हिन्दुस्तान के किनारे के पहुँचने के पहले ही रों ने पं० जवाहरलाल, बादशाह खाँ और मरहूम जनाब शेरवानी को के समझौते की सब आशाओं पर पानी फेर दिया। गाँधीजी के आने के भीतर-भीतर तो कॉंग्रेस के अधिकांश नेता जेल के सीखचों में बन्द और पुरज़ोर से पुनः 'आर्डिनेंस-राज' चलने लगा।

भी प्रति सभ्यता और शिष्टाचार-पूर्वक व्यवहार रखने के लिए गाँधीजी रहते थे, उसका एक उदाहरण मैं यहाँ देता हूँ। बम्बई पहुँच जाने के ार्यकारिणी समिति की बैठक जारी थी, तब उन्होंने मुझे 'ब्रिटिश' दो जेब-घड़ियाँ लेने के लिए बाज़ार भेजा ? गुप्त पुलिस के जो दो शा गाँधीजी के साथ (विलायत में) घूमते रहते थे और जो सर सैम्युअल हुक्म से ब्रिंडिसी तक उनके साथ आये थे, उन दोनों को, गाँधीजी ने क घड़ियाँ देने का वचन दिया था। मैं बाज़ार में घूम-घूमकर ढूँढ़ता टेश घड़ियाँ न दिखाई दीं। इसलिए बहुत-सी 'स्विस मेड' घड़ियाँ गाँधीजी ; लिए ले आया। उस वक्त गांधीजी के सम्मुख ब्रिटिश माल के बहिष्कार 'व आया था, लेकिन कार्य-समिति ने उसे अभी तक पास न किया था। कहा - 'ये दो घड़ियाँ तो 'ब्रिटिश-मेड' ही होनी चाहिएँ ताकि उनको ' के बहिष्कार की यकायक शंका न हो जाय, क्योंकि अभी तक कार्य-ब्रिटिश माल के बहिष्कार का प्रस्ताव पास नहीं किया है। इसलिए मैंने हर को सभी घड़ी की दूकानें देख डालीं तब कहीं 'ब्रिटिश' बनावट की दो ः घड़ियाँ लाकर उनके हाथों में रखीं। सचमुच सारे बम्बई शहर में उस ' बनावट की वे दो ही घड़ियाँ थीं।

क प्रयत्नों में भी गाँधीजी ने कुछ करना बाकी न रखा ; एक आदमी से किया जा सकता है, वह उन्होंने किया। सर ज्याफ्रे कार्बेट भारतीय ल के सेक्रेटरी के तौर पर विलायत गये थे। जब उन्होंने संघ-शासन-

'विधान-समिति की पहली बैठक में गांधीजी का भाषण सुनने के बाद उन्हें एक व्यक्तिगत खत लिखा, जिसमें उन्होंने लिखा था—'कल जब मैं आपके मुँह से निकलती ज्ञानवाणी सुन रहा था, तब मुझे इस बात का गर्व भी हो रहा था कि आप उस प्रतिनिधि-मंडल के सदस्य हैं, जिसका मैं मन्त्री हूँ; यह मेरा सौभाग्य है।'

उन दिनों गांधीजी बिना किसी योजना अथवा टिप्पणी के बहुधा पहले विचार किये बिना ही ऐन वक्त पर गोलमेज़-परिषद् में भाषण देते थे। इसके बारे में "न्यूयार्क टाइम्स" के संवाददाता ने लिखा था कि 'यह तो गांधीजी ने भाषण देने का एक नया तरीका निकाला है; परिषद् के समाप्त होने के पहले ही सारी दुनिया इससे वाक़िफ़ भी हो जायगी।'

लेकिन उस परिषद् के वक्त विरोधियों ने उनके विरुद्ध काफ़ी जाल फैला दिया था; टोरी-पार्टी हिन्दुस्तान से अपने शिकंज़े हटाने के लिए ज़रा भी राज़ी न थी, और यही सोचकर इस पार्टी ने मेकडानल्ड की संयुक्त सरकार में 'भारत-विभाग' अपने हाथों में कर लिया था। 'भारत-रत्न' को छोड़ने की उनकी ज़रा भी मर्ज़ी न थी।

उन्होंने गांधीजी को भटकाने के लिए कई तरह की तरक़ीबें आज़माईं; दूसरे किसी व्यक्ति के लिए उस जंजाल में से निकलना मुश्किल था। 'अल्पमत-निर्णय' हो जाने के बाद डा० अंबेडकर ने हरिजनों के लिए अलग मताधिकार की मांग परिषद् में पेश की। उस वक्त टोरी-पार्टी के सूत्रधार खुश होकर एक दूसरे के कान में कहने लगे—'अब गांधी के दिन आ लगे!' उन लोगों ने यह आशा भी रखी थी कि हरिजन अपने योग्य और चुने व्यक्ति के परिषद् में भेजने की मांग कर रहे हैं, और हरिजन के 'हितकारी' (गांधीजी) इस बात का विरोध कर रहे हैं—यह तमाशा दुनिया को देखने को मिलेगा। इस बारे में पहले से काफी तैयारी रखी गई थी, और अमेरिका से भी इस बारे में पूछताछ के तार आने ज़ारी हो गये थे।

लेकिन इस बेवक्त खुशी की जगह दूसरे दिन परिषद् में घबराहट फैल गई; गांधीजी ने अल्पमत के उस 'निर्णय' या 'करार' को निर्दयतापूर्वक चीरकर अलग कर दिया, और बता दिया कि यह 'निर्णय' कांग्रेस के विरुद्ध एक भीषण षड्यंत्र है। इस षड्यंत्र में शामिल होने के लिए गांधीजी ने ब्रिटिश सरकार पर जो कलंक का दोषारोपण किया था, वह अभी तक नहीं धुल पाया।

उन दिनों जनरल स्मट्स फरडे-शताब्दी-उत्सव मनाने के लिए इंग्लैंड आये हुए

गांधीजी से कहा था कि—'अगर मेरी मदद से आपकी ताकत बढ़ती हो
तान और इंग्लैंड में कोई स्थायी समझौता होता हो, तो मैं यहां और
ठहर जाऊँगा।' उन्होंने अपने सब प्रयत्न कर देखे ; सेंडिंगहम में जाकर
मिले। लेकिन वहां से निराश होकर उन्हें वापस लौटना पड़ा। वहां
र प्रतिष्ठित माने जानेवाले व्यक्तियों ने समाधान के विरुद्ध बड़ी दीवार
ो थी। इंग्लैंड से जाने के पहले जनरल स्मट्स गांधीजी से मिलने के
:८ नं० नाइट्स ब्रिज के आफिस में आये। गांधीजी कहीं बाहर गये
ो ने खास जनरल स्मट्स का सत्कार करके उन्हें बैठाने के लिए ही
।। यह सुनकर उन्होंने कहा—'ये लोग गांधीजी को पहचानते क्यों
न्हें अच्छी तरह पहचानता हूँ; क्योंकि मुझे उनके साथ बीस सालों का
मैंने लोगों से कह दिया कि अंत में तुम्हें गांधीजी के साथ ही समझौता
वे अकेले ही किसी विषय पर, हिन्दुस्तान की ओर से, दृढ़तापूर्वक
ते हैं।'
त तो यह है कि उस वक्त ब्रिटिश सरकार किसी भी हालत में सत्ता
चाहती थी। प्रो० लीस-स्मिथ पहले की ब्रिटिश सरकार के पोस्ट-मास्टर-
ोहदे पर थे। उन्होंने परिषद् समाप्त होते वक्त गांधीजी से साफ़ शब्दों में
कि—'इस वक्त तुम्हें इससे ज्यादा कुछ नहीं मिल सकता···इस वक्त,
। दृष्टि में तुम्हारी शक्ति का मूल्य इतना ही है।'···मरहूम मि० डेविड
ने तो इससे भी स्पष्ट बात गांधीजी से कही कि—'यदि तुम्हें इससे
ए तो सविनय-अवज्ञा-आन्दोलन और असहयोग द्वारा अपनी मांग को
होगा।' उन्होंने उस आन्दोलन में पूरी सहानुभूति और मदद का
ा।

ज्यादा गांधीजी क्या कर सकते थे? कोई भी क्या कर सकता था? और
परिणाम में क्या अन्तर डाल सकता था? यह सच है कि गोलमेज़-
न्होंने जो मेहनत की, उससे तत्काल ध्येय की सिद्धि न हुई; लेकिन उनके
परिषद् के बाहर कार्य का जो बीज बोया गया था, वह आज भी फल
श्रीमती म्युरीएल लेस्टर की इस किताब में, गांधीजी की विलायत में की
और उसके गहरे प्रभाव का चित्रण है।' 'गांधीजी' की यूरोप-यात्रा' के

उद्देश्यों के राजनीतिक पहलू को जानने के लिए तो गांधीजी के गोलमेज़-परिषद् में दिये गये भाषणों का और महादेव देसाई द्वारा विलायत से लिखे गये पत्रों का मनन ज़रूरी है। संग्रह अंग्रेजी में 'नवजीवन प्रकाशन-मंदिर" की ओर से "दि नेशन्स वायस (The Nations Voice) इस नाम से प्रकाशित किया गया है। गांधीजी की यूरोप-यात्रा उस पुस्तक की पूर्ति करती है। उसे इस पुस्तक के साथ पढ़ा जाना चाहिए।

बम्बई : २१-८-४५ प्यारेलाल

(अंग्रेज़ी से अनूदित)

गांधीजी की यूरोप-यात्रा

गांधीजी की यूरोप-यात्रा

(१)

किंग्सली हॉल का निमंत्रण

१९३१ में जब गांधीजी विलायत आये थे, तब हमारे किंग्सली हाल में
थे। यह किंग्सली हाल लन्दन के पूर्वी भाग के बड़े भारी औद्योगिक
बीचों-बीच सेवा का एक केन्द्र है, या यूँ कहो कि आश्रम है। अक्सर
आसपास के रहने वाले लोग ही इसे चलाते हैं और इसी के द्वारा वे अपनी
सामाजिक कल्याण और आत्म-विकास को निजी प्रयत्नों से बढ़ाते चलते
इसमें दस स्वयं-सेवक पूरे दिन काम करनेवाले हैं। इस कार्य के
उन्हें भोजन, साप्ताहिक सात शिलिंग और रहने के लिये पहले मजले
हुए कमरों में से एक कमरा दिया जाता है। ये लोग धर्म, जाति,
द के भेद-भावों को भूल कर सम्मिलित भोजन, व्यवस्था, लिखना-पढ़ना,
ई और प्रार्थना आदि करते हैं। किंग्सली हाल का मुख्य ध्येय प्रभु ईसा
ताये हुए ईश्वर-सान्निध्य के अनुभव का अनुशीलन ही है। गांधीजी के
और किंग्सली हाल के आदर्श और आकांक्षाओं में बहुत ही साम्य है।
गांधीजी के आश्रम का अनुभव था ही; अतः मुझे शुरू से पूर्ण विश्वास
उन्हें लन्दन की किसी और जगह ठहरने की अपेक्षा इसी वो मुहल्ले में
अधिक उचित प्रतीत होगा। इसी कारण जब मुझे मालूम हुआ कि
परिषद में आ रहे हैं तो मैंने उन्हें किंग्सली हाल में ठहरने का निमंत्रण
उन्होंने जवाब में लिखा—'इसमें कोई शक नहीं कि अन्य जगहों
किंग्सली हाल में रहना मुझे अधिक अच्छा लगेगा। परन्तु स्वागत-मण्डली
का और कहीं प्रबंध कर रही होगी। उनके निर्णय का उल्लंघन मैं न

1352

कर सकता। इसीलिए मेरी सलाह है कि तुम उनसे मिलो और उन्हें मेरा यह पत्र भी दिखाओ। मैं उन्हीं के हाथों में हूँ।'

पत्र मिलते ही मैंने एक भी क्षण नहीं गँवाया। मैं सीधी मि० हेनरी पोलक के कार्यालय में गई और अपने निमंत्रण की बात उनसे कही।

मि० पोलक—'यह तो ठीक है, परन्तु यह संभव नहीं। वेस्ट मिन्स्टर और सेंट जेम्स के महल से इतनी दूर रहने में उन्हें कितनी अड़चन होगी? इसका तो ज़रा ख्याल करो। इसमें तो कोई सन्देह है ही नहीं कि उन्हें यहीं रहने में हार्दिक आनन्द मिलेगा और सच कहा जाय तो वही जगह उनके रहने लायक भी है, पर इन सब बातों का विचार यहाँ किया नहीं जा सकता।'

संयोग से मि० एण्ड्रूज भी मि० पोलक के कार्यालय में ही थे। उनके पास भी उसी दिन इसी आशय का गांधीजी का पत्र आया था। अतः वे भी बोले—'उन्हें अन्य जगहों की अपेक्षा बो के मुहल्ले में ही अधिक हार्दिक आनन्द होगा, यह मैं अच्छी तरह जानता हूँ; पर काम-काज के कारण इतनी दूर रहना कैसे संभव हो सकता है, यह मैं समझ नहीं पा रहा हूँ।

दोनों ने मुझे कुरसी पर बैठने के लिए कहा, पर मैं बैठी नहीं। मुझे मालूम था कि मुझे बहादुर की तरह खड़े रहकर ही लड़ाई चालू रखनी होगी। सिर्फ परिषद् की ही सफलता का विचार करनेवाले तटस्थ आदमी की तरह मैंने कहा,—'मि० पोलक, आप जो कह रहे हैं उसे मैं भी स्वीकार करती हूँ। वे हमारे ही यहाँ आकर रहें, यह मेरी इच्छा है। हमारे बो के लोगों को गांधीजी के सहवास से फ़ायदा होगा और उनका आतिथ्य करने में उन्हें अत्यन्त आनन्द मिलेगा। परन्तु इससे भी आगे मुझे तो पूर्ण विश्वास है कि गांधी जी लन्दन के पूर्व भाग में ही रहेंगे तथा यह उनके और उनके कार्य के लिए बड़ी ही उत्तम वस्तु होगी। गरीबी के बारे में उनके क्या विचार हैं, यह तो सभी जानते हैं। उन्हें मजबूरन लन्दन आना पड़ रहा है, इसीलिए वे गरीबी के विचारों को छोड़े दे रहे हैं, ऐसा हमें स्वप्न में भी ख्याल न करना चाहिए। यहाँ, हम ऐसे कुछ थोड़े ही लोग, बहुत ही कम समय, उनकी तरह दैनिक-जीवन व्यतीत करने की कोशिश करते हैं। अब वे पश्चिम में

आ रहे हैं; ऐसे समय हमें उनके रहन-सहन में परिवर्तन करने का
क्या है? अब हम लोगों को यह आशा है कि यह गोलमेज-परिषद्
तेहास में नये युग का आरंभ करेगी। तब उसका प्रतिनिधि परदेशों के
र उन देशों के प्रमुख व्यक्तियों की खातिर अपने जीवन को नये मार्ग
यह भी तो उचित नहीं। हम देखते आये हैं, दिन प्रतिदिन
हैं, वरसों से निःशस्त्रीकरण तथा अन्य अनेक विषयों की परिषदों के
होती हैं और बिना किसी सिद्धि के सभाएँ यूँ ही समाप्त हो जाती हैं।
कारण परिषद् में होनेवाली कृत्रिमता का वातावरण नहीं? जिस परिषद्
'डॉर्चेस्टर' या 'सेवॉय' जैसे होटल के कृत्रिम वातावरण में ही डूबे हुए
र हो भी क्या सकता है? अभी ऐसी बातों में नया रिवाज़ डालने का
गया है? कुछ भी हो, भारत के गरीब से गरीब लोगों का प्रतिनिधि
रीब से भी गरीब लोगों के बीच में रहेगा; इससे बेहतर बात और क्या
?"

कहने और व्यंग-वाक्य सुनकर मि॰ पोलक ज़रा हँसे, कहा—'आपकी
ह आने सच मानता हूँ। परन्तु यहाँ हमें व्यावहारिक बनना चाहिए।
तबीयत का भी हमें ख्याल रखना चाहिए।'

हें विश्वास दिलाते हुए कहा,—'हाँ, इसीलिए तो मैं यह बात कह रही
ा के पश्चिम भाग की हवा बासी और बहुत ही गन्दी होती है, और
का धुआँ भी बेहद भरा हुआ होता है। ऊँचे-ऊँचे मकान वायु को
ी में आने से रोक लेते हैं। वो की हवा अधिक अच्छी और स्फूर्ति-
हमारे यहाँ नदी से हवा के झोंके आते हैं। स्वास्थ्य-निष्णातों ने अनेक
न्दन की हवा जाँची है और कहा है कि पश्चिमीय लन्दन की अपेक्षा
बेहतर है। मि॰ पोलक, आपको शायद यह मालूम नहीं है क्यों?'

ीं था।' उन्होंने हँसते हुए स्वीकार किया। 'पर यह सच है। हम लोग
न (ज़मीन के अन्दर चलने वाली गाड़ी) से निकल कर वो के साफ़
स्ते पर आते हैं, तब इसका स्पष्ट आभास हो जाता है। हमारी मर्मी

छोटी-छोटी गलियों पर पेड़ लगे हुए हैं। हमारे यहाँ ऊपर खुली छत है, जहाँ गांधी जी सो सकेंगे और जितनी धूप पड़ती है, उसका सेवन भी कर सकेंगे। आप तो उनके साथ अफ्रिका में बहुत समय तक रह चुके हैं। अतः आप तो जानते ही होंगे कि घर के नौकरों और अन्य व्यवस्थाओं से उन्हें कितनी बेचैनी होती है। हम लोग यह भी तो नहीं चाहते कि सुबह जब वे उठकर अपनी प्रार्थना करें तब आस-पास के लोग घबरायें, आश्चर्य में पड़ें, या दिङ्मूढ़ होकर उन्हें देखते रहें। हमारे यहां तो गांधी जी हों, या न हों, सुबह प्रार्थना होती ही है, और वह हमेशा की तरह होती ही रहेगी। उनके आने से हमें अपना कार्यक्रम अधिक बदलना न पड़ेगा। हमारा सामान्य जीवन तो बाक़ायदा चलता ही रहेगा। उन्हें वहाँ बहुत जँच जायगा। रोज रात को घर जाते समय मोटर में ४० मिनट बैठने की जगह १० मिनट बैठने के ज़रा से लाभ के हेतु, हम अपने मन में इतनी बड़ी असंगति क्यों होने दें? गांधी जी लन्दन के अन्य किसी भाग की अपेक्षा बो मुहल्ले में अधिक आराम से रहेंगे। और उनका स्वास्थ्य भी वहाँ अच्छा रहेगा। इस विषय में इस समय मुझे पूरा पूरा विश्वास है।'

मि० पोलक,—'आपको वकालत बहुत अच्छी आती है। तो भी मिस लिस्टर, मुझे अब भी आपको स्पष्ट कहना ही होगा कि यह असंभव है।'

परन्तु मेरे मन में तो यह पूर्ण विश्वास था कि मैं जीत गई हूँ।

इसके बाद के कुछ सप्ताहों में गांधी जी के अनेक भारतीय और अंग्रेज मित्र किंग्सली हॉल मुलाकात लेने आ गये।

हम लोग हरेक से पूछते थे—'क्या गांधी जी यहाँ ठहरेंगे?'

सामान्यतः उत्तर मिलता—'मुझे आशा तो है।' परन्तु जो गांधी जी के निकट सम्पर्क में आ चुके थे वे कहते थे—'मुझे तो पूरा विश्वास है वे यहीं ठहरेंगे।'

उन दिनों तीन भिन्न-भिन्न धर्मों के साधु भी हमारे आश्रम की मुलाकात के लिए आए। वे ईसाई, बौद्ध और हिन्दू धर्म के थे। सब गेरुए वस्त्र धारण किये हुए थे। इनके बोलने का शान्त तरीका, इनकी सौम्य गौरवशाली गतिविधि और इनकी सभ्यता देखकर बो के लोगों को बहुत आनन्द हुआ। उन्हें जब भाषण देने

गया तो पहले थोड़ी देर उन्होंने मौन रखा। उस समय ऐसा मालूम
।-गणों के मन में भी ईश्वरीय-शान्ति छा गई है। ईसाई पादरी हमारे सा
। तक रहे। और उन्होंने बो के निवासियों पर अपने व्यक्तित्व का
.ला।

. दिन हेम्पस्टेड के आर्य-भवन से पंडित मालवीयजी के पुत्र सप।
हॉल के निरीक्षण के लिए आये। उन्होंने गांधीजी की सुख-सहूलियत
नक सूचनाएँ दीं। बो के लड़कों ने उनकी मोटर को घेर लिया। आज
होंने भारतीय स्त्री-पुरुषों को इतनी अधिक संख्या में देखा था। बच्चों
ानन्द हुआ। और उन्होंने हो-हल्ला मचा दिया। उनके जाने के बाद
उ कहा—'बहन जी! वे लोग बहुत ही अच्छे थे।'

ने कहा—'हाँ, पर तुम्हें यह ध्यान रखना चाहिए कि भारतीय लोग
ें आवें तो तुम्हें शोर नहीं करना चाहिए। तुम सब ने मोटर को घेर
फुटपाथ पर चढ़ गये और खिड़कियों से झाँकने लगे, इससे वे बच्चे
होंगे?'

नहीं बहन जी! वे घबराये नहीं थे, वे तो हँस रहे थे।'

ने एक बात और कही,—'जो भारतीय यहाँ आते हैं, उनका स्वागत
् उनके रीति-रिवाज जानने के लिए हम यदि लड़कों का एक स्वयं-सेवक
तो कैसा हो?'

'वह क्या?'

देखो, भारत में गांधीजी जहाँ-जहाँ जाते हैं, वहाँ लोग इकट्ठे तो होते
एक दूसरे से हाथ नहीं मिलाते।'

'सच बहन जी?'

'हाँ, उसकी जगह वे लोग ऐसा करते हैं।' मैंने हाथ जोड़कर नमस्कार
की जलवायु के कारण लोगों के हाथ गरम और चिकने हो जाते हैं,
रीका अधिक अच्छा है। लोग गांधीजी के आसपास घिरे रहते हैं,
रहते हैं। तीन सौ चार सौ आदमियों का समूह गांधी जी के दर्शन के

घण्टों तक खड़ा हुआ मैंने देखा है । परन्तु ये लोग खड़े हैं, यह तुम्हें मालूम न हो इसलिए वे बिल्कुल शान्त खडे रहते हैं ।'

'ऊँ-ऊँ-ऊँ !' एक बच्चे ने सन्देहपूर्वक कहा । परन्तु शेष सब आश्चर्य की आँखों से एकाग्र-चित्त, शान्तिपूर्वक सुनते रहे ।

'तुम्हें गांधीजी (मि० गांधी) अच्छे लगेंगे ?' मैंने कहा, 'उन्हें बच्चे बहुत प्यारे हैं ।'

'बहनजी ! उनका नाम कैसे बोला जाता है ?'

मैंने उन्हें यथा-शक्ति शुद्ध उच्चारण बताया, और मैं चली गई । मेरा बताया हुआ नाम वे लोग मन में रटते रटते बिखर गये ।

अखबार वालों के करिश्मे

(२)

लन्दन की फ्लीट स्ट्रीट में (समाचार-पत्रों के कार्यालयों की गली) गां
हुँचने पर इस तरह की बातें होने लगीं,—'मि० गांधी की अखबारी
हुत क़ीमत है, इस बारे में शायद सिर्फ सम्राट् ही उनसे अधिक हों।'
समाचार-पत्र अब यह कोशिश कर रहा था कि गांधीजी के बारे में
समाचार देकर खूब पैसे कमाये। गांधीजी के साथ-साथ अब
का नाम भी लिया जाने लगा था और उसे सहायता देने की भी अनेक
लगीं थीं। हृष्ट-पुष्ट और कद्दावर सज्जन अब मुझ से मिलने आने लगे
—'यदि आप मि० गांधी की मुलाकात-सम्बंधी सभी समाचारों के
कम्पनी को दे दें, तो उससे जो लाभ होगा उसमें से आधा हिस्सा आप
जायगा।

इस तरह के अन्य भी अनेक लोग आते और इसी तरह की बातें कहते,
क आप हमारी कम्पनी को दें।'—और मैं तो कहती हूँ कि मेरी ये
न्हें मुफ्त की भेंट ही थीं।

सेनेमा वाले, ग्रामोफोन कम्पनी वाले और फोटोग्राफरों का अखंड
मिलने आता ही रहा। मैं जहां कहीं भी होऊँ, यहां तक कि देश
से अन्दर के भाग में भी रहकर मुझ पर तारों की बौछार होने लगी,
न आने लगे और लोग मुझे खोज-खोज कर मिलने आने लगे।
ने तो कमाल ही कर दिया, वह चाहता था कि मैं उसे परिचय के
लख दूँ, जिसे वह मार्सेल्स के बन्दरगाह पर गांधीजी के उतरते ही द
लख दें। इसके बदले उसने सौ पौण्ड देने को भी कहा और बुरी
कड़ा।

मैंने पूछा—'मैं अपने अतिथि को कैसे बेच सकती हूँ ?'

लेकिन फिर भी सप्ताहों तक वह मेरे पीछे-पीछे फिरा और इस दर्मियान हम दोनों में अनेक बार बात-चीत हुई। आखिरकार उसे मेरे हठी स्वभाव का परिचय मिल गया। बिल्कुल अन्त में उसने कहा—'देखिये, मिस लिस्टर! हमारी इस व्यापारी योजना में मि० गांधी दिलचस्पी लें ऐसा कुछ आप करें तो आप वचन दें या न दें अथवा उसमें कामयाबी मिले या न मिले, हमारी कम्पनी आपके किंग्सली हाल को सौ पौण्ड तो अवश्य देगी ही।'

पर इन अनोखे वचनों में से एक भी सत्य साबित नहीं हुआ। इन मुलाकातों से पहले तो मुझे बहुत खुशी हुई। मन में ऐसे विचार आए कि इस मौके से फायदा उठाकर अंग्रेजों को गांधीजी की फिलासफी समझाई जा सकती है, भारत और गांधीजी के बारे में उनकी कल्पना-शक्ति को अधिक तीव्र किया जा सकता है और आगे के कार्य, जिसमें कि गांधीजी पर चालीस करोड़ लोगों की जवाबदारी और उनके भाग्य-निर्णय का भार है, आदि कार्यों के बारे में भी अंग्रेजों के मन को कुछ अभ्यस्त किया जा सकता है। परन्तु कुछ ही सप्ताहों बाद मैंने ये विचार छोड़ दिये।

सिनेमा के लोग जो सामान ले आए थे उसे देखकर हमारे आश्रम के लोगों का कौतूहल जाग उठा। तीन बार अलग-अलग समय में किंग्सली हाल की फिल्म ली गई। उनके इस कार्य में मदद देना आश्रम-वासियों के दिल में नई उमंग उत्पन्न करनेवाला था। इस विषय का एक किस्सा सुनिये। मैं अपने कमरे के द्वार पर खड़ी हूँ, वहाँ न तो टेलीफोन है, न लाउड-स्पीकर (ध्वनिवर्धक यंत्र) तो भी किसी की शान्त और परिचित आवाज सुनाई देती है,—'मिस लिस्टर अभी आपने जो कहा, वह बहुत ही सुन्दर और स्पष्ट सुनाई देता है, आप उसे फिर कहेंगी ; आपको ऐत-राज तो नहीं ?' यह अनुभव एक चमत्कार के समान ही तो है न !

विज्ञापन और प्रचार के लिए जैसे झगड़े हमेशा होते हैं, वैसे इस प्रसंग पर भी हुए। एक बार हमारे आश्रम के दो आदमी जमीन पर बैठे वेदी पर रखे जाने वाले पीतल के लोटे और बरतनों को मांज रहे थे, इसका चित्र उन लोगों ने लिया और उसका गलत वर्णन इस तरह किया,—'इस चित्र में मिस लिस्टर के कुछ सहायक

। के स्वागत की तैयारी कर रहे हैं।' इसे पढ़कर मेरे स्वाभिमान को
चीं; क्योंकि महीनों पहले पीतल के बरतनों को आनेवाले मेहमान के
रखना कोई अच्छी गृह-व्यवस्था नहीं कही जा सकती। इसके अलावा
तिदिन की दिनचर्या को भी अखबार वालों ने अतिथि के लिए जबरदस्त
बताया, मैंने इसका ज़ोरों से प्रतिवाद किया।

T फोटो सिनेमा के परदे पर देखना एक विचित्र-सा अनुभव था, परन्तु
. हुए शब्दों को सुनना तो उससे भी ज्यादा असाधारण था। मेरी
स तरह की होगी इसका मुझे बिल्कुल भी ख्याल न था। जब कोई
हुआ आदमी चिढ़ी हुई आवाज़ से यह कहता,—'ओ हो! अब बस
र को सुनना है' तो स्वाभाविक ही क्रोध आ जाता।

छ करने वाले कौतूहली आदमियों का तो मानो तांता ही लग गया।
बार वाला ऐसी कोशिश करता था कि उसी की तरफ मेरा ध्यान जाय,
ले की ही बात सुनूँ, सिर्फ उसके साथ ही बात करूँ और गांधीजी के
जो कुछ जानती होऊँ, वह उसे ही कहूँ। इतना होते हुए भी उन
; जो कुछ छपता था वह असंभव और अप्रासंगिक होता था। लेख
होते थे; और पत्रकारों व मेरे बीच जो बात-चीत होती थी उसे राई
नाकर छापा जाता था। इतने पर भी मेरे मान्य अतिथि के या भारत के
खी हुई बातों को पढ़ने की मेरी अभिलाषा हमेशा निष्फल ही जाती
धीजी के बारे में जो कुछ लिखा जाता था, उसका अधिक भाग बेकार ही
वह मानसिक भूख के प्रति पौष्टिक खुराक नहीं, अपितु भूसा ही
देश जनता बमुश्किल-तमाम गांधीजी के बारे में हररोज आधा कालम
ती थी और उसमें यथार्थता का तो नाम भी नहीं होता था। हमारे
; एक व्यक्ति ने इस परिस्थिति का आभास एक ही वाक्य में दिया था,—
अखबार वाले गांधीजी के बारे में कुछ-न-कुछ छापते ही हैं, पर सिवा
'धीजी कच्छ पहनते हैं और बकरी का दूध पीते हैं, उन्होंने कोई नई
ताई।'

और इन दोनों बातों को भी ऐसा विकृत रूप दिया जाता था कि लोगों के मन में इससे उल्टे ही विचार पैदा हो जाते थे। इन वर्णनों से सामान्यतः यही ख्याल होता था कि कच्छ पहनने से आदमी अर्ध-नग्न रहता है, जब कि गांधी जी को देखने वाले मनुष्य तो यही कहते थे कि इससे उनकी सभ्यता की ही झलक मिलती है। उनका कच्छ और उनकी बारीक बुनाई की काश्मिरी शाल सर्दी के सामने अच्छे से अच्छे काटे और सिले हुए कोट-पतलून के इतना ही संरक्षण दे सकती थी।

हमारे किंग्सली हॉल में बकरियों की बात तो रोज के विनोद का विषय हो गयी। 'हमने सुना कि महात्मा जी के खास उपयोग के लिए बकरियों का एक झुण्ड किंग्सली हॉल की छत पर बँधा रहेगा, क्योंकि दुही जाती हुई बकरियों को देखना गांधी जी को बहुत ही पसन्द है!' इसी तरह की मनगढ़न्त और बेवकूफी-भरी बातें अखबारों में आने लगीं। अखबार वालों का आशय ऐसी खबरें देकर गांधीजी को अहंकारी, रँगीला और अद्भुत आदमी साबित करना था। पर वास्तव में हमने तो यही देखा कि उन्हें दूध मिले या नींबू, वे हमेशा एक से ही प्रसन्न रहते हैं; और वे जहाँ जाते हैं उसी देश की चीजों का उपयोग करने की आदत बना लेते हैं। किंग्सली हॉल में भी जब उनके सामने फलों से भरी रकाबी रखी जाती तो पूछते—'इनमें कौन से फल विलायत में ही पके हैं?' और फिर बड़े ही उत्साह से उन फलों को उठाकर खाने लगते।

अखबारों ने एक और मनगढ़न्त बात हमें बताई। वह यह कि 'राजपूताना' जहाज़ में गंगा की पवित्र एक टन मिट्टी आ रही है। और वह इसलिये लाई जा रही है कि हिन्दू नेता जब तक लन्दन में रहें, तब तक आस्तिक लोगों को आश्वासन देने के लिए इस मिट्टी से मूर्तियाँ बनाई जा सकें॥

अखबारों में आनेवाली इन परियों की-सी कहानियों से यह तो स्पष्ट हो जाता है कि ब्रिटिश-पत्रकारों में कल्पना-शक्ति का अभाव नहीं है। इसकी सार्थकता के लिए यहाँ एक पैम्फलेट दिया जाता है, जो उन्होंने लन्दन के पूर्वी भाग में उस समय कसरत से बाँटे थे।

मजदूरों का कट्टर शत्रु !

ी जो एक संत और पवित्र पुरुष होने का ढोंग करता है, उसका भारत
राजे, ज़मींदार और पूंजीपति अपने प्रचंी गुमास्ते का-सा उपयोग करते
ब्रिटिश साम्राज्यवादियों से अपनी मित्रता दृढ़ करने और भारतीय-पूंजी-
लिए अधिक हक प्राप्त करने के लिए यहाँ आ रहे हैं। उनकी सारी
छल-कपट करने में ही कटी है। उन्होंने हमेशा अहिंसक होने का ढोंग
ब्रिटिश-पूंजीपतियों की तमाम हिंसा भरी लड़ाइयों में सक्रिय भाग लिया
यही गांधी, लन्दन के पूर्वी भाग में स्थित किंग्सली हॉल में मित्र और
तरह रहकर ब्रिटिश-मजदूरों की आँखों में धूल झोंकना चाह रहा है।
र मज़दूरों का मित्र होने का ढोंगकर रहा है, पर वास्तव में तो वह
दूर और किसानों का कट्टर शत्रु है।……कमीज न पहनना, शाक
ना और बकरी के दूध पर आश्रित रहना, उनकी नाटकीय कलाबाज़ी है
लबाज़ियों से यहाँ के मज़दूरों को संभलना चाहिए इन चालबाजियों
पूंजीपतियों का स्वार्थ साधना चाहते हैं।

न्स न्यूज़ पेपर' ने उन दिनों गांधीजी का उपनाम 'बचूचक' रखा था।
पढ़कर बच्चों के माँ-बापों को शायद बहुत ही सन्तोष हुआ होगा !

नामक पत्र ने अपने नाम के ठीक विपरीत गांधीजी को 'पाखंडी' की
शोभित किया था, और एक पाठक ने एक जगह की दावत में इसका
चार भी किया।

मती हूँ उन दिनों लोगों ने इन सभी अखबारों को बड़े ही ध्यान से
इसी कारण जब लोगों ने सुना कि गांधीजी लन्दन आ रहे हैं, तो उनमें
गई थी।

ाक में अब अजीब-अजीब पत्र आने लगे,—"...देश प्रेमी के नाते आप
को अपने यहाँ कैसे ठहरा सकती हैं। अगर आप ऐसा करेंगी तो यह
की बात होगी।" "…आपको देश-निकाला देना चाहिए।" "मैं यह

कल्पना नहीं कर सकता कि एक अँग्रेज़ महिला अपने यहाँ एक नग्न भारतीय को ठहराने का विचार ही कैसे कर सकती है ?" एक पत्र की शुरुआत यूं थी,— 'अफ़सोस ! ! गांधी जैसे वृद्ध असुर को आप अपने यहाँ कैसे ठहरा सकती हैं। आप एक अँग्रेज महिला होकर ऐसा विचार रखती हैं ?······काले मनुष्यों को तो अपनी स्थिति का पूरा-पूरा ख्याल होना चाहिए।"

इसमें कोई शक नहीं कि इन दिनों ऐसे पत्रों के साथ-साथ बहुत से अपरिचित लोगों के आनन्द-दायक पत्र भी हमारे पास आये थे। इनमें गांधीजी को ठहरने का निमंत्रण देने की प्रशंसा की गई थी। एक पत्र एक मशहूर अँग्रेज़ लेखक का आया था। इस पत्र के साथ गांधीजी के आतिथ्य के लिए दान-स्वरूप पचास पौण्ड का एक चैक भी नत्थी किया हुआ था, यद्यपि गांधीजी का खर्च तो इतना होने भी न पाया था।

हमें लंकाशायर की कपड़े की मिल के एक मज़दूर का पत्र बहुत अच्छा लगा। उसका मुख्य भाग यहां दे रहे हैं :—

१८—स्ट्रीट, एक्रिंगटन, लंकाशायर
१, जुलाई, १९३१

"मुझे विश्वास है कि आप मुझे इस पत्र लिखने की धृष्टता के लिए क्षमा करेंगी। आप जब इसे ध्यान से पढ़ जायेंगी तब आप समझ सकेंगी कि मैं अपने मानव-बन्धुओं की कुछ सेवा करने का सच्चा और हार्दिक प्रयत्न कर रहा हूँ। अखबारों की खबरों से मैं यह समझता हूँ कि भारतीय-जनता के प्रतिनिधि मि० गांधी संभवतः आपके यहाँ ही उतरेंगे। साथ ही साथ मैं सच्चे हृदय से आशा ही नहीं विश्वास भी करता हूँ कि मि० गांधी लंकाशायर के बड़े से बड़े स्थान ब्लेक बर्न की मुलाकात के लिए अपने कीमती वक्त में से थोड़ा न थोड़ा समय अवश्य निकालेंगे। मैं लंकाशायर के सूत के उद्योग पर आजीविका चलाने वाला एक मज़दूर हूँ। मेरे जैसे और भी अनेक मज़दूर हैं, जिनके निर्वाह का साधन एक मात्र यही है। मि० गांधी यदि लंकाशायर की मुलाकात के लिए आयेंगे तो

। खुशी होगी ; क्योंकि मैं समझता हूँ कि लंकाशायर के मज़दूरों और मज़दूरों की परस्पर लाभ की कुछ बात इस मुलाकात से अवश्य निकलेगी। के सूती कपड़े के 'आर्थिक-बहिष्कार' का लंकाशायर के मजदूर वर्ग के जीवन-स्तर' पर बहुत ही गंभीर असर हो रहा है।......मैं खुद को तीय-कांग्रेस के नेताओं की कार्यवाही के कारण बरबाद हुआ लंकाशायर मज़दूर कहूँ ?...मेरे हृदय में गांधीजी के प्रति बहुत ही प्रशंसा के भाव अन्य लंकाशायर के मज़दूर-भाई भी उनके प्रति इसी तरह के भाव रखते भारतीय मज़दूरों के आर्थिक जीवन-स्तर को ऊँचे से ऊँचा देखने के त ही आतुर हैं। मि० गांधी इस स्तुत्य प्रयत्न में शीघ्र सफल हों, . . . यथाशक्ति उन्हें मदद देने के लिए उत्सुक हैं। मैं समझता हूँ भारतीय की आर्थिक स्थिति को सुधारना और लंकाशायर के सूती कपड़े के . . . र छोड़ना मि० गांधी और उनके भारतीय साथियों के लिए साथ-सा . सकता है, क्योंकि लंकाशायर मिलों का मुल्क है, उसे खेती का . ाया जा सकता। इसलिए लंकाशायर के मज़दूर या तो सूती कपड़ा . . या वे कायम के लिये आर्थिक-दुर्दशा के शिकार हो सकते हैं।

निवेदकः

अ० ब०

नस्च :—आप इस पत्र को यदि मि० गांधी को बतायँगी तो मैं . . हूँगा क्योंकि मैं उनसे एक दिन मिलकर बात-चीत करना चाहता हूँ।

म्न उद्धरण उस समय स्व० महादेव देसाई ने भारत के एक साप्ताहिक ा था, वह यहाँ पत्रकारों के करिश्मों का अच्छा उदाहरण साबित होगाः—

जस समय मार्सेल्स के विद्यार्थियों ने गान्धीजी का स्वागत किया उस . ताना' जहाज पर गान्धीजी की मुलाकात लेने वाला 'डेली मेल' का प्रति ों मौजूद था ; पर उसने जब पत्र को तार भेजे तब गान्धीजी के उ . नबूझकर उल्टा अर्थ किया। बहुत सी बातें तो सफ़ेद झूठ ही थीं। गाड़ी में हम लोग मार्सेल्स से बुलाँ गये, उसमें गान्धीजी ने उसे

फटकारा। उसने लिखा था कि उपर्युक्त स्वागत वागी विद्यार्थियों ने किया था। पर सच बात तो यह थी कि यह केवल मार्सेल्स के विद्यार्थियों द्वारा ही आयोजित था। मार्सेल्स में दिये गये भाषण का एक वाक्य भी उद्धृत किये बिना उसने लिखा था कि गान्धीजी ने ब्रिटिश राज्य के प्रति घृणा का प्रचार किया। इसके समर्थन में जब उसे एक भी शब्द बताने की चुनौती दी गई, तब अपना व्यर्थ बचाव करते हुए वह बोला,—'आपने इस प्रसङ्ग में राजनीति का जिक्र किया, यह देखकर मुझे आस्चर्य हुआ।' गान्धीजी ने कहा,—'आपको यह अच्छी तरह समझ लेना चाहिए कि मैं अपनी अत्यन्त प्रिय वस्तु को भी राजनीति से पृथक नहीं रख सकता। और इसका एक मात्र साधारण कारण यही है कि मेरी राजनीति दूषित नहीं, वह तो अहिंसा और सत्य से ओतप्रोत है। मैंने अनेक बार कहा है कि असत्य से स्वतन्त्रता लेने की अपेक्षा भारत का पायमाल हो जाना अधिक अच्छा है।' उसके अनेक अनुचित कटाक्ष थे, जिनका वह समर्थन नहीं कर सका। उस बिचारे पर दया आती है। गान्धीजी उसे ऐसा आड़े हाथों लेंगे, यह उसे स्वप्न में भी ख्याल नहीं था। गान्धीजी ने कहा,—'मिस्टर, आप सत्य की आड़ में झूठ का पहाड़ खड़ा करते हैं।' मार्सेल्स में जब गान्धीजी को सभास्थल पर ले जाया जा रहा था तब लोगों की भीड़ देखकर हमें बहुत आस्चर्य हुआ, पर 'डेली मेल' के सम्वाददाता ने लिखा,—'अच्छा स्वागत न होने के कारण गान्धीजी निराश हो गये।' इस पर गान्धीजी ने कहा,—'आपने कैसे जाना कि मैं निराश हो गया? और उस ब्रिटिश कर्नल ने जब मुझे 'स्त्री का एक ढांचा' दिया था, तब मुझे बहुत हँसी आई; इस पर भी आपने लिखा कि मैं चिढ़ गया था?' उसके पास कुछ उत्तर ही न था, फिर भी उसने कहा,—'हँसी का मतलब चिढ़ ही तो है।' गान्धीजी ने कहा,—'सुनो। मुझ में विनोद करने और समझने की बुद्धि है, इसीलिए मैं जल्दी नाराज़ नहीं होता। यह अगर मुझ में न होता तो मैं कभी का पागल हो गया होता। मैं यह दावे से कहता हूँ कि तुमने अपने लेख में अत्यन्त झूठी बातें लिखी हैं, और इसीलिए मैं तुम्हारे साथ सम्बन्ध नहीं रखता तो!! पर मैं ऐसा नहीं करता; आप जितनी बार आयेंगे उतनी बार मैं आपसे मिलूँगा।' इस फटकार से

तो ज़रूर ; पर उसके चेहरे पर पश्चात्ताप का एक भी चिह्न नज़र

मालूम होता है इस अखबारी दुनिया में सत्य असम्भव ही होता है।
हार भी झूठी बातों को प्रकाशित न करने की अभिलाषा को लेश मात्र
करते। अतः सत्य बातों में भी वे नमक-मिर्च मिलाने से नहीं चूकते।
अमेरिकन एसोशियेटेड प्रेस के प्रतिनिधि मि० मिल्स बहुत समय से
थे, और वे यह अच्छी तरह जानते थे कि गांधीजी को क्या क्या पसन्द
उनसे गांधीजी के जहाजी-जीवन की बातों में नमक-मिर्च मिलाये बिना
। उन्होंने प्रार्थना के समय का दृश्य, चर्खे का आकर्षण और अन्य अनेक
न किया ; पर तो भी उन्हें ऐसा महसूस हुआ कि शाम को गांधीजी
इस्ता बटानेवाली बिल्ली बिना किसी जादू के नहीं आती। इसी तरह
ो यरवदा जेल की मुलाकात का सनसनीदार वर्णन लिख कर प्रसिद्ध होने
लोकंब ने भी 'इवनिंग-स्टेण्डर्ड' में गांधीजी की उदारता की बहुत ही
परन्तु किसी योग्य उदाहरण के बिना चित्र अधूरा देखकर उन्होंने
ा की मदद से यह लिख डाला कि जब सन् १९२१ में प्रिंस आफ वेल्स
थे, तब गांधीजी ने उन्हें दण्डवत किया था। इस पर गांधीजी ने कहा—
ब, आपको तो मैं औरों से अधिक विद्वान समझता था। परन्तु यह तो
ना को भी लजा देनेवाली बात है। मैं तो भारत के ग़रीब से ग़रीब
दण्डवत प्रणाम कर सकता हूँ क्योंकि सदियों से उन्हें कुचलने में भाग
प्रायश्चित्त-स्वरूप उनकी चरण-रज भी मैं अपने सिर पर चढ़ा सकता हूँ।
ोटे-से-छोटे राजा को भी प्रणाम नहीं करता, तो सम्राट् की तो बात
मेरे शरीर को भले ही हाथी कुचले तो कुचलने दूँ, पर इन उद्धत
तिनिधियों को तो मैं कभी दण्डवत नहीं करूँगा।'

गांधीजी और रेडियो

(२)

गांधी जी जिस दिन लन्दन पहुँचे उस दिन दोपहर को युस्टन रोड पर लोगों
। खासी भीड़ घण्टों से खड़ी थी। स्वागत सभा की जगह फ्रेण्ड्स हाउस को
ागों ने घेर रखा था। केनिंग हाउस में रहनेवाले मेरे भारतीय पड़ोसी डा० कतियाल
झे अपनी मोटर में यहां ले आये थे। उन्होंने यह भी कहा था कि गांधीजी
ब तक यहां रहें तबतक वे मेरी मोटर का उपयोग कर सकते हैं। सभास्थल के
वेश द्वार तक पहुँचना मुश्किल हो गया। जिन्हें प्रवेश की टिकिटें नहीं मिलीं
। उनकी उत्सुकता का तो कोई पार ही नहीं था। मकान के अन्दर के भाग
क आने-जाने के लिये छोड़ी हुई जगह में और प्रवेश-द्वार के आस-पास गांधी जी
निजी मित्रों का एक छोटा-सा समूह उनकी राह देखता हुआ खड़ा था। कुछ
ात्र जो गांधीजी को दक्षिण-अफ्रिका में मिले थे, उनके मन में इस तरह का
ंघर्ष चल रहा था—'इतने लम्बे अर्से में गांधीजी भी बदल गये होंगे और हम
ागों में भी काफी परिवर्तन हो गया होगा, ऐसी हालत में क्या हम एक दूसरे
ो पहचान सकेंगे ?'

आखिर, दरवाजे पर हलचल हुई। एक छोटा आदमी और उसके पीछे एक
ऊँचा, गौरवशील ब्राह्मण सभागृह की तीन सीढ़ियों तक चढ़ा। मि० लारेन्स
ाउसमेन गांधीजी का स्वागत करने के लिए आगे बढ़े। एक क्षण के लिए सारे
भागृह में संतोष का भाव व्याप्त हो गया। इसके बाद सभी ठहर गये। आगे जाने
 लिये कशमकश न करने की इच्छा से हम जहां थे वहीं रहे; हरेक आदमी
ूसरे को सम्मान देने लगा। गांधी जी मुस्कुराते, आनन्दातिरेक से, इस दृश्य को
ेखते शान्त खड़े रहे।

ने कहा,—'यह भी आपके एक मित्र हैं।' और इसी शब्द ने मानो भंग किया।

ो ने कहा,—'ओ-हो !!' और उनसे हाथ मिलाया।

ारों ओर से स्वागत के मधुर शब्द सुनाई देने लगे। गांधीजी को ल्ये कहा गया, पर उन्होंने इतने अधिक मानव-समुदाय को इन्तज़ार में न समझा।

ग पंक्ति में सीढ़ियाँ चढ़ कर व्यास-पीठ पर पहुँचे। जब गांधीजी अपने कों के सामने मुँह करके खड़े हुए तब सभा-गृह हर्षनाद से गूँज उठा। ारेन्स हाउसमेन ने सुन्दर और छोटे भाषण द्वारा गांधीजी का स्वागत ोंने कहा,—'हम आपका स्वागत करते हैं। जो चीज़ सामान्यतः समझ ी—उस राजनीति और धर्म का एकीकरण आपने ही किया है। हम अपने को पापी कहते हैं; परन्तु राजनीति में हम अपने सिवाय और समझते हैं—यही है हमारे दैनिक जीवन का सच्चा वर्णन। आप हमें ो शुद्धि का रास्ता और सच्चा धर्म बताने के लिए यहाँ आये हैं। आप ल्ले पुरुष हैं। जिस तरह भारत में भी आपको बहुत-से लोग नहीं जानते, रे देश के लोग भी आपको बहुत कम जानते हैं। आप इतने सत्य-निष्ठ से बहुतों को उस पर आश्चर्य-चकित होना पड़ता है। आपकी सादगी म में से बहुत-से लोग द्विविधा में पड़ जाते हैं।'

लन्दन के पूर्वी भाग की ओर चले तब मूसलाधार बारिश हो रही थी; गांधीजी का स्वागत करने के लिए किंग्सली हॉल के अन्दर और ी भीड़ जमा थी। इस भाग के मेयर (नगर-पिता), सुधराई विभाग दरी, उपदेशक और शिक्षक, डाक्टर और वकील, मज़दूर, माता, पड़ोसी ।। किंग्सली हाल के हरेक विभाग में काम करनेवाले आश्रम-वासी, ड़े हुए थे। नीचे के उपासना-मन्दिर में क्या, ऊपर के सभागृह और क्या, सभी जगह गांधीजी को प्रफुल्लित चेहरे नजर आए। ये लोग से धीरज के साथ इन्तजार कर रहे थे। इनका स्वागत पाने के बाद

गांधीजी झरोखे में खड़े हो गए और नीचे खड़ी हुई जनता को अभिवादन किया। इसके बाद कुछ देर उन्हें शान्ति से बैठने की फ़ुरसत मिली। हम लोग छत पर गये। गांधीजी तथा उनके साथियों के लिए पाँच कमरे तय किये गये थे। सामान ऊपर लाया गया, भोजन परोसा गया और सात बजे सब लोग प्रार्थना के लिए बैठ गये।

प्रार्थना के बाद लन्दन के पश्चिम भाग से आए हुए पत्रकारों और मुलाकातियों की भीड़ लग गई। इन लोगों का आना-जाना दिसम्बर तक चलता रहा।

रविवार को—गांधीजी के आने के दूसरे ही दिन—वे शाम को पौने छः बजे ही भोजन कर लें ऐसी व्यवस्था की गई थी; जिससे कि वे साढ़े छः बजे अमेरिका को सम्बोधित कर रेडियो पर भाषण दे सकें। परन्तु सारा दिन मुलाकातियों के आने-जाने में ही निकल गया और फिर भी मुलाकातियों का प्रवाह चलता ही रहा और उसका अन्त कहीं नजर ही नहीं आ रहा था। अन्त में जब उन्होंने नारंगी और अंगूर खाना शुरू किये—उन्हें इसमें काफी समय लग जाता है—तब भी उनके आस-पास मित्रों का जमघट था और वे निश्चिन्त होकर बातें कर रहे थे। छः बज कर दस मिनट होते ही मैंने गांधीजी को सूचना दी कि समय हो गया है; पर इस ख़बर का उन पर जरा भी असर नज़र नहीं आया।

रेडियो द्वारा समाचार देने से जिन लोगों का स्वार्थ पूरा होने वाला था, वे लोग खूब स्पर्धा और कशमकश कर रहे थे। सिनेमा कम्पनी वालों को उस समय अत्यन्त निराशा हुई जब गांधीजी ने फोटो उतरवाने के लिए न तो खड़ा होना मंजूर किया और न बैठना ही। ग्रामोफोन कम्पनी वाले भी कुछ कम झगड़ा नहीं कर रहे थे। इन्हीं कारणों से रेडियो पर के गांधीजी के भाषण का समय बार-बार बदलना पड़ा था; साथ-साथ भाषण के समय जिन लोगों को दीवानखाने में बैठने की इजाज़त दी गई थी उनके नामों में भी अनेक बार परिवर्तन करना पड़ा था। रेडियो पर गांधीजी का परिचय कौन कराये, इसके बारे में भी अनेक निश्चय बदल चुके थे। पहले ऐसा तय हुआ था कि रेडियो कम्पनी का ही कोई अमेरिकन परिचय दे। बाद में मुझसे कहा गया,—'आप पाँच मिनट में अमेरिकन श्रोताओं को इनका

और साथ-साथ किंग्सली-हॉल का भी कुछ वर्णन करेंगी।' परन्तु उनका निर्णय यह था कि कम्पनी का ही कोई आदमी एक-दो प्रास्ताविक शब्द कहा दे तो बहुत है।

कर बीस मिनट हो गए ; हमारा एक आश्रम-वासी गांधीजी को तैयार ए आया। किंतु वे तो अब भी मित्रों के साथ विनोद कर रहे थे, और ाहिर हो रहा था कि उन्हें अपने आसपास के वातावरण के अलावा और में जरा भी दिलचस्पी नहीं है। नीचे रेडियोवाले जल्दी मचा रहे थे। रने के पहले मैंने गांधीजी को यह बताने की कोशिश की कि वायु ा है और उनके भाषण का महत्व भी बहुत अधिक है। छः बजकर ट पर मैंने कहा,—'बापू! हवा आपकी राह न देखेगी। पर उन्हें यह के वह राह ज़रूर देखेगी। और देखे भी क्यों न ? क्योंकि शायद वही तु थी जो बापू की तरह स्वस्थता, बिना जल्दबाजी के और अपनी ारा भी डिगाये बिना, इन्तजार कर सकती है, करती है और आगे भी श्तहारबाज इसकी जितनी कीमत करते हैं, उतनी स्वयं इसे अपनी है।

ो वास्तव में शारीरिक बल का मुकाबला हो रहा था। जिन संवाद-ास अन्दर आने के पास नहीं थे, वे झूठ बोलकर हमारे दीवानखाने कोशिश कर रहे थे; पर दरवाजे पर बैठे मनुष्यों की स्थिर शान्ति ाहीं दे रही थी। मैं बेचैन हो गई, सुबह के कार्यक्रम के मुताबिक नट का भाषण रखा था; अतः मैंने उसके लिए जैसे-तैसे नोट ले लिए, र मैं दीवानखाने में दाखिल हुई।

ाने में जिन लोगों की भीड़ थी, उनके चेहरे पर मन के तरह-तर? देखकर मुझे अत्यन्त कौतूहल हुआ। जो लोग गांधीजी के अमेरिका ये जाने वाले इस भाषण से ढेरों पैसे कमाना चाहते थे, वे गम्भीर नजर आ रहे थे। अखबारों के प्रतिनिधियों के चेहरों पर सन्तोष ट दिख रहा था। रेडियो की मशीन चलनेवाले कुशल इंजीनियर

बटन, तार, गरारियाँ, बत्ती और सिग्नलों की तरफ ध्यान देने में मशगूल हो गये थे।

इन्होंने मेरे पीछे मेरे मान्य अतिथि को देखने के लिये नजरें फेंकीं—मुझसे हँसी नहीं रुकी; मैंने धीरे से कहा,—'वे तो अभी भोजन कर रहे हैं, क्योंकि रेडियो चलानेवालों को उसी क्षण बत्ती की निशानी से मालूम पड़ गया था कि अमेरिका और हमारे दीवानखाने के बीच रेडियो द्वारा सम्बन्ध स्थापित हो गया है। रेडियो के स्टूडियो में आदमी को बड़ी-से-बड़ी महत्व की बात भी भौंहें चढ़ाकर ही कहने की आदत पड़ जाती है; अतः एक दूसरे के विचार समझने में दिक्क़त नहीं होती। दीवानखाने से एक आदमी की आवाज़ एटलांटिक पार करके अमेरिका पहुँची:—

'मैं पूर्वीय लन्दन के बो मुहल्ले में स्थित किंग्सली हाल से बोल रहा हूँ। मि० गांधी कल यहाँ आ गये हैं। रेडियो (ध्वनि-प्रसारक यंत्र) के सामने मिस लिस्टर बैठी हैं, उन्हीं के यहाँ मि० गांधी उतरे हैं ; अमरिका के संयुक्त-राष्ट्र के श्रोताओं को उनका परिचय कराते मुझे बड़ी ख़ुशी हो रही है।'

यह तो मैं पहले ही कह चुकी हूँ कि मेरे नोट बहुत ही अधूरे थे और गांधीजी के भोजन खत्म करने तक मुझे कितना बोलना होगा, इसका मुझे अन्दाज़ तक न था। परन्तु ये सब विचार व्यर्थ थे। मेरा काम तो सिर्फ अमेरिकनों को अपने प्रिय आश्रम किंग्सली हाल का परिचय कराकर यह बताना था कि मि० गांधी ने अन्य जगहों की अपेक्षा इसे क्यों पसन्द किया है ? मैं ज्यों ही अपने छठे पृष्ठ की शुरुआत पर आई, त्योंही साढ़े चार मिनट बीत गये। इतने में मैंने अपने आंख के कोने से देख लिया कि दरवाजा खुला, और देखा कि नाटक के नायक स्वस्थता से प्रवेश कर रहे हैं—मानो पूर्व-रचित योजनानुसार ही ठीक समय पर आ गये हों। उनकी मुखमुद्रा पर ऐसी निर्दोषता का भाव था कि उसपर किसी भी तरह के बुरे हेतु का आरोप हो ही नहीं सकता। बोलना बन्द करते ही मैं तुरन्त कुरसी पर से उठी, और वे निश्चिन्त हो उसपर, पैर पर पैर रखकर, लम्बे भाषण की तैयारी करके बैठ गये। गांधीजी के परिचय का आखिरी शब्द बोलते ही मैंने ध्वनि-प्रसारक यंत्र उनकी तरफ मोड़ दिया था जिसे उन्होंने जरा हलके हाथ से छुआ।

ं धीमी आवाज़ से पूछा,—'मुझे इसमें बोलना है?' पर उनकी यह केलिफ़ोर्निया तक पहुँच गई। अतः सब जगह शान्ति छा गई। गांधीजी द करके सिर झुकाया। ऐसा लगा मानो वे अंतर्मुख हो रहे हों—मानो नी सारी शक्ति संगठित कर दी, जिससे कि परमात्मा उनसे काम ले ने भाषण शुरू किया :—

ऐसा निश्चित अभिप्राय है कि इस भारतीय परिषद् के परिणाम के साथ का ही नहीं, अपितु सारे संसार का संबंध है। भारत एक बहुत बड़ा। इसमें मनुष्य जाति का पाँचवाँ हिस्सा आबाद है। उसके पास संसार से-प्राचीन संस्कृति है। उसके रीति-रिवाज लगभग दस हज़ार वर्ष से हैं; और यह देखकर तो दुनिया आश्चर्य में पड़ जाती है कि उनमें ी रस्में यथापूर्व अखण्डित हैं। यह सच है कि समय के परिवर्तन ने ा पर असर डाला है। काल का ऐसा ही प्रभाव दुनिया की अन्य कितनी ों और संस्थाओं पर पड़ा है।

को अपने प्राचीन भूतकाल की कीर्त्ति के गौरव को कायम रखना ा हो सकता है, जब कि वह अपनी स्वतन्त्रता हासिल कर ले। के स्वतन्त्रता-संग्राम (१९२०-२१ का) पर सारी दुनिया का ध्यान आ है, इसका कारण सिर्फ यह नहीं कि हम अपनी स्वतंत्रता के लिए . अपितु इसका असली कारण यह है कि हमने जो साधन इस लड़ाई ए तयार किया है, वह आज तक इतिहास में किसी भी प्रजा ने स्वीकार । हमारे इस साधन में हिंसा नहीं, खून-खराबी नहीं और आज की ली जानेवाली कूटनीति भी नहीं। उसमें तो केवल शुद्ध सत्य और है। इस खून-खच्चर से रहित क्रान्ति के प्रयत्न पर यदि दुनिया का ध्यान हो तो आश्चर्य ही क्या? आधुनिक देशों की जनता पशुओं की ी आ रही है। उसने जिसे अपना 'शत्रु' माना, उससे जहर ।

. के समर्थ देशों ने अब तक जो राष्ट्र-नीति बनाये हैं, उन्हें देखने से

यही जाहिर होता है कि उनमें 'शत्रु' के प्रति अभिशापों की भरमार है। इन्हीं देशों ने शत्रु के विनाश करने की प्रतिज्ञा ली और इस कार्य में भगवान का नाम लेकर उससे मदद भी माँगी। भारत में हमने इससे ठीक विपरीत कार्य किया है। हमें ऐसा प्रतीत होता है कि मानव-निर्मित सृष्टि में जो नियम चल रहे हैं, उन्हीं नियमों का मनुष्य अनुसरण करे, यह उचित नहीं। इन नियमों का मनुष्य के गौरव के साथ कोई मेल नहीं खाता।

मैं स्वयं अपने देश को हिंसा द्वारा स्वतंत्र करने की अपेक्षा जमानों तक इन्तज़ार करना अधिक पसन्द करूँगा। करीव पचीस वर्ष के राजनीति के अनुभव से मेरे हृदय के अन्तरतम भाग में यह महसूस हो रहा है कि दुनिया इन हिंसक युद्धों से हाय-तौवा कर उठी है, और इन युद्धों से निकल भागने का रास्ता भी वह खोज रही है। और इसीलिए यहां यह कहते हुए मेरी छाती फूली नहीं समा रही है कि इस आतुर और त्रस्त दुनिया को सही राह वताने का आंनन्दोल्लास भारतवर्ष की प्राचीन भूमि को ही मिलेगा।

इसीलिए भारत की आज़ादी की लड़ाई में मुझे संसार की जातियों को आमंत्रित करते हुए ज़रा भी संकोच नहीं होता। अपने राष्ट्र के गौरव और सम्मान की रक्षा करने के हेतु भारत के करोड़ों लोगों ने प्रत्याक्रमण किये विना ही स्वयं कष्ट सहने की प्रवृत्ति अख्तियार कर ली है। यह दृश्य विचारने योग्य और हृदयंगम करने जैसा है।

मैं इस कष्ट-सहन को आत्म-शुद्धि कहता हूँ। मुझे तो पूरा विश्वास है कि मनुष्य अपनी आज़ादी अपनी कमज़ोरी से ही खोता है। मुझे अपनी कमज़ोरियों का दुःखद अनुभव है। भारत में हम संसार के सभी धर्मों के प्रतिनिधि रहते हैं। हमारे यहाँ आपस के अनेक झगड़े हैं, और हिन्दू-मुस्लिम दंगे अकसर होते रहते हैं, यह स्वीकार करते हुए मुझे अत्यन्त ग्लानि होती है। हम हिन्दू लोग अपने करोड़ों हिन्दू भाइयों को अस्पृश्य समझते हैं, यह चीज़ मुझे सवसे अधिक खटकती है। मैं यहां अछूतों की वात कर रहा हूँ।

जो प्रजा अपनी स्वतन्त्रता के लिए जद्दो-जहद कर रही हो, उसमें ये कम-

ोटी-मोटी नहीं कही जा सकती। आप देखेंगे कि इस आत्म-शुद्धि की
मने इस अस्पृश्यता-निवारण तथा भारत के भिन्न-भिन्न धर्मों, वर्गों और
कता स्थापित करने के काम को पहला स्थान दिया है।

तरह हम शराब तथा उससे होनेवाली बुराइयों को दूर करना चाहते हैं।
भाग्य से हमारे देश में शराब और अफीम जैसी नशीली चीजें लोग बहुत
ेवन करते हैं--ज्यादातर मिल-मजदूर आदि। सद्भाग्य से शराब की
ा यहाँ सबसे ज्यादा खराब भी समझा जाता है। शराब पीना या अफीम
यहाँ फैशन नहीं समझा जाता। फिर भी हमें अपने देश से इन बुराइयों
ने में अनेक मुसीबतों के पहाड़ लाँघने पड़ेंगे।

यह कहते मुझे अत्यन्त दुःख होता है कि इन नशीली चीज़ों से सरकार
ा अपनी पच्चीस करोड़ की आमदनी कर रखी है। परन्तु साथ ही, मैं
ातापूर्वक यह भी कह सकता हूँ कि भारतीय स्त्रियों ने इन बुराइयों को
का बीड़ा उठाया है। जिन लोगों को शराब का व्यसन है, उन लोगों को
के व्यापारियों को वे स्त्रियाँ अनुनय-विनय कर मनाती हैं। जिन लोगों
और अफीम की लत है, उन पर इसका बहुत असर पड़ रहा है।

उस समय बहुत ही खुशी होती, यदि कम-से-कम इस कार्य में हमें
र्मचारियों का सहयोग मिलता। यदि इस कार्य में हमें एक मात्र उनकी
ली होती तो मैं यह डंके की चोट पर कह सकता हूँ कि इन बुराइयों को
किसी कानून-कायदे के नेस्तनाबूद कर शराब और अफीम को हमेशा के
निकाल देने में समर्थ हो सकते थे।

और चीज है, जिसके लिए इस आन्दोलन के दिनों में भारतीय जनता ने
न किया है, इसका आधार भी रचनात्मक कार्यक्रम ही है। यह कार्य-
ियों की भूखी-नङ्गी जनता की सेवा करने का था, जो इस १,९००० मील
१,५०० मील चौड़े देश में जगह-जगह बिखरी हुई हैं। इन ग्रामवासियों
किसी कसूर के ही साल में छः महीने बेकार रहना पड़ता है। इसकी भी
कहानी है। अभी थोड़े ही दिन पहले ये गांव अन्न और वस्त्र जैसी

मनुष्य की आवश्यक चीज़ों के बारे में स्वाश्रयी थे। हमारे दुर्भाग्य से ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने इन ग्रामोद्योगों को नष्ट-भ्रष्ट कर दिया। इन धन्धों को नष्ट करने में उसने जिन साधनों का उपयोग किया, उनके बारे में चुप्पी साधना ही बेहतर होगा। आधुनिक यन्त्र जितना बारीक सूत आज तक नहीं कात सके हैं, उससे भी अधिक बारीक सूत कातनेवाली करोड़ों मशहूर कत्तिनों ने एक सुबह उठकर देखा कि उनका उम्दा धन्धा नष्ट हो गया है। इसी दिन से भारत में गरीबी का साम्राज्य उत्तरोत्तर बढ़ता गया।

यह निर्विवाद सत्य है कि ईस्ट इण्डिया कम्पनी की कदमपोशी के पहले ये ग्रामीण बेकार नहीं रहते थे। और आज ये ग्रामीण बेकार हैं। जिन्हें देखना हो वे भारत के ग्रामों में जाकर इसकी आजमाइश कर सकते हैं। ये ग्रामीण यदि साल में छः महीने बेकार रहें तो यह निश्चित है कि इन्हें भुखमरी का शिकार होना पड़ेगा, इसे समझने के लिए विद्वत्ता की आवश्यकता नहीं।

इसीलिए मैं इन करोड़ों भूखे भारतीयों की ओर से संसार की आत्माओं से प्रार्थना करता हूँ कि वे भारतीय जनता की मदद करें, जो अपनी स्वतन्त्रता हासिल करने के लिए जी-तोड़ मेहनत कर रही है।'

इसके बाद हमने अपने अमेरिकन दोस्तों से सुना कि इस आधे घण्टे के सारे व्याख्यान के बीच स्पष्ट और तीक्ष्ण कोलाहल—भूत-प्रेतों का-सा—सुनाई दे रहा था। खोज करने पर मालूम हुआ कि यह आवाज़ तो उन बच्चों की हर्ष-भरी किलकारियाँ थीं, जो दूरस्थ किसी क्रीडांगण में झूला झूलते हुए शोर-शराबा कर रहे थे।

भाषण खत्म होते ही तुरन्त हमारी सांध्य प्रार्थना शुरू हुई। उसमें गांधीजी ने 'प्रार्थना' पर प्रवचन किया। साढ़े आठ बजे वे मोटर में बैठकर पश्चिम-लन्दन में होने वाले एक जलसे में शामिल होने गये। वहाँ उन्हें प्रधान मन्त्री तथा संसार के अन्य अनेक बड़े-बड़े आदमियों से मिलना था।

तारों की रोशनी में

(४)

़समझता हूँ, मुझे भी अब बाहर आने-जाने के लिए मोटर का सहारा लेना
यह कहते हुए गांधीजी ने मेरी तरफ प्रश्न-सूचक भाव से देखा। ऐसा
ा कि वे यह जानना चाहते थे कि आखिर खराब-से-खराब स्थिति क्या
सका अच्छे-से-अच्छा क्या उपयोग हो सकता है। स्वागत-समारोह और
ों के एक लम्बे प्रवाह से निकलकर हम लोग अभी-अभी किंग्सली हॉल
े थे। इन मुलाकातों और स्वागत-समारोहों की शुरुआत कैंकस्टन में
शुरू हुई थी, और इस समय साढ़े छः बज रहे थे।
कहा,—"क्यों नहीं?" यह सुनते ही गांधीजी के चेहरे पर निश्चयात्मक
जगह एकदम विनोद के चिह्न नज़र आये, इसलिए मुझे भी हँसी आ गई।
ने फिर कहा,—"मुझे शंका हुई कि ऐसा करने से कहीं जनता या
साथ मेरा संघर्ष न हो जाय!"
जवाब दिया,—"बापू! लोग तो आपका परिचय पाने के लिए उत्सुक
अतः आपको जहाँ जाना होगा वहाँ आप जा सकेंगे। इसमें तो किसी
सन्देह है ही नहीं कि गुप्त-पुलिस तो आपके पीछे लगी ही रहेगी। यह
का एक खास रिवाज है। और आपके हिस्से में तो पुलिस के अच्छे-से-
धिकारी आये हैं, अतः आपको किसी तरह की दिक्कत न होगी।
ुछ दिन बाद प्रतिदिन हम लोग सुबह पाँच बजे एक घण्टा घूमने जाने
ारी चाल बहुत तेज होती थी और हम प्रतिदिन अलग-अलग रास्तों पर
यों मुहल्ले में घूमने जाने लायक बहुत कम रास्ते हैं। परन्तु सामान्यतः
रास्ता चुना था, वह हमें खूब ही जँच गया था। उस समय गांधीजी

1552

नई जगह आते ही लोगों का विशेष ध्यान रखते, और वहीं उनमें तथा सामने से आनेवालों में नमस्कार का आदान-प्रदान होता था। एक छोटे-से घर के पीछे नहर पड़ती है, उसके ऊपर के कमरे में बहुत-सी लड़कियाँ काम करती थीं, वे भी इस समय बिला नागा खिड़की के सामने एकत्र होकर गांधीजी के आते ही अपने हाथों को हिलाकर उनका स्वागत करती थीं। केम्बोल और बिशप कम्पनी के रात को काम करनेवाले लोग गांधीजी को जाते हुए देखते रहते थे। यहाँ तक कि नहर में से कीचड़ निकालनेवाले जहाज-महकमे के मजदूर भी उनका सत्कार करते थे।

तीन महीने तक हम लोग लगातार सुबह एक घण्टा घूमने जाते रहे, और इसमें जो साथ देना चाहता उसे सहर्ष आने देते थे। अतः इस समय अनेक विषयों पर चर्चा होनी आवश्यक-सी थी। घूमने आनेवाले लोग अपने अलग-अलग हेतु से आते थे। कोई कुतूहलवशात्, तो कोई अपनी योजना अथवा अपने सिद्धान्तों पर गांधीजी की राय लेने भी आते थे। कुछ लोग वर्तमान परिस्थिति के उपयोगी मामलों का ज्ञान प्राप्त करने तथा कुछ लोग गांधीजी को अमुक बातों की खबर देने के लिए भी आते थे।

एक बार हम लोग घूमने जा ही रहे थे कि मिड्‌लैण्ड के मजदूरों के एक छोटे-से समूह ने एक संदेशा भेजा। उन्होंने गांधीजी को नमस्कार कर अपने लिए उनसे सन्देश माँगा था। उसके जवाब में गांधीजी ने कहला भेजा,—"उन लोगों को कहना कि वे इस बात की पूरी-पूरी सावधानी रखें कि वे दूसरों के हाथ से अपना शोषण न होने दें।" इसी विषय में एक और प्रश्न पूछा गया, उसका उत्तर उन्होंने यूँ दिया,—ग्रेट ब्रिटेन यदि हिन्दुस्तान से हाथ धो बैठे तो उसे अपने रहन-सहन में सादगी को अपनाना होगा। ब्रिटेन के आज के रहन-सहन में अनेक कृत्रिम खर्चे हैं, क्योंकि भूतकाल में उसने पिछड़ी हुई जातियों का शोषण किया है। परन्तु यदि वह अपने रहन-सहन के आज के दरजे को कम करेगा, तो भी वह भविष्य में अपना व्यापार ससम्मान करता रहेगा। आज के किसी भी साम्राज्य की इमारत की नींव ईमानदारी पर नहीं रची गई है।"

ी ने पूछा,--"क्या आप यह बता सकेंगे कि ब्रिटेन की जनता का कौन-सा को स्वराज्य-प्राप्ति का अधिक-से-अधिक समर्थन करता है?"

देर रुककर गांधीजी ने कहा,--"यह कहना कठिन है। परन्तु तो भी ह सकता हूँ कि ईसाई-वर्ग; यद्यपि उन्हें यह नहीं मालूम कि भारत की गर्भ में क्या-क्या बातें छिपी हैं। वे लोग यह भी नहीं जानते कि आखिर मिलेगा कैसे?"

ं ने कहा,—"क्या आपकी दृष्टि में ब्रिटेन का मजदूर-वर्ग भारत ी का पूर्ण समर्थन नहीं करता?"

ा जवाब भी एक आगन्तुक ने ही दिया,—"मैं जानता हूँ कि मजदूर-वर्ग ा के शोषण का विरोध तो करता है, क्योंकि एक तरह से वे भी गुलाम ; ऐसा वे भावना-वश ही करते हैं। ज्योंही उन्हें यह महसूस होगा कि स्वतन्त्र होने से उन्हें कष्ट का सामना करना पड़ेगा, त्योंही उनकी यह गायब हो जायगी। और उनके कार्य भी अन्य लोगों की तरह ही ।

आक्षेप से मजदूरों का बचाव करने के लिए मैंने भी इस चर्चा में भाग ोर मैंने अपना यह विश्वास जाहिर किया कि मजदूर स्वभाव से ही न्याय-आत्म-त्याग के प्रेमी होते हैं।

ीं जी!" एक अंग्रेज़ निरामिषाहारी बोले--"हमारे पश्चिम के सभी ादी हैं। ये लोग भारत के लिए कुछ भी करने को तैयार नहीं।"

से से कई एक महाशय अत्यन्त उत्तेजित हो गये और वाद-विवाद शुरू ांधीजी ने उन लोगों को शान्त किया और बोले,—"तमाम धर्मों में एक समानता है। वह स्पष्ट देखी जा सकती है। भिन्न-भिन्न धर्म एक ही हाथ यों के समान हैं। कर्मकाण्ड की विधि, पोशाक, भाषा और रीति-रिवाज़ तर होता है, परन्तु इन गौण चीजों को यदि मैं जड़ से उखाड़ फेंकूँ, तो देख रहा हूँ कि मूल में तो सब धर्म एक ही हैं। और वह एक धर्म सीधा-सादा है। एक दिन ऐसा आयेगा जब हम लोग इन सभी भेद-

भावों को भूल जायँगे। या अगर वे रहेंगे, तो भी भिन्न-भिन्न रंगों की तरह वे हमारे लिए आह्लाद-दायक ही होंगे। इन रीति-रिवाजों से हमारे जीवन में जो विविधता उत्पन्न होगी, वह हम सब के लिए खुशी का सन्देश लायेगी। हम लोग एक दूसरे के धर्म और समाज के प्रति परस्पर सहिष्णुता धारण करेंगे। जो लोग धर्मान्ध होकर वेवकूफी-भरी बातें करते हैं, उनके प्रति भी हमें सहिष्णुता से ही काम लेना चाहिए। हिन्दू-मुस्लिम दंगे और ईर्ष्या-द्वेष के प्रति आप लोग बहुत-कुछ सुनते आये हैं, पर आप लोगों को यह शायद मालूम नहीं है कि ये दंगे-फसाद इरादतन शुरू किये जाते हैं। भिन्न-भिन्न सम्प्रदाय के नेताओं के लिए लोगों को एक-दूसरे के प्रति उत्तेजित करना सहल होता है; परन्तु उन लोगों को यह ज्ञात नहीं होता कि जनता में स्वयं सच्चा मेल और संगठन होता है और जब जनता को अपने तथाकथित नेताओं से अलग कर दिया जाता है, तो वह शान्ति और भ्रातृ-भाव से रहती है। हिन्दू और मुसलमान दोनों परस्पर एक-दूसरे के त्योहारों पर निमंत्रण भेजते हैं, और वे मान्य अतिथि की तरह उन त्योहारों में भाग लेते हैं। दोनों कौमों के लोग राजी-खुशी से एक दूसरे की मदद भी करते हैं। मानव-जाति के स्वभाव में कुछ एक जन्मसिद्ध गुण छुपे हुए हैं। अगर ऐसा न होता तो मानव-जाति कभी की नेस्तनाबूद हो गई होती।"

किसी ने फिर पूछा,—"गांधीजी! दुःख से यदि मनुष्य का चरित्र-गठन हो जाता हो तो, इससे क्या यह साबित नहीं होता कि राष्ट्रों को युद्ध की आवश्यकता है?"

गांधीजी,—"मैं कहता हूँ कि यह सिद्धान्त गलत है। दुःख और विपत्ति यदि स्वेच्छा से सहन किये गये हों, तो इससे चरित्र का गठन तो अवश्य होता है, पर यदि वे जबरन लादे गये हों, तो ऐसा नहीं होता। परन्तु अहिंसा का युद्ध सबके लिए एक जैसा लाभदायक है। भूतकाल के युद्धों से यह स्पष्ट निष्कर्ष निकलता है कि उनसे मूढ़ता और क्रूरता, थोड़े ही समय में, जन्म लिये बिना नहीं रहती।

किसी ने पूछा,—"क्या आपका भी यही मत है कि दूसरा महायुद्ध किसी भी प्रकार से रोके नहीं रुकेगा?"

ो ने स्मित-हास्य से और हृदय के सच्चे भाव से उत्तर दिया,--
ा हूँ, १९०६ से लेकर १९३१ तक के मेरे प्रयोगों की सफलता युद्ध को
े । आप लोग शायद यह कहेंगे कि मैं अपने कल्पना के मनोराज्य में
। इसमें कुछ गल्ती भी हो सकती है, पर मुझे तो नजर नहीं आती ।"

× × ×

इगल्जि रोड नामक एक रास्ता है। उसके किनारे पर एक बाल-मन्दिर
की एक सुबह गांधीजी ने विचार किया कि इस गली को ढूँढ़ा जाय।
हाँ भी जाते, वहाँ के लोग उन्हें आते देखकर दौड़-धूप
ा। हम इगल्जि रोड की तरफ़ मुड़े तो लोगों का जमघट हमारे
लिया। गांधीजी रास्ते के दोनों तरफ़ के घरों में जाकर देखने
घरों की स्त्रियाँ तो गर्व से फूली नहीं समाईं। उन्हें स्वप्न
ं न था कि गांधीजी उनके घरों को देखने आनेवाले हैं। उनमें से कुछ
। पर इस्तरी कर रही थीं, कुछ साफ़-सफ़ाई में लगी थीं; पर गांधीजी के
होंने अपने गृहराज्य का एक-एक कोना उन्हें जाँचने दिया, सवालों का
और उन्होंने जो प्रशंसा की उसे ध्यान से सुना भी। आस-पास के लोग
करते हैं, घर का किराया क्या है, सरकारी महकमे के लोग गटर और
सफ़ाई कैसी करते हैं, बेकारी में परिवार की गुजर की क्या व्यवस्था है,
गांधीजी को जानती थीं। उन स्त्रियों ने उन्हें अपने मकान के ऊपर की
दिखाई और अपने मकान के आगे के बाड़े में भी उन्हें घुमाया। पाले हुए
ा मुर्गियाँ उन्हें बताईं। जिसके घर में पियानो का बाजा था, वह तो गर्व
ें समा रहा था। इस जाँच से यह तो स्पष्ट हो गया कि इन गरीब घरों
ीज का सही-सही उपयोग किया गया था और सुन्दरता की सभी चीजों
ंभाल कर इकट्ठा किया गया था। गांधीजी का आज का प्रभात अन्य
ा की अपेक्षा बहुत ही आह्लाद-दायक साबित हुआ। और जिन लोगों के
ये थे, वे तो उस प्रसंग को हमेशा याद करते रहेंगे।

कुछ मशहूर मुलाक़ाती

(५)

किंग्सली हाल की उस पुस्तक में जिसमें अभ्यागत अपने अभिप्राय लिखते हैं, सन् १९३१ की पतझड़ की मौसम में सबसे ज्यादा अभिप्राय लिखे गये थे। इस सारे समय के बीच हमारे टेलीफोन की घण्टी बजती रही और सुबह का नाश्ता तो एक आम क्रिया हो गई थी। टेलीफोन कम्पनीवाले रात के एक बजे हमें न्यूयार्क के लिए सन्देशा लेने के लिए जगाते थे।

उस समय डरहाम का एक मजदूर हमारे यहाँ रहता था, उसे हमने चौकीदारी का काम सौंपा था। उसे प्रवेश-द्वार पर बैठाया गया। असंख्य मुलाक़ातियों का स्वागत करना और उन्हें नकारात्मक जवाब देने का काम उसे ही करना पड़ता। उसे अविचल चट्टान की भाँति स्थिर रहकर सवालों के जवाब देने पड़ते और अपने मिज़ाज़ को भी संभालना पड़ता था। उसे प्रायः सभी काम करने पड़ते, किंग्सली हाल का परिचय देना, हमारा साहित्य बेचना या उसे मुफ्त देना, गांधीजी के मुलाक़ातियों की व्यवस्था करना, इसके अलावा बो मुहल्ले के, किंग्सली हाल में हमेशा आनेवालों के आवागमन में किसी तरह की बाधा न पड़े, इसका भी उसे ध्यान रखना पड़ता था। काफी हद तक तो वह इन कठिन कामों को बखूबी निभा लेता, पर कभी-कभी वातावरण बहुत ही गम्भीर हो जाता।

बो मुहल्ले के लोगों को इन अभ्यागतों का स्वागत करने से प्रेरणा मिलती थी। गांधीजी के आने के एक हफ्ते के अन्दर तो हमारे मुहल्ले के लोगों का गृह-जीवन बहुत ही अस्त-व्यस्त हो गया। मुहल्ले की गली उत्तर-दक्षिण में है और ऊपर की कोठरियों की खिड़कियों की दिशा भी पूर्व-पश्चिम है। ऊपर की दीवार भी ज्यादा ऊँची नहीं है, अतः पोविस रोड पर रहनेवाले उन कोठरियों का दृश्य अच्छी तरह

े। आज भी उस दृश्य की जब वे बात करते हैं तो उनकी आँखें चमक

े कामों में मेरा जी ही नहीं लगता। मैं कभी गांधीजी की झाँकी लेने र जाती और कभी वापस अन्दर आ जाती। इसी तरह चलता रहा। ारे समय उन्हें ही देखते रहते, और उनके कमरे के बाहर आते ही रते। उन दिनों तो शायद ही किसी ने हमारी गली में रविवार का त से किया हो। 'ये रहे' की आवाज़ सुनते ही हम लोग बाहर दौड़ते। न भोजन में शाक और अन्य चीजों को बनाना भूल गई। मिसेज़ मिलर ा परोसा, पर उसमें मांस परोसना भूल ही गईं। गांधीजी कितने अच्छे कम-से-कम अखबारों में जैसा लिखा रहता है, वैसे तो नहीं हैं। वे बहुत ी और गरीबों को खूब समझनेवाले हैं। वे हमारे जैसे ही हैं।" ये हैं े जन-साधारण के उद्गारों के कुछ नमूने।

नेक बार बेकार मजदूर व कारीगर टेलीफोन का जवाब देने में मदद करते र अब तो यह काम रोमांचक और स्पर्धा-युक्त हो गया था। अब तो कभी रुडोल्फ चर्चिल गांधीजी से मुलाकात का समय निश्चित कर रहा था, ०० चार्ली चैपलिन का मित्र इन दोनों महापुरुषों की मुलाकात का प्रबंध । कभी स्काटलैण्ड यार्ड से, कभी सेन्ट जेम्स के महल से तो कभी नं०१० ीट से टेलीफोन आते रहते थे। हमारे आश्रम के एक सदस्य को अपने स पुलिस के एक अधिकारी के लिए पहियोंवाले नीचे तख्त पर बिस्तर ता था। देश के तमाम हिस्सों से तथा परदेश से भी लोग सुबह घूमने ानन्द का उपभोग करने के लिए आते थे, प्रायः उनके लिए कार्यालय में ी व्यवस्था करनी पड़ती थी। आयरिश कवि जॉर्ज रसेल (ए० ३०) के यह उम्मीद कर रहे थे कि वे ऊपर के किसी कमरे में आकर ठहरेंगे। घर की बीमारी के कारण वे नहीं आ सके। परन्तु अन्य अनेक मेहमानों से हमें काफी शिक्षा मिली और हमारे ज्ञान की वृद्धि भी अच्छी हुई। ेवा सुबह साढ़े छः बजे ही शुरू करनी पड़ती थी, यह हमारे लिए अजीब

ही समय था; परन्तु गांधीजी के साथ एक घंटे घूमकर तरो ताजा होकर ये लोग राजी-खुशी हमारे साथ चाय पीते समय आनन्द से बातचीत करते थे। इसी तरह हमें सभी प्रकार का ज्ञान मिलता; अनेक प्रवृत्तियों का रहस्य मालूम पड़ता; और इस तरह हमने जो मित्रता का सम्बन्ध कायम किया, उसकी मधुरता देर तक कायम रही।

अनेक बार इनमें से कोई-कोई मेहमान हमारे यहाँ ठहरते, वे हमारे घरेलू कामों में मदद देते, हमारी १५ मिनट की प्रार्थना में शामिल होते, और फिर हमारे साथ नाश्ता भी करते थे। उस समय लम्बी मेज़ पर नाश्ते के लिए बैठे हुए लोगों को अनेक तरह की बातें सुनने को मिलतीं। क्लेरे शेरीडेन (एक अंग्रेज़ महिला शिल्पकार) उत्तर अफ्रिका के रणद्वीप में बसनेवाले अपने परिवार और अपने जीवन की कथा कहतीं। स्वीडन से आये हुए एक पादरी ने अनेक कहानियाँ सुनाईं। उन्होंने यह भी बताया था कि उनका एक मित्र और एक युवक जर्मन नृवंश-शास्त्री बर्मिंघम के पास मन्द-बुद्धि मनुष्यों को सुधारने के उपायों के लिए परीक्षण कर रहे हैं। वेल्स के बेकारों के नेता, विश्वविद्यालयों के अध्यापक, दक्षिण अफ्रिका के टाल्सटाय फार्म के पुराने आश्रमवासी, शराबबन्दी-आन्दोलन के अग्रणी, अमरिकन, फ्रेंच और स्विस लोग हमारे आश्रम के जीवन में सरलता से ही हिल-मिल जाते थे, हमें ऐसा महसूस होता था कि आश्रम छोड़ते हुए उन्हें दुःख होता था। यह संभव हो सकता है कि यह सुखद कल्पना हमारे मन में सिर्फ भ्रममात्र हो, तो भी हमें उसी सुखद-कल्पना में विचरना बहुत भाता है।

इन मेहमानों में सर्वप्रिय मेहमान ब्रिगेडियर-जनरल क्रोम्पियर थे। वे जब आये तब मैं बाहर गई हुई थी। लेकिन जब आई तब आश्रम-वासियों ने उनकी जैसी प्रशंसा की, वैसी वे बहुत कम लोगों की करते थे। "उन्होंने तो हमारा खूब मनोरंजन किया। वे यहाँ खूब ही हिलमिल गये। हमें उनके लिए विवेक एवं शिष्टाचार का ध्यान ही नहीं रखना पड़ता था।"

पहले तीन सप्ताहों तक गांधीजी के जितने मित्र मिलने आते, वे बहुत ही दृढ़ और गम्भीर मुख-मुद्रा धारण करते; और अनेक कारण बताकर यह कहते कि गांधीजी को वो मुहल्ला छोड़कर लन्दन के किसी अच्छे सुधरे हुए भाग में चला

ए। इनमें से एक महिला ने मुझसे कहा,--"मिस लिस्टर! आप उन्हें
ी नहीं सकतीं। निस्सन्देह आप भी यह समझती हैं कि वे यहां रहें तो
पर हम लोगों को जब इनसे मिलना हो तो हर बार दो पौण्ड मोटरवाले को
ंभव हो सकता है? क्यों ठीक है न?"
हां, ना, किये बिना इतना ही कहा कि "इसका निर्णय तो गांधीजी ही
द्यपि मुझे यह अच्छी तरह मालूम था कि यह महिला यदि चाहे, तो
 स्थान पर दो-दो मोटरें मिल सकती हैं।
जी चर्खा कातते जाते थे और इस बीच उनके ठहरने के लिए अन्य
ो जगहें परिश्रमपूर्वक खोजी होती थीं, उनका विवरण भी साथ-साथ
 थे और हमेशा अनासक्ति से यही जवाब देकर संतोष करते,—"मुझे
त जाना ही पड़ा, तो मैं किसी ऐसी ही जगह रहूँगा, जहां मैं इन्हीं
नी गरीबों--के बीच रह सकूँ।"
ार्ल्स ट्रिवेल्यिन यह सुनकर कि गांधीजी को मकान की आवश्यकता है,
ड़े आये और उन्होंने अपना घर गांधीजी के रहने के लिए देने की इच्छा
 परन्तु यह सूचना भी उन्हें अव्यवहार्य प्रतीत हुई।
बाद मिस मेरी ह्यूज गांधीजी से मिलने आईं। 'टॉम ब्राउन्स स्कूल
खक ह्यूज की आप वयोवृद्ध लड़की हैं। हमने जब पहले उन्हें अपने
का निमन्त्रण दिया, तो उन्होंने कहा था,--'नहीं, मैं नहीं आऊंगी।
 पुरुष का अमूल्य समय मैं क्यों लूँ? इतने बरस से मैं उनके लिए
र्थना करती रही हूँ। फिर मुझे उनसे बातचीत करने, सुनने और उन्हें
ेखने की दरकार ही क्या?" हमें उन्हें समझाना पड़ा था,--"हमारा
ापसे मिलना चाहता है, इसलिए आपको आना ही चाहिए।" मेरी
ाज से पैंतालीस साल पहले कारखानों के मजदूरों के लिए जो लड़ाई
सके बारे में गांधीजी ने बहुत-कुछ सुना था। जो लोग मजदूरों को
सी तरह की सहूलियत नहीं देना चाहते थे, उनसे इन्होंने सहूलियतें लीं
 तभी बन्द की जब मांगें पूरी हुईं। वे अब भी उसी जगह पर रहती

थीं, जहाँ आज से पैंतालीस साल पहले थीं। एक छोटी-सी शराब की दूकान को बदल कर उसे रहने का स्थान बनाया गया था, जिसमें ये रहती थीं। अपने लिए एक बहुत ही छोटी—दस फीट लम्बी और आठ फीट चौड़ी—कोठरी रखी थी; यही उनकी रहने की जगह और यही उनका कार्यालय था। वे अपने लिए मुश्किल से एक पेनी खर्च करती थीं। मैंने उन्हें कहा,—"इस कड़कड़ाती ठण्ड में अँगीठी के बिना आपको सर्दी नहीं लगती?" तुरन्त ही अपना गरम हाथ निकालकर बोलीं—"मेरे शरीर पर हाथ रखकर तो देखो। गरीबों का दुःख देखकर मैं हमेशा क्रोध से जलती रहती हूँ, इसलिए सर्दी लगे कैसे?"

एक दिन सुबह हम इन्हें गांधीजी के कमरे में ले गये। गांधीजी उनका सत्कार करने के लिए खड़े हुए। दोनों एक-दूसरे के सामने देखते हुए हाथ मिलाकर खड़े रहे। उन दोनों की मुस्कुराहट में यह साफ़ नजर आ रहा था कि दोनों एक-दूसरे से चिर परिचित हैं। मेरी ल्यूज ने गांधीजी से कहा,—"यह आपके जाने की क्या बात चल रही है? इसमें कुछ सार नहीं है। यह जगह आप ही के लिए बनाई गई है, और आपने अपने को यहाँ तन्मय भी कर लिया है। यह तो किंग्सली हॉल है। किंग्सली लिस्टर जवान थे। उनमें जवानी का जोश था। वे मरे नहीं हैं; क्योंकि उनकी आत्मा यहीं बस रही है। आप दूसरी जगह जा ही कैसे सकते हैं?"

जिस समय वे ये वाक्य कह रही थीं, उस समय उसी कमरे के बाहर स्व० महादेव भाई और श्री देवदास गांधी इन वाक्यों को स्पष्ट रूप से सुन रहे थे और पारदर्शक खिड़की में से इन दो सम-धर्मी आत्माओं के मिलन को भी वे साश्चर्य देख रहे थे। और आनन्द के भावों के साथ-साथ उनकी मुख-मुद्रा पर एक-दूसरे के प्रति आदर का भाव भी स्पष्ट झलक रहा था।

सेन्ट जेम्स के पास मकान खोजने के लिए एक के बाद एक मुहल्ले छान डाले गये, पर गांधीजी की दिलचस्पी इस तरफ से उत्तरोत्तर कम होती गई। अन्त में उन्होंने कहा,—"जिसे जो कहना हो वह कहे, परन्तु इस पड़ोस को छोड़ना मुझे नहीं जँचता। क्योंकि यहाँ मैं इग्लैंड की आम जनता की आत्माओं की झाँकी ले रहा हूँ।"

ऐ दिन के मुलाकातियों में एक विशेष आकर्षक वयोवृद्ध पुरुष थे। उनका २० कविवर रवीन्द्रनाथ की याद दिलानेवाला था। और वे सफेद लमल का साफा बांधे हुए थे। गांधीजी ने मेरा उनसे परिचय कराते हुए ये सर प्रभाशङ्कर पट्टणी, एक देशी राज्य के दीवान हैं। उन्होंने मुझसे 'आप मुझे भी अपना मेहमान बना सकते हैं?" उनकी सम्मति में गांधीजी न्दन में ठहरकर अच्छा ही किया। वे स्वयं भी यहीं रहना चाहते थे। कर कहा,—"किंग्सली हॉल में जगह न हो, तो पास-पड़ोस में कहीं प्रबन्ध सकता?" दरअसल इन्हें ठहराना आसान था; क्योंकि उन्हें एक ही चीज़ और वह यह कि गरम पानी की व्यवस्थावाला स्नानघर। परन्तु वो ऐसे स्नानघर कहाँ थे। किंग्सली हॉल में तो इतनी भीड़ थी कि हम सियों में से दो जनों को उन दिनों आसपास की चालों में सोना पड़ता हमारे यहाँ आनेवाले एक दूसरे उत्तम मेहमान को इच्छा न होते हुए त्मक जवाब देना पड़ा। परन्तु सर पट्टणी हमसे अनेक बार मिलने आ जाते आश्रम के लोगों से प्रेम हो गया था और किंग्सली हाल के समारंभों नाओं में उनकी मुख-मुद्रा और शरीराकृति तो परिचित-सी हो गई थी।

बाद आये मोतीवाले राजा। वो मुहल्ले के लोगों के लिए यह एक ा प्रसंग था। इनकी चाल-ढाल ही नहीं, अपितु शरीर भी एक राजा जैसा रीर उनका सीधा और चाल चुस्त थी। मुख-मुद्रा उनकी बुद्धि-सूचक तथा ।-रिवाज में स्वाभाविकता, कुलीनता और गौरवशीलता थी। उनके कोट तो कहीं नजर ही नहीं आता था; क्योंकि उस पर मोती-ही-मोती जड़े उनके साथ उनके सुपुत्र और सुपुत्री भी थीं। उनकी पोशाक भी उसी ढंग न्होंने यह उचित समझा कि अपने राज्य से आये हुए महापुरुष की ऊँ। वे अपने साथ बिना बीज के सन्तरों का एक टोकरा गांधीजी को भेंट ए लाये थे। मोतीवाले राजा के आने की खबर सुनते ही गांधीजी उनका ने के लिए नीचे उतर आये थे।

हेनरी ब्रेल्सफर्ड गांधीजी से मिलने के लिए अनेक बार आते थे। उनकी

पत्नी, जो विवाह से पहले मिस क्लेरलेटन थीं, प्रसिद्ध चित्रकार हैं। उन्होंने गांधीजी का एक चित्र भी तैयार किया था।

कुमारी एवेलीन अन्डरहिल ने गांधीजी से मिलने की इच्छा जाहिर की और नम्रतापूर्वक कहा,--"यद्यपि मैं जानती हूँ कि मुझे उनका समय लेने का अधिकार नहीं, परन्तु उन्हें तो मेरा समय लेने का हक है।" गांधीजी ने इसका तुरन्त ही उत्तर दिया,—"मैंने जेल में उनकी रचनाएँ पढ़ी थीं, मुझे उनसे बहुत ही आनन्द मिला।" इस तरह यह मुलाक़ात भी हुई।

श्री कृष्णमूर्त्ति भी मिलने आये। इन्होंने गांधीजी से बहुत-सी बातें कीं। उन्हें देखने का मुझे पहला मौका मिला, इससे मुझे बहुत ही प्रसन्नता हुई। बाईस वर्ष पहले मैंने इनके विषय में सुना था। उस समय मिसेज़ बेसेंट इन्हें संसार में एक महान् पद प्राप्त करने के लिए उच्च शिक्षा दे रही थीं। कृष्णमूर्त्ति ने जो अवतार-पद स्वीकार किया था वह मैंने देखा था; उनकी पूजा के बारे में भी मैंने सुना था और उनकी सेवा के लिए जिन मनुष्यों को तैनात किया गया था, उनमें से भी कइयों से मैं मिल चुकी थी। इसके बाद एक दिन अखबारों में खबर निकली कि कृष्णमूर्त्ति ने अपने उस पद का और उससे संबंधित सभी वस्तुओं का स्वेच्छा से, परित्याग कर दिया है। यह खबर पढ़कर एकाएक मेरे मन में उनके प्रति प्रशंसा के भाव जाग्रत होने लगे।

'दि बंगाल लॅन्सर' नामक पुस्तक के लेखक मेजर यीट्स ब्राउन की मुलाक़ात भी हमें बहुत पसन्द आई। उस समय हमें बहुत दुःख हुआ, जब हमने सुना कि मशहूर दार्शनिक जार्ज बर्नार्ड शा गांधीजी से नाइट्स ब्रिज में ही मिल लिये हैं। हम लोग अनेक वर्षों से उनके दर्शन की राह देख रहे थे।

हमारे मुहल्ले के पादरी ग्रेटवेक की मुलाकात भी असाधारण थी। वे पहले से समय तय कर एक दिन सुबह सवा आठ बजे आये, और आकर पूर्वी लन्दन की डायोसीसन असोसिएशन की तरफ से निमन्त्रण दे गये। उनके जाने के बाद गांधीजी ने मुझसे कहा,—"ये तीन मिनट में आकर चले भी गये। पर इतने समय में ही उन्हें जो कहना था, कह गये। मुख्य मुद्दे की बात के सिवा

छ बोले ही नहीं। जो कुछ कहना था, वह भी कितनी सरलता, सुन्दरता त से कह गये। इनके लिए मेरे मन में प्रशंसा के भाव उत्पन्न हो न्हें में सर्वश्रेष्ठ मुलाक़ाती समझता हूँ।”

दिन शाम को ग्लोसेस्टरशायर का एक कद्दावर किसान आया। जिन का दूध गांधीजी के लिए भेजा जाता था, उनका वह मालिक था। दूध तथा दुधारू जानवरों की जो प्रदर्शनी हुई थी, उसके लिए वह । गांधीजी के पास आकर उसने कहा,—“मैं समझता हूँ, जो उम्दा का पोषण कर रहे हैं, उन्हें देखने आना आपका फ़र्ज़ है।” उसको यह त थी। इसलिए गांधीजी ने एक घंटा प्रदर्शनी में खूब ही आनन्द से ौर उनकी इस मुलाक़ात से अख़बार-नवीसों को बहुत ही सामग्री मिली।

लानेवाला लड़का, संदेशे लानेवाले लड़के और अन्य कितने ही लोग -बुकें हमारे पास गांधीजी के हस्ताक्षर के लिए छोड़ जाते। एक बार समाचार-विभाग की एक महिला ने अपने पत्र में इन बातों का उल्लेख र एक असंभव बात की माँग की। उसे गांधीजी के हस्ताक्षर लेने- एक छोटा-सा, पर सम्पूर्ण परिचय चाहिए था। उसने अपने पत्र में —“मुझे विश्वास है, आप गांधीजी से इतना काम तो करा ही सकेंगी, ने सुना है कि वे दूध भरनेवाले लड़कों तक को अपने हस्ताक्षर देते हैं।” उसे उत्तर में समझाना पड़ा,—“आपने अपने पत्र में अनुचित बात पर है। आप लिखती हैं—‘दूध लानेवाले लड़के को भी’ पर आपको ना चाहिए कि यह लड़का तो हमारे मुहल्ले के पुराने-से-पुराने कुटुम्ब वह वफ़ादार, खुश-मिज़ाज और आनन्दी जीव है। बुद्धिशाली भी है ी भी अच्छी बजाता है। वह सुन्दर भी है। हस्ताक्षर लेने की स लड़के के सिवा और किसमें है?”

दृश्य मेरी स्मृति में हूबहू वैसे-का-वैसा जमा हुआ है। गांधीजी के क तार है, वे व्याकुल-से नजर आ रहे हैं, और अपनी व्याकुलता से खुशी भी हो रही है। उनके उत्तर की प्रतीक्षा में उनका मंत्रि-मण्डल

भी सामने बैठा है। मेरे कमरे में प्रवेश करते ही मौन-भंग होता है और कुछ शब्द मेरे कानों को आकृष्ट करते हैं,--"पर ये विदूषक ही हैं न ? इससे मिलने का तो कोई अर्थ नहीं।" उसे नकारात्मक उत्तर देने के लिए गांधीजी ने वह तार एक मंत्री की तरफ बढ़ाया, मैंने तुरन्त ही तार भेजनेवाले का नाम देखा।

मैंने पूछा—"बापू ! क्या आप इन्हें नहीं जानते ?" मुझे बहुत आश्चर्य हुआ।

"नहीं" गांधीजी ने तार का कागज़ वापस लिया और जो बात मंत्री लोग बताने में असमर्थ थे, उसे जानने के हेतु मेरे सामने देखा। "चार्ली चैपलिन ! इन पर तो सारी दुनिया कुर्बान होती है। इन्हें तो आपको मिलना ही चाहिए। इनकी कला का मूल आधार मजदूर-वर्ग की जिन्दगी है। जिस तरह आप गरीबों की हालत समझते हैं, उसी तरह ये भी समझते हैं। अपने चित्रों में ये हमेशा गरीबों का सम्मान करते हैं।"

इसलिए दूसरे सप्ताह वो मुहल्ले से भी पूर्वतर दिशा में केनिंग टाउन की एक पिछली गली में डा० कतियाल के घर में इनकी मुलाक़ात की व्यवस्था की गई और उस मुहल्ले के लोगों को इन दोनों महापुरुषों को एक साथ सम्मान देने का सुवर्ण अवसर प्राप्त हुआ। हम सबने इस खबर को गुप्त रखने की प्रतिज्ञा की। तो भी न जाने यह भेद कैसे खुल गया और मुलाक़ात के समय बहुत बड़ा समूह जमा हो गया। लोग आपस में तथा पुलिसवालों से हँसी-मज़ाक कर रहे थे। मि० चैपलिन अपनी मोटर से कूदकर उतरे, लोगों को नमस्कार करने के लिए उन्होंने अपना टोप ऊपर उठाया। और अपने दोनों हाथों से नमस्कार किया। यह देखकर लोग हँस पड़े। इतने में गांधीजी भी आ गये, उन्हें देखकर भी लोग हँसे और खुश भी हुए।

घर में ये दोनों पुरुष हम लोगों से कुछ दूर एक कोच पर बैठे; और उन्होंने श्रमजीवी, अध-भूखे, यन्त्र के गुलाम बने हुए मजदूरों और जेलखानों के कैदियों के विषय में बातचीत की। बातचीत के दौरान में मि० चैपलिन ने कहा,—

संग जेल के कैदियों के साथ मैंने एक घंटे तक बात की थी, मैं . .
काम मुझे बद से बदतर करना पड़ा था। ऐसा मैं दूसरी बार न क
बात करते समय मेरे मन में यही विचार घूम रहा था कि ईश्वर
ाथ तुझ पर न होता तो तू भी इनमें ही होता।"

के बाद एक अकल्पनीय, अशिष्ट और अशोभनीय घटना घटी। घर
अगले आँगन में, सभी सूचनाओं का उल्लंघन कर, अखबारी
; बिलकुल निरंकुश मण्डली अन्दर घुस आई। इन्होंने घर के पीछे
तोड़ दी थी, और जैसे-तैसे घर में घुस आये थे। घर-मालिक के
ा करने पर भी ये लोग जरा भी नहीं खिसके और गांधीजी के सामने
इच्छा के विरुद्ध कैमरों की पंक्ति लग गई और उन्हें लाचार होकर य
सहन करना पड़ा। आखिर यह कँपकँपी पैदा करनेवाला तूफान
ा। कमरा पुनः खाली हो गया। इतने में सात बज गये। अतः
वहीं बैठकर सान्ध्य-प्रार्थना की।

कुछ अच्छे दोस्त

(६)

लन्दन में गांधीजी ने जिन सभाओं में भाषण दिया उनमें से बहुत-सी सभाओं के बारे में मुझे असन्तोष रहा। सभा की टिकटें बिक जाने पर भी लोग सप्ताहों तक टिकटों के लिए चिल्लाते रहते। लोग दूर-दूर से आते और कई व्यक्ति तो गांधीजी को देखने और उनकी सन्देश-वाणी सुनने की इच्छा से आते थे, इसलिए सभा की व्यवस्था में ऊटपटांग परिवर्तन भी किये जाते। परन्तु जब सभा की रात आती, तो यही प्रतीत होता कि वास्तविक सभाजन तो गांधीजी से मिल ही नहीं सके। संकोच, शिष्टाचार और अकल्पनीय थकावट की लहर न जाने कहाँ से आ जाती। और लोग इस हँसमुख, विनोदी और हितेच्छु पुरुष का वास्तविक परिचय कभी भी प्राप्त नहीं कर सके।

यह क्षोभ और संकोच क्यों होता था? क्या सभा के प्रबंधकों को यह भय था कि कहीं कोई भूल या अविवेक न हो जाय? या क्या गांधीजी में कोई ऐसी विचित्रता थी जिससे लोगों में बेचैनी पैदा होती? सचमुच ऐसी कोई भी बात नहीं थी! जो लोग पूर्व के रस्म-रिवाज़ों से परिचित थे, उनके लिए गांधीजी के वस्त्रों में कोई नवीनता नहीं थी। सभा के श्रोताओं में से प्रायः हरेक ने बाइबिल के अगणित पात्रों के चित्र देखे होंगे। उनके वस्त्र भी गांधीजी के जैसे ही होते हैं। श्रोता और वक्ता के बीच के इस अन्तर को दूर करने के लिए मैं अक्सर सुबह घूमते समय गांधीजी को बता देती थी कि आज सायंकाल कैसे लोगों के सामने उन्हें भाषण देना है। उनके आन्तरिक जीवन का भी मैं वर्णन करती। या उन संस्थाओं का पिछला इतिहास भी बताती जो सभाओं का आयोजन करती थीं। कभी-कभी मैं कहती,—"आज की सभा में आप जी भरकर बोल सकते हैं। आज के श्रोता आपके हर एक तरह के भाषण

और आपकी पूरी-पूरी बात समझ लेंगे। इन लोगों का दृष्टिकोण , और इनमें नम्रता भी काफ़ी है।"

को मैं यही सोचती रहती कि आज श्रोताओं और गांधीजी में अच्छा हुआ होगा। परन्तु मेरी ऐसी आशा निष्फल ही जाती। गांधीजी अपनी भा में श्रोताओं से सवाल पूछने को कहते, जिससे कि दोनों एक दूसरे के ादान-प्रदान कर सकें।

जी अपनी धीर और गंभीर वाणी से बोलना प्रारम्भ करते, तोड़-तोड़कर ते, परिस्थिति का वर्णन तटस्थता से करते और सत्य के पुजारी के समान य के बोलने में बहुत ही सावधानी रखते। उनके भाषण में न तो अना-वेश होता था और न भावों का अनुचित प्रवाह। जैसे एक वक्ता श्रोताओं प्रभाव डालने के लिए सामान्यतः छटामयी भाषा, आवाज़ का आरोह-अव-रिक हलचल और चेहरे के हाव-भाव को बदलता है, उस तरह का गांधीजी ट के व्याख्यान में कुछ भी न पाया जाता था।

खत्म होने पर गांधीजी, बिना किसी शारीरिक विशेष हलचल के कम-ब्दों को बोलकर, सभागृह से बाहर आ जाते। सभा के संयोजकों के लिए रजीब पहेली थी। परन्तु मुझे तो ऐसा महसूस होता है कि गांधीजी का त्र ही हो गया है, उनके धीमे-से-धीमे बोले हुए शब्दों को भी लोग प्रमाण-नते हैं, और उन पर अमल भी करते हैं; इसीलिए वे शब्दों के प्रयोग में नहीं रखते। वे आराम और हँसी-दिल्लगी के लिए अलग समय नहीं रखते; ए कि उन्हें न कभी तंगी महसूस होती है और न उन्हें कभी आवेश ही इनका शमन करने के लिए ही मनुष्य को खास प्रयत्नों की आवश्यकता उनकी आत्मा हमेशा अविचल रहती है। वे प्रार्थना करते हों, दिनचर्या में किसी मजदूर के छोटे-से घर के चूल्हे के सामने बैठे हों, या किसी क़ैद-दीवार के पीछे हों, उनकी आत्मा अविचल और शान्त ही रहती है। सी ने कहा था कि "भारतीय समस्या के हल में आपकी यूरोप-यात्रा की

सफलता नहीं है; अपितु श्रम, थकान और चिन्ता के भार से दबे यूरोपियनों के ज्ञान-तन्तुओं की बीमारियों को दूर करने के लिए आप जो उपाय बता रहे हैं, यही आपकी यूरोप-यात्रा की सच्ची सार्थकता है।"

मुझे हमेशा इसकी चिन्ता रहती कि मध्यम वर्ग के लोग गांधीजी को सच्चे-रूप में पहचानने लगें। मैं समझने लगी कि हम विलायती लोगों का यह स्वभाव हो गया है कि जिस मनुष्य के प्रति हमारे मन में प्रशंसा और गर्व का भाव होता है, उसके साथ हम विनोद करते हैं, हँसी-मज़ाक करते हैं और उसके साथ हर्षनाद भी करते हैं। उसके बारे में अनेक दिलचस्प बातें भी करते हैं और इस प्रकार हम अपनी सच्ची भावना के बदले उल्टा ही प्रदर्शन करते हैं। आदरणीय अतिथि के सत्कार के लिए हम लोग या तो उसे भोजन का निमंत्रण देते हैं या कम-से-कम चाय का एक प्याला तो अवश्य पिलाते हैं। पर गांधीजी तो अकेले ही बैठकर भोजन करते हैं और चाय तो क़तई नहीं पीते। ऐसी हालत में हमारे लिए और क्या रास्ता हो सकता है? भारतवासियों को यदि किसी मनुष्य के प्रति आदर और श्रद्धा व्यक्त करनी हो, तो वह उसकी चरण-रज लेते हैं। यह तरीका तो हमारे लिए उपयुक्त न होगा। और गांधीजी तो अपने भारतीय अनुयायिओं को भी चरण-रज लेने से रोकते हैं। यूरोपियनों का व्यवहार जैसा अपने देश में होता है, परदेश में उससे कहीं भिन्न होता है। इसलिए भारत में जब कभी ऐसा प्रसंग आता है, तो उस पर से भारतीय लोग ऐसा समझने लगते हैं कि हम सब यूरोपियन लोग पक्के शिष्टाचार के अनुयायी हैं और विवेक के अनुसार जो नियम होते हैं, उसके हम लोग गुलाम हैं। भारतीयों के स्वभाव में जो विवेक जन्म से भरा होता है, उसी के वशीभूत होकर वे हमारे सामाजिक समागम में होनेवाले अनेक निषेधों का उल्लंघन करते हैं, पर इससे हम लोगों को यह नहीं समझना चाहिए कि वे हम लोगों को किसी तरह की तकलीफ देने के लिए ऐसा करते हैं। इसीलिए वे लोग शान्ति, धीरज और गम्भीरता से इन्तज़ार करते रहते हैं और हम लोग जब कोई छोटा-सा रस्म-अदायगी या शिष्टाचार करते हैं, तो ये लोग उसे देखकर उसका अनुकरण करते हैं। इस सभ्यता और शिष्टाचार के मामले में हमारे रीति-रिवाज़ों

द्वारा वे लोग न तो हमें किसी तरह की द्विविधा में डालना चाहते हैं, सी तरह के संकोच में।

कार पूर्व और पश्चिम एक दूसरे के सम्मुख खड़े होकर इन्तजार करते दोनों पक्ष के मन में आतुरता और उत्सुकता होती है, पर यह वे प्रकट करते, और विधि-निर्मित अमूल्य क्षण बीतते चले जाते हैं। यही सबसे द चीज़ है। क्योंकि वो मुहल्ले के लोग गांधीजी को प्रतिदिन देखते थे गांधीजी के साथ खूब पटती भी थी ; गांधीजी उनके लिए अब पराये मार्ग में चलनेवाले आदमी भी गांधीजी के आगे निकल जाने पर, उन्हें आदर-सत्कार के वचन कहते ; और यदि गांधीजी न सुनें तो उनके ऊँचे स्वर में 'गुड-मार्निग' 'गुड-मार्निग' कहते। गांधीजी को लन्दन द्वारा किये गये विनोद हमेशा बहुत पसन्द आते थे और उनका जवाब देने चूकते नहीं थे।

रात के चौकीदार को सुबह की कड़कड़ाती सर्दी में गांधीजी से कुछ थी। दोनों एक-दूसरे के भाव ताड़ गये। और वे दोनों बातें करते । में तो अँगीठी के आस-पास छः छोटे-छोटे लाल हाथ उसे घेरकर गये। सरदी सख्त थी ; और बाल-मन्दिर के तीन बालकों ने मा को समझा-बुझाकर सुबह गांधीजी के साथ घूमने जाने के लिए इजाज़त । और वे ही अपनी सर्दी दूर कर रहे थे।

एक पड़ोसी को गठिया हो गया था। उसने अपनी स्त्री के मारफत । कहला भेजा कि "मैं चल-फिर नहीं सकता, पर आपके दर्शन की लाषा है।" दूसरे दिन हम चारों जन उसकी रसोई की अँगीठी को घेर-र एक-दूसरे के अनुभवों का आदान-प्रदान किया।

स्थानीय अस्पताल से एक अंधे ने गांधीजी को पत्र लिखा। और दूसरे न्य अतिथि के सत्कार के हेतु अस्पताल का वह वार्ड धोकर साफ-सुथरा या।

एक पड़ोसी मजदूर को एक दिन एक सभा में हमारे इस अमूल्य अतिथि

के विषय में बोलने के लिए कहा गया, उसने कहा,—"गांधीजी कुरूप, दुर्बल, पतले, और विचित्र मुँहवाले गँवार मनुष्य हैं, ऐसे समाचार अखबारों में छप चुके हैं; पर गांधीजी तो ऐसे नहीं हैं। वे जिस दिन यहाँ आये उस दिन मुझे विश्वास है कि किंग्सली हाल के आस-पास लगभग हज़ार मनुष्य उन्हें देखने के लिए एकत्र हुए थे। हमने जब उन्हें अपनी आँखों से देखा, तब मालूम हुआ कि वे तो बहुत ही अच्छे आदमी हैं, वे हँसते हैं, विनोद करते हैं और विचित्र तो नाममात्र को भी नहीं। मैं उन्हें अकसर देखता रहता हूँ, क्योंकि मैं उनके घर के सामने ही रहता हूँ। मैंने उनके सभी व्यवहार जी भरकर देखे। मैं समझता हूँ, वे ऐसे आदमी हैं, जिनके प्रति हमारे हृदय में आदर पैदा होता है। उनका मनोबल कितना ज़बर-दस्त है! सुबह पाँच बजे उठकर तो वे घूमने जाते हैं। जरा सोचकर तो देखो कि उन्हें इतना जल्दी उठने की आवश्यकता न होते हुए भी वे उठते हैं। हमें जब कभी बहुत सवेरे काम पर जाना होता है, तब अनेक बार हम लोग मन में सोचते हैं—'अहा! कितना सुहावना दिन है! हवा शुद्ध और आकाश कितना भव्य है! मैं बहुत सवेरे उठने की आदत चालू रखूँगा, भले ही आगामी सप्ताह मुझे देर से ही काम पर क्यों न जाना हो, तो भी मैं जल्द उठूँगा।' परन्तु वह दिन जब आता है, तो हम करवट बदलकर सो जाते हैं—हममें इतना मनोबल है कहाँ? परन्तु गांधीजी तो अपने सुबह उठने के नियम में एक बार भी नहीं चूके। उन्होंने जो निश्चय किया वह कभी नहीं टूटा। क्या यह कुछ कम बात है? उनकी प्रार्थना देखो। मैं स्वयं तो धार्मिक नहीं हूँ, परन्तु मैं यह कह सकता हूँ कि वे रोज़ सवेरे प्रार्थना के लिए तीन बजे उठते थे और इस बारे में उनसे ज़रा भी भूल नहीं होती, यह हम लोगों के लिए एक अलौकिक बात है। यहाँ यह भी ध्यान में रखना चाहिए कि वे अकसर रात के एक-दो बजे घर आते थे। मेरे घर के सामने ही वे रहते थे, अतः आने की आहट मैं हमेशा सुना करता था। इन बातों से उनके बारे में आपके दिल में क्या विचार उठते होंगे, यह तो मैं नहीं कह सकता। इस समय तो वे क़ैदखाने में हैं। उन्हें जो बात सत्य और उचित प्रतीत हुई, उसी के लिए वे अहिंसक संग्राम कर रहे हैं। मैं आखिर में उनके लिए इतना

कता हूँ,—'भगवान् उनका भला करे !' मुझे पूर्ण आशा है कि वे जो कुछ वह उन्हें शीघ्र ही प्राप्त होगा।"

ली हाल-परिवार में जब किसी की वर्षगांठ होती है तो अन्य सदस्य छह-ा चन्दा देते हैं। शाम के भोजन से अण्डे-मांस या फलों को निकाल । है और खरीद-फरोख्त में जो होशियार होता है, उसे पांच शिलिंग की ख्त के लिए भेजा जाता है। दिन का काम लगभग सवा दस बजे पूरा अतः हम लोग मोमबत्ती की रोशनी से सजे हुए दीवान-खाने में प्रवेश सामने सुस्वादु भोजन परोसा हुआ रहता है। इस दीवान-खाने की सजावट आधीरात तक क़ायम रहती है।

जी के जन्मोत्सव के लिए सभी ने खुशी-खुशी छह-छह पेनी का चन्दा ांधीजी से उस दिन प्रार्थना की गई थी कि वे अपने नाइट्स ब्रिज के शीघ्र आ जायँ। दरियां बिछाई गई और गांधीजी के कार्य की रूप-रेखा के रेक मनुष्य को बैठने की अलग-अलग जगह बताई गई। भोजन बिल्कुल और हम सबने एक साथ ख़ूब आनन्द किया।

ु ज्यों-ज्यों गोल-मेज परिषद् का काम बढ़ता गया, त्यों-त्यों गांधीजी का य घटता गया। गांधीजी इंग्लेण्ड, वेल्स, आयर्लैण्ड तथा और कई जगहों चाहते थे, परन्तु इनमें से एक भी देश वे न जा सके। वे जब कभी ट्स ब्रिज के कार्यालय से रात के दस बजे से पहले लौटते थे, तब अपने जाने से पहले हमारे किसी 'क्लब' में जरूर आते थे।

वार की रात को किंग्सली हाल के लोग, तीन मील दूर के शराबखानों में ते हैं। विवाहित स्त्री-पुरुष तीन-तीन पेंस का चन्दा इकट्ठा कर अपने साथ मौज-शौक करते हैं। गुरुवार को ही ये लोग अपनी शनिवार की रात म निश्चित कर लेते हैं। खेल-कूद, पुराने ढंग का नृत्य, प्रतिस्पर्धा, अनेक ातें, छोटे-छोटे नाटक और प्रहसनों का कार्यक्रम इसमें मुख्य होते हैं। की रात' हमारे आस-पास ख़ूब मशहूर है। कार्यक्रम पूरा होने के बाद गोलाकार में दीवान-खाने में इकट्ठा होते हैं, एक दूसरे के हाथ से हाथ

मिलते हैं, समूह-गान गाते हैं और एक साथ तीन-चार बार कमरे के मध्य भाग की तरफ बढ़ते हैं और उल्टे पैरों वापस लौटते हैं। इसके बाद यह मित्राचार और साहचर्य्य का भाव एकाग्र हो जाता है, और प्रार्थना का रूप धारण कर लेता है। प्रार्थना कभी-कभी मौन होती है और कभी-कभी एक साथ बोलकर। इसके आधे मिनट बाद ही लोग बिखर जाते हैं और घर का रास्ता लेते हैं।

इस समारंभ में गांधीजी यथाशक्ति हाज़िर रहते। वे जिस दिन पहले-पहल लन्दन आये थे, उस दिन शनिवार ही था। इसलिए इस समारंभ का शोर और लोगों की मित्रता की भावना बहुत ही बढ़ गई थी। उस दिन की शोभा सदा की शोभा से बहुत अधिक थी। पियानो के पीछे का दरवाजा खुला, और पांच खद्दरधारी व्यक्तियों ने इस दीवान-खाने में प्रवेश किया। सबने अपने-अपने मौज-शौक के खेल विवेक-पूर्वक जारी रखे, क्योंकि सभी लोगों को यह ज्ञात था कि गांधीजी जब तक यहाँ रहें, तब तक उन्हें आश्रम का ही एक सदस्य समझना था, उन्हें अलग समझ उनके प्रति विशेष ध्यान देकर उनके मन में संकोच के भाव नहीं पैदा होने देने चाहिए थे। गांधीजी ने सभी खेल आनन्द से देखे। यह दृश्य वास्तव में मनोमोहक था। जवान माता-पिता अपने पहले बच्चों को गोद में लेकर आये थे। इसलिए अधिक उम्र के व्यक्तियों के लड़के नाच के बीच उछल-कूद कर रहे थे। और ज़्यादा उम्र के स्त्री-पुरुष बैठे-बैठे देखते और अनन्त आनन्द का रसास्वादन कर रहे थे। खासकर इन बच्चों के दादा-दादी तो बहुत ही खुश हो रहे थे। मुझे अपने मान्य अतिथि की आँखों द्वारा यह महसूस हुआ कि यह दृश्य उनके लिए एक नये ही प्रकार का था। मुझे किंग्सली हाल का पहला उद्देश्य याद आया—'आखिर में अनजान मनुष्य दूसरे अजनबी मनुष्य को अपना भाई समझेगा और किसी अनजान आँखों में अपनी बहन की झाँकी देखेगा।'

थोड़ी देर बाद मैंने कहा,—"वहाँ एक अंधी बहन हैं, उनके साथ आप बात करें।" यह कहकर मैं गांधीजी को कमरे के पहले सिरे पर ले गई, जहाँ वह एक ही ऐसी व्यक्ति खड़ी थी जो उन्हें नहीं देख सकती थी। गांधीजी ज्योंही

चले त्योंही संगीत रुका, उछल-कूद बन्द हुई और कार्यक्रम खत्म हुआ।
को वश में न रख सके। गांधीजी को देखने की उनकी उत्कट
थी।
एक मानो बाइबिल की सुनहरी कहानी का दृश्य सामने आ गया।
स अंधी बहन से ज्योंही बात करने लगे त्योंही लोग नजदीक आ गये।
रे और शान्ति से आगे बढ़े। जवान माता-पिता गांधीजी के अधिक
गये। वे बहुत ही खुश थे। नजदीक आकर उन्होंने अपने बच्चों को
आगे किया कि गांधीजी उनके सिर पर हाथ रखें। उन्होंने सभी
आशीर्वाद दिया, और एक बच्चे को उठाया भी। उस रात उस दीवान-
भी लोगों की आंखों में आश्चर्य और मन में गहरी शान्ति तथा सम्पूर्ण
भाव फैल गये।



गांधीजी और बच्चे *

(७)

'मैंने मि० गांधी को ऊपर की छत पर देखा। उन्होंने हमें देखकर हाथ हिलाया था।' बालक जानी ने कहा और उसके साथ अनेक उत्कंठित बालकों की आवाज़ भी मिल गईः—'मैंने भी उन्हें देखा। मैंने भी उन्हें देखा।'

थोड़े ही समय में बच्चों के दो दल हो जाते हैं—जिन्होंने गांधीजी को देखा है, उनका एक दल; और जिन्होंने नहीं देखा, उनका दूसरा दल। दूसरे दल का हरेक बालक पहले दल में शामिल होने की कोशिश कर रहा था।

बालक-बालिकाएँ स्कूल से घर आते हैं, और किंग्सली हाल की छत के सामने ऊँची गरदन कर टकटकी लगाये रहते हैं। वे जानते हैं कि गांधीजी का कमरा ऊपर है। कभी-कभी गोलमेज़-परिषद् के एक-दो सदस्य गांधीजी के उस कमरे में आते हैं और बात-चीत करते-करते जब छत की बन्नी के पास आकर नीचे इकट्ठे हुए इन बच्चों की तरफ झांकते हैं, तो इन्हें अपार हर्ष होता है। परन्तु जब हमारे मान्य अतिथि इन बच्चों की ओर देखकर प्रेम से अपने हाथ हिलाते हैं तब तो सचमुच इन बच्चों की विजय होती है, और वे फूले नहीं समाते।

वह दिन चिर-स्मरणीय रहेगा, जिस दिन इन बच्चों को गांधीजी से मिलने के लिए किंग्सली हाल में बुलाया गया था। उस दिन बाह्य शिष्टाचार कुछ था ही नहीं। गांधीजी इन बच्चों के एक मित्र की तरह ही ओक के तख्ते की फर्श पर बैठे और बच्चों ने उन्हें चारों तरफ से घेर लिया। बड़ी बहनें अपने छोटे भाइयों को आगे खिसकाने लगीं और बड़े भाई अपनी छोटी बहनों को आगे सरकाने लगे। क्योंकि

---

* यह लेख मिस डोरिस लिस्टर ने, जो बो में बाल-मन्दिर चलाती हैं, और म्युरियल लिस्टर की बहन हैं, लिखा था।

ो इस रानी के बच्चे अपने छोटे भाई-बहनों का ख्याल रखने के आदी

का ध्यान तो अब उनके बीचों-बीच बैठी स्नेह-भरी आंखों वाली और
री आकृति पर एकाग्र हो गया था। गांधीजी की दलीलों को उत्कण्ठा-
ने की वे कोशिश कर रहे थे। गांधीजी कह रहे थे,—"जब कोई
मारता है, तब तुम क्या करते हो? उसके बाद क्या होता है? इससे
ा और कोई हो सकता है?"

कुछ कह रहे थे, उसमें विनोद की झलक के साथ एक तरह का आह्वान
च्चों का सिद्धान्त चपत के मुकाबले चपत और मुक्के के मुकाबले में
ने का होता है, अतः गांधीजी उनकी बारीकी से जांच कर रहे थे और
उनकी आंखें अजीब प्रतिभा से चमक रही थीं।

जी की इस एक घण्टे की खेल-कूद में जेन नाम की एक चार वर्ष की
हाज़िर थी। इस खेलकूद के अगले सप्ताह उसका पिता आया और उसने
े कहा,—"मुझे आपके साथ लड़ना है।" "क्यों लड़ना है?" गांधीजी
हुए पूछा। गांधीजी को जब यह मालूम हो जाय कि कोई उनकी
रहा है या उनसे विनोद कर रहा है, तो वे एकदम आतुर हो जाते हैं
ही खुश होते हैं। आगन्तुक भाई ने कहा,—"देखिये न, मेरी छोटी
रोज बड़े सबेरे आकर मुझे मारती और जगाती है; कहती है—"अब
इसके बदले में मारना नहीं, क्योंकि मि० गांधी ने हमें उस दिन कहा था
म्हें कोई मारे तो तुम्हें उसके बदले में मारना नहीं चाहिए।"

बच्चे बहुत खुश हुए और उन्होंने जवाब देना शुरू किया। इस बीच
की दलीलों का एक भी पहलू वे भूले नहीं। थोड़ी ही देर में छोटी-छोटी
आंखोंवाली एक छोटी-सी शान्ति-सेना तैयार हो गई और उन्होंने गांधीजी
ा्या। इन संवादों का असर बहुत समय तक रहेगा।

-छोटे बच्चे भी अपने को गांधीजी का दोस्त बताते। छोटा पीटर सिर्फ
वर्ष का है। वह रसोई-घर में चक्कर लगाते-लगाते चिल्ला रहा था,—"बुड्ढे

गांधी, बुड्ढे गांधी !" माँ ने उसे रोका—"ना पीटर। बुड्ढा गांधी नहीं कहते। मि० गांधी बहुत दयालु हैं, उन्हें मि० गांधी कहना चाहिए।"

पीटर थोड़ी देर रुका। उसके चेहरे पर असन्तोष का भाव था। "नहीं, मि० गांधी नहीं।" उसने जवाब दिया। इसके बाद एकदम उसका मुँह प्रसन्नता से चमक उठा। "गांधी काका !! माँ, मैं उन्हें गांधी काका कहूँगा।" और आखिर में उसने "गांधी काका ! गांधी काका" चिल्लाते हुए रसोई-घर गुँजा दिया।

थोड़े दिन बाद जब गांधीजी बाल-मन्दिर देखने आये, तब पीटर ही था जिसने उनका स्वागत किया। यह सुनते ही कि गांधीजी बाल-मन्दिर देखने आने-वाले हैं, बहादुर और होशियार बच्चे बाल-मन्दिर के दरवाजे पर गांधीजी का स्वागत करने के लिए पहुँच गये। उनके आते ही पीटर ने 'गांधी का……का' चिल्लाते हुए उनका स्वागत करना शुरू किया। उसके साथ दूसरे बच्चे भी शरीक हो गये।

उन्होंने सगर्व अपनी आलमारी और खिलौने दिखाये। स्नानागार दिखाया। उसमें नहाने के छोटे-छोटे टब, छोटे और नीचे लगे हुए मुँह धोने के हौज़ और छत्तीस छोटी-छोटी खूँटियां भी इन्होंने बड़े चाव से दिखाईं। हर खूँटी पर एक-एक चित्र की निशानी थी। इन्हीं चित्रों द्वारा टोनी और जिन, जिन्हें अभी तक अपना नाम पढ़ना नहीं आता था, वे जहाज़, रीछ या जंगली गुलाब, जो कुछ उनकी अपनी निशानी थी, उसे देखकर अपनी खूँटी पहचानकर अपना सामान ले लेते थे। पर गांधी काका को तो सबसे अधिक आनन्द छोटे-छोटे ३६ ब्रश देखकर ही हुआ।

ब्रायन जब अपना ब्रश और प्याला लेकर दांत साफ करने लगा तब गांधीजी बोल उठे,—"अहा ! कितना सुन्दर !"

कुछ बच्चे जब कोई अजनबी आदमी देखते हैं तो शर्मा जाते हैं, इसलिए कुछ ने पहले-पहल लाज के मारे अपना मुँह ढक लिया। परन्तु उनकी यह शर्म ज़रा-सी ही देर में गायब हो गई, और आनन्द से किलकारियाँ मारते हुए उन्होंने गांधीजी को घेर लिया।

ो जब जाने लगे तो बच्चों को दुःख हुआ। परन्तु बाहर लोगों का राह देख रहा था, फिर भी वे थोड़ी देर और वहाँ रुके और बच्चे क्रीड़ांगण दिखाने ले गये। पूर्व-निश्चित कार्य-क्रम में यह बात नहीं थी। ा किसी बालक के मन में यह विचार उठा कि उसने इसका अमल किया। ः से कार्य करनेवाले हम बड़ों में से तो किसी को इस बात का ख्याल । क्रीड़ांगण में बच्चों ने गांधीजी को अनेक खेल बताये। कुछ दिन के लिए ऊपर से सरकने का एक चिकना तख़्ता लगाया गया था। टे के क्रम से बच्चे उसकी सीढ़ी के सामने पंक्ति लगाकर खड़े रहते ऊपर जाकर वहाँ से ताज़ी और ठंडी हवा का आनन्द लेना बहुत देर त कम मिलता है। गांधीजी ने सब कुछ देखा और उन्हें इन बालक- के साथ अत्यन्त आनन्द प्राप्त किया।

× × ×

दिन गांधीजी हमारे गली के घरों को देखने आये थे, उससे अगले दिन काओं में ख़ूब ही स्पर्द्धा जम गई थी।

ी काका मेरे घर आये थे।"

जेरी के रसोई-घर में गये थे।"

हाँ, उन्होंने ब्रायन की माँ से बातचीत भी की थी, मैं अच्छी तरह ।"

ने मालूम है, उन्होंने हमारी रसोई के चूल्हे को भी देखा था।"

काका हमारे घर में क्या आ गये, उन्होंने तो सचमुच हमारे हृदय में गए अपना स्थान बना लिया है।

सप्ताह उनका जन्म-दिन था। जन्म-दिन मनाने के लिए हम लोग बाल- हमेशा मोमबत्ती जलाते हैं, और कभी-कभी केक भी मँगाते हैं। गांधी सुन्दर जलसे के आनन्द में भाग लें, इसके लिए हम लोग बहुत ही ।

के जन्म-दिन के एक दिन पहले हम लोग ऊपर की छत पर एकत्र हुए।

1352

तीन-चार वर्ष के सभी बच्चे हाज़िर थे। दो वर्ष के बच्चे अपने-अपने खिलौनों से खेल रहे थे। हमने उक्त विषय पर बात शुरू की। हम सब लोगों को बहुत-कुछ कहना था। आखिर हम लोगों ने यह निश्चय किया कि उन्हें एक पत्र लिखा जाय और साथ में उनको जन्म-दिन की भेंट भी भेजी जाय।

जोन—"क्या वे यहाँ आयेंगे ?"

डेविड—"वे हमारे साथ भोजन करने नहीं आयेंगे ?"

जोन—"मैंने उन्हें सिरील की अगली खिड़की में से देखा था।"

बरनार्ड—"वे जिराल्ड के घर गये थे।"

मॉरिस—"जब वे मेरे यहाँ आये थे, तब मैंने उन्हें अपने सभी खिलौने दिखाये थे।"

जोन—"मैं उन्हें मि० गांधी कहता हूँ।"

पीटर—"मैं उन्हें गांधी काका कहता हूँ।"

फिर हम सबने कहा,—"हम उन्हें कुछ भेजें।"

किसी ने कहा—"हम उन्हें खिलौने का कुत्ता भेजें ?"

एलिस—"सफ़ेद छोटा कुत्ता, क्यों ?"

हम सबने कहा—"हाँ, वही छोटा, सफ़ेद कुत्ता।"

फिलिस—"हम लोग उन्हें एक जोड़ा जूते क्यों न भेजें ?" (हमने उनके खुले चप्पलवाले पैर देखे थे और उन्हें सरदी लगती होगी, ऐसा हमें महसूस हुआ था।)

एलिस—"हम उन्हें गरम स्वेटर और जाँघिया क्यों न भेजें ?"

डोरीन—"मैं केक खरीदकर उन्हें भेजूँगा।"

बरनार्ड—"मैं पालने में झूलता हुआ छोटा बच्चा खरीदकर उन्हें भेजूँगा।"

हमने उन्हें यह पत्र लिखा :—

"प्रिय गांधी काका,

आपकी वर्ष-गाँठ सुख से गुजरे। हम सभी यह चाहते हैं कि आपकी वर्ष-गाँठ अच्छी गुजरे। हम आपकी वर्ष-गाँठ का गीत गानेवाले हैं। हम आपको एक भेंट भेजनेवाले हैं। आपको वर्ष-गाँठ के उपलक्ष्य में आइसक्रीमवाली केक भेजी जाय

सुन्दर हो ! आप अपनी वर्ष-गाँठ के दिन यहाँ आना। हम बेंट पर .नों के सुर बजायेंगे और मोमबत्तियाँ भी जलायेंगे।

आपके प्रिय-पात्र—मॉरिस, स्टेनली, पीटर, जोन, जिन, एलिस, जोन, र, बिली, फिलिप, डोरीन, डेविड। अन्य सभी छोटे बच्चों का और हम स्वीकार हो।"

त्र के साथ हमने एक टोकरी भी भेजी जिसमें दो सफेद ऊनी कुत्ते, वर्ष-न गुलाबी मोमबत्तियाँ, एक टीन की तश्तरी, एक भूरे रंग की पेन्सिल सी मिठाई भी रख दी थी।

.नों म्युनिसिपैलिटी के स्कूलों में दस बरस के लड़कों को गांधीजी पर .ने को कहा गया था। हमारे बाल-मन्दिर के बिली सेविल नामक एक दस ार्थी ने जो निबन्ध लिखा था, वह भारत के अनेक पत्रों में छपा था। प्रकार था :—

› गांधी भारतीय हैं। १८९० में वे लन्दन में कानून का अभ्यास करते थे। को सुखी बनाने के हेतु उन्होंने वह छोड़ दिया।

.लायत, गोलमेज़-परिषद् में भारत का व्यापार पुनः प्राप्त करने के लिए 'ब्राह्मण' 'हरिजनों' को अपने मन्दिरों में आने दें, ऐसी वे कोशिश कर हेन्दुस्तान में लगभग साठ लाख लोग ऐसे हैं, जिन्हें अच्छे भोजन की खबर गांधीजी ने अपनी सारी सम्पत्ति का त्याग कर दिया है और भारत के रीब लोगों की तरह रहते हैं। इसीलिए वे कच्छ पहनते हैं।

ी का दूध, फल और शाक उनकी मुख्य खुराक है। वे मांस-मछली नहीं ोंकि वे किसी का जीव नहीं लेना चाहते। गांधी भारतीय ईसाई हैं।

ा० गांधी स्वयं सूत कातते हैं। वे इंग्लैण्ड में भी एक घण्टा कातते हैं। ी वे लंकाशायर की सूती मिलें देखकर आये हैं।

रविवार की शाम को सात बजे से सोमवार की शाम को सात बजे तक प्रा॰ ना और इस समय उनके साथ यदि कोई बोले तो वे जवाब नहीं देते। वे .. के लिए बाहर निकले थे, तब मेरे घर आये थे। मेरी माँ कपड़ों पर ...

कर रही थीं। पर गांधीजी ने कहा,—"काम बन्द न करो, क्योंकि मुझे भी ऐसा ही करना पड़ता है।" मैंने उनके साथ हाथ मिलाया है। 'हलो' अथवा 'गुडबाई' की जगह भारतीय शब्द 'नमस्कार' है।"

गांधीजी जब लन्दन से भारत की ओर चले, तब उन्होंने अपने सामान के प्रति बहुत ही चिन्ता प्रकट की और कहा कि बच्चों द्वारा दिये गये खिलौने सुरक्षित रहने चाहिएँ। वैसे तो उन्हें इससे अनेक क़ीमती चीज़ें भेंट-स्वरूप मिली थीं, परन्तु उन्हें तो उन्होंने अपने रिवाज के मुताबिक़ उसी समय दे दी थीं। परन्तु बच्चों द्वारा दिये गये ये खिलौने तो उनकी खास सम्पत्ति मालूम होते थे; ये खिलौने किसी को नहीं दिये जा सकते। जब वे जेल में थे तब हमें यह पत्र मिला, इसे हम एक अमूल्य वस्तु समझकर हमेशा के लिए सुरक्षित रखेंगे।

"मेरे प्यारे छोटे दोस्तो,

मैं अनेक बार तुम सबको याद करता हूँ। उस दिन दोपहर को हम सब एक साथ बैठे थे। उस समय तुम लोगों ने मेरे सवालों का जवाब जिस चपलता से दिया था, वह अभी तक मुझे अच्छी तरह याद है।

मुझे तुमने जिस प्रेम से भेंट भेजी थी, उसका आभार-दर्शक पत्र मैं किंग्सली हॉल से ही लिखना चाहता था, मगर मुझे समय नहीं मिला। अब मैं यह पत्र जेल से लिख रहा हूँ।

तुम्हारी इन भेंटों को मैं अपने आश्रम के बच्चों तक पहुँचाना चाहता था, पर मैं आश्रम पहुँच ही नहीं सका।

तुम्हें मैं जेल से पत्र लिखूँ, यह तुम्हारे लिए एक विनोद की चीज़ नहीं है? मैं जेल में तो हूँ, परन्तु मैं अनुभव कर रहा हूँ कि मैं क़ैदी नहीं हूँ। मैंने कोई बुरा काम किया है, मेरा मन इसकी गवाही नहीं देता।

छोटे-बड़ों को मेरा प्यार।

तुम्हारा,

२०—१—३२] वही जिसे तुम गांधी काका कहते हो।"

हमारे भ्रमण

(८)

जी जिस दिन लन्दन आये उसके दूसरे रविवार के दिन हम लन्दन से
। वहाँ के भारी शोर-गुल और दौड़-धूप के बाद गाँवों की स्वच्छ हवा
के दृश्य हम सबको बहुत ही अच्छे लगे। हमने श्रीमती इलियट हार्व
ण स्वीकार किया था। इनका घर एपिंग के जंगलों के साथ था। हम मोटर
ा हुए। सुबह का सुहावना समय धूपवाली पगडंडियों पर घूमने में व्यतीत
हमारी मण्डली को घूमते देखकर अन्य लोग आश्चर्य-चकित हो जाते
न कद्दावर हिन्दू, चार-पाँच अंग्रेज़ स्त्री-पुरुष और इन सबके बीच
ले, पर मजबूत और फुर्तीले गांधीजी नज़र आ रहे थे। दोपहर के
बाद दो घण्टे बातचीत हुई। इस समय देश-भर के शान्ति-प्रिय नेत
।

अक्तर रविवार के दिन गांधीजी ने लन्दन से बाहर अपने भिन्न-भिन्न मित्रों
रहकर ही व्यतीत किये।

ऱ्यरी में वहाँ के डीन का आतिथ्य हमने ग्रहण किया। और यही मुला
अधिक पसन्द आई। गांधीजी को इस पुराने शहर की सुन्दरता, गिरजा
शान्ति-विनम्र प्रार्थना और यजमान के घरेलू जीवन की सादगी बहुत
गी।

के बाद शनिवार-साँझ के अपने काम को एक ओर सलन को सौंप
अपने मान्य मेहमानों के साथ चिचेस्टर के लिए रवाना हुए। हम जब प
तब अँधेरा हो गया था। पड़ाव आने का समय होते ही मोटर की अग
बैठे सार्जेन्ट एवन्स ने हमेशा की तरह गांधीजी को जगाने का इशारा किया

यह छोटा-सा शहर बहुत ही शान्त नज़र आ रहा था। परन्तु एक मोड़ के आते ही हम लोग उत्साह से भरपूर, जोर से चिल्लाते हुए एक जुलूस में घिर गये। जुलूस के आगे-आगे जोर से बाजा बज रहा था। मैंने समझा, यह भी कोई बेकारों का जुलूस होगा। परन्तु लोगों का उत्साह और शोर उत्तरोत्तर बढ़ता गया और जब मोटर धीमी पड़ी तब यह मालूम हुआ कि यह जुलूस न तो किसी सभा-समिति के लिए है और न किसी तरह के प्रचार के लिए, यह तो लोगों ने अपने-आप अपने मान्य-अतिथि के सत्कार के लिये आयोजित किया था। चिचेस्टर के बिशप और उनकी पत्नी श्रीमती बेल ने अपने मेहमानों की रुचि के अनुसार सभी व्यवस्थाएँ की थीं। यह बगीचा, वह मोड़वाली मजबूत दीवार और उस पर फैली हुई बेलों की मनोहरता हममें से कोई भी भूल नहीं सकता। हमसे पीछे आनेवाली दूसरी मोटर के यात्रियों ने तो मोटर में ही सात बजने पर प्रार्थना कर ली थी, पर जब यजमान का सत्कार खत्म हुआ और हम लोग दीवानखाने की जमीन पर प्रार्थना करने बैठे तो वे लोग भी उसमें शामिल हो गये। रात के भोजन के बाद यही दीवानखाना उस जगह के ऊँचे ओहदेवाले धर्माधिकारियों से खचाखच भर गया, और बहुत देर तक सवाल-जवाब होते रहे।

दूसरे दिन यानी रविवार को हम जिस जल-प्रवाह के किनारे-किनारे घूमने गये थे, वह बहुत धीरे-धीरे बह रहा था। हमारा वह आदर्श रविवार भी उसी धीर-गंभीर शान्ति से गुजरा। हम लोग भी सुबह के नाश्ते के बाद चारों तरफ़ दीवार से घिरे बगीचे में सूरज के प्रकाश में धीरे-धीरे घूमे। इसके बाद धीरे-धीरे हम लोग प्राचीन मीनारों पर चढ़े और आखिर में उस प्राचीन परकोटे की दीवार पर भी फिरे। दोपहर बाद गिरजाघर की प्रार्थना में शामिल हुए। इस ऐतिहासिक जगह में घूमने से हमें समृद्धि, शान्ति, बल और ज्ञान प्राप्त हुआ।

इसके बाद का रविवार गान्धीजी ने एटन और आक्सफोर्ड में गुजारा। एटन में विद्यार्थियों के प्रमुख ने गांधीजी को स्कूल के क्लब में भाषण देने को बुलाया था।

सबसे प्रथम सवाल पूछा गया,—'क्या आप हमें हिन्दुओं के पक्ष के बारे में कुछ समझा सकेंगे?'

उत्तर में गांधीजी ने कहा —'तुम लोगों का इंग्लैण्ड में
विष्य में तुम लोगों में कोई तो प्रधान-मन्त्री बनेगा और कोई
। तुम्हारे चरित्र-गठन का है, इसलिए तुम लोगों के हृदय में
म्हें जो गलत इतिहास पढ़ाया जाता है, उसकी कुछ वास्तविक
ना चाहता हूँ। मैं यहाँ के उच्च अधिकारियों में अज्ञान
। यहाँ अज्ञान का मतलब ज्ञान का अभाव नहीं, परन्तु गलत
का ज्ञान है। इसलिए मैं तुम्हारे सामने इतिहास के असली मुद्दे
योंकि मैं तुम्हें साम्राज्य-शासक नहीं मानता। अपितु, मैं तो
जा मानता हूँ जो दूसरे राष्ट्रों को लूटता नहीं, और शस्त्रबल
पने नैतिक बल पर संसार में शान्ति का रक्षक बनना चाहता है।
लोगों से कहना चाहता हूँ कि मेरी नज़रों में तो हिन्दू जैसा कोई प
क्योंकि मेरे देश की आज़ादी के बारे में तो तुम्हीं लोग मुझसे अ
लिए हुए हो।

हिन्दू-महासभा के प्रतिनिधि हिन्दू-पक्ष रखते तो अवश्य हैं और वे
करते हैं कि वे हिन्दू-मानस का प्रतिनिधित्व करते हैं, परन्तु मैं
वे सच्चे प्रतिनिधि नहीं हैं। वे इस समस्या का हल राष्ट्रीय दृष्टि-कोण
चाहें तो भी उन्हें सच्चा प्रतिनिधि नहीं कहा जा सकता, क्योंकि उसके
व्यक्तिगत दृष्टिकोण है। मेरी नजरों में यह एक विनाशक नीति है।
समझाता हूँ कि 'आप बहुमत का प्रतिनिधित्व करते हैं, इसलिए आप
अधिक नम्र होकर छोटी-छोटी क़ौमों को, जो कुछ वे माँगें, देना चाहिए। इस
श का गन्दा वातावरण जादू के चमत्कार की तरह साफ हो जायगा। न तो
ट जानते हैं कि विशाल सर्वसाधारण जनता की सम्मति क्या है और वे क्या
? परन्तु मैं अपने इतने सालों के भ्रमण के अनुभव से यह टंके की चोट
ता हूँ कि उन्हें असेम्बली की बैठकों और सरकारी ओहदों जैसी न
दिलचस्पी नहीं है। क़ौमी झगड़े
हिन्द

अन्य पाश्चात्य देशों की तलछट हैं। ये जाने-अनजाने गांव का शिकार करते हैं और इंग्लैण्ड के दलाल बनकर गांवों को लूटने में आप लोगों के हिस्सेदार बनते हैं। हिन्दुस्तान की आज़ादी के सवाल को जो अंग्रेज़ प्रधान-मन्त्री इरादतन इतना दूर रखते हैं, उस सवाल के मुक़ाबले में इन सवालों का कोई महत्त्व ही नहीं है। वे इस बात को जान-बूझकर भूल जाते हैं कि असन्तुष्ट और विद्रोही भारत को वे अधिक दिन तक गुलाम नहीं रख सकेंगे। हम मानते हैं कि हमारा विद्रोह अहिंसक है, पर उसे विद्रोह तो कहा ही जायगा।

"आज भारत की जनता को अनेक रोग क्षीण कर रहे हैं, पर इन सब रोगों का मूल कारण तो उसकी गुलामी ही है। और यदि राज्य-शासन की समस्या का सन्तोष-जनक हल हो जाय तो ये साम्प्रदायिक दंगे तुरन्त ही अदृश्य हो जायँ। जिस क्षण हमारे देश से परदेशी कूड़ा-करकट निकल जायगा, उस दिन सभी क़ौमें एक हो जायँगी। इसलिए हिन्दू-पक्ष जैसा तो कुछ है ही नहीं और अगर हो तो उसे मिटा ही देना चाहिए। अगर तुम ऐसे सवालों का अभ्यास करोगे, तो तुम्हें इसमें कुछ भी न मिलेगा। यदि तुम इन साम्प्रदायिकता की उत्तेजना-पूर्ण बातों को जानोगे, तो यही कहोगे कि ये लोग टेम्स नदी में डूब मरें तो अधिक अच्छा हो।

"जब मैं आप लोगों को यह कह रहा हूँ कि क़ौमी सवाल का झगड़ा तो है ही नहीं, और उस बारे में आप लोगों को चिन्ता की भी आवश्यकता नहीं; तब आप लोगों को यही समझना चाहिए कि मेरे वाक्य पत्थर की लकीर हैं। तो भी आप लोग इतिहास का अभ्यास करें और उसमें भी इस बात का खास तौर से अभ्यास करें कि करोड़ों लोगों ने अहिंसा स्वीकार करने का निश्चय किस तरह किया और वे उस पर किस तरह डटे रहे। मनुष्य के पशु-स्वभाव, और उनके जंगली क़ायदों का अभ्यास न करो, अपितु मनुष्य की आत्मा के अक्षुण्ण ऐश्वर्य का अभ्यास करो। साम्प्रदायिक झगड़ों में पड़े हुए लोग पागलखाने के मनुष्यों की तरह हैं। आप लोगों को तो ऐसे मनुष्यों का निरीक्षण करना चाहिए जो अपने देश की स्वतंत्रता के लिए किसी को हानि पहुँचाये बगैर अपने प्राणों की आहुति दे देते हैं। उच्च कोटि के मनुष्यों की आत्मा की आवाज और प्रेम-धर्म का अनुसरण करनेवाले

मनुष्यों का अध्ययन करो ; ऐसा करोगे तो तुम अपने भविष्य बहुत कुछ सुधार लोगे। यह कोई गर्व का विषय नहीं है कि शासन कर रहा है क्योंकि गुलामों को बांधनेवाला क्या कभी भारत और ब्रिटेन के बीच आज तो सम्बन्ध है, वह अतिशय भाविक है। इसलिए मैं अपने स्वाभाविक और जन्मसिद्ध लोगों की मदद चाहता हूँ। हमने जो कष्ट सहे हैं और तपस्या अपनी स्वतंत्रता पर दुगुना अधिकार हो जाता है। मैं चाहता लोग बड़े हों, तब अपने देश को लूटने की प्रवृत्ति से दूर करें को बढ़ावें। इस तरह आप लोग मनुष्य-जाति की प्रगति में भी

दूसरे दिन गांधीजी मोटर द्वारा आक्सफोर्ड गये। वहां हम कालेज के आचार्य और उनकी पत्नी श्रीमती लिंडसे का आतिथ्य को गांधीजी ने विश्व-विद्यालय की ठसाठस भरी हुई सभा में

एक भारतीय विद्यार्थी ने गांधीजी से पूछा,—"आपको साफ-दानत पर भरोसा है ?"

गांधीजी ने कहा,—"मुझे मनुष्य-स्वभाव की प्रामाणिकता है, उतना ही इंग्लैंड की साफ-दानत पर भी है। मेरी यह दृढ़ जाति की प्रवृत्ति अधिकतर मनुष्य-जीवन को ऊपर उठानेवाली होती कारण है कि प्रेम-धर्म का इतना अधिक गूढ़ परिणाम और असर जाति का इतनी देर कायम रहना इसी बात का सूचक है कि बिना जीवन की अवधि बड़ी है। और मैं तो सिर्फ प्रेम का ही काव्य जानता मैं अंग्रेज़ जनता पर विश्वास करता हूँ, इससे आप लोगों को आश्चर्य चाहिए। मैंने अनेक बार कटुवचन कहे हैं, और मैंने अनेक बार मन 'इस शासन का अन्त न जाने कब होगा ? ये लोग गरीबों का शोषण बन्द करेंगे ?' परन्तु उसी समय मेरे हृदय से आवाज़ आती है—' यह चोरी से

यही आशा रखनी है कि अंग्रेजों के हृदय पर प्रेम-मार्ग का असर तो होगा, लेकिन देर से।"

रविवार की सुबह हम नजदीक की बोर्स हिल पर स्थित मि० एडवर्ड टामसन के घर गये। वहाँ एक ऐसी विद्वन्-मण्डली से मिलना था, जो भारतीय-समस्या में खूब दिलचस्पी लेती थी। मुझे ऐसा महसूस हुआ कि गांधीजी ने इस सभा तथा उसी दिन दोपहर को डा० लिंडसे द्वारा आयोजित चालीस-पचास मित्रों की एक सभा में अनेक महत्वपूर्ण और नई बातें कहीं। उन्होंने भूल करने की स्वतन्त्रता माँगी और कहा,—"संक्षेप में आप यों क्यों नहीं कहते कि आप हम पर विश्वास न करें। हमें भूल करने की स्वतंत्रता दो। हम यदि आज अपना घर नहीं सँभाल सकते तो यह कौन कह सकता है कि हम कब उसके लिए समर्थ होंगे ? इसकी अवधि भी आप निश्चित करें, यह मैं नहीं चाहता। जाने-अनजाने आप लोग ईश्वर का पार्ट अदा कर रहे हैं। मैं कहता हूँ कि आप लोग इस सिंहासन से एक क्षण के लिए नीचे उतरें। हमें आप हम पर ही छोड़ दें। आज एक छोटे-से राष्ट्र के नीचे सारी दुनिया की मानव जाति को दबा हुआ होना—इससे बदतर किसी हालत की कल्पना ही नहीं हो सकती।"

किसी ने पूछा—"आप भारत को साम्राज्य से कितनी दूर रखेंगे ?"

"साम्राज्य से पूरा-पूरा दूर ; पर ब्रिटिश जनता से बिल्कुल नहीं। ब्रिटिश-साम्राज्य केवल हिन्दुस्तान के लिए ही साम्राज्य है। इस सम्राट्-पद का नाश होना चाहिए। यदि यह नष्ट हो जाय, तो मैं खुशी से ब्रिटेन के साथ बराबर का हिस्सेदार हो जाऊँ और उसकी तमाम आबादियों के सुख-दुःख में पूरा-पूरा हिस्सा बँटाऊँ। परन्तु यह हिस्सेदारी बराबरी की होनी चाहिए। मुझे तो अंग्रेज़-सरकार से सबन्ध तोड़ना है, ब्रिटिश जनता से नहीं। मैं एक अंग्रेज को भारत का प्रधान-मंत्री चुनने की कल्पना भी कर सकता हूँ। हमें आप लोगों की एक मित्र के नाते आवश्यकता है। आप लोग शिमला की ऊँची चोटी से उतर आयें तो कितना अच्छा हो !! आप लोग वहाँ पाँच हज़ार फीट ऊँचे आकाश में विराजमान हैं, जब कि भारतीय जनता इधर बेहाल हो रही है। आप लोगों को जब यह अच्छी तरह मालूम हो

जायगा कि इंग्लैण्ड ने हम पर क्या-क्या सितम ढाये और गैरइन्साफी आप लोगों को "ब्रिटेन समुद्र का राजा है" वाला गीत गाते हुए ज़रा अनुभव न होगा। अंग्रेज़ी पाठ्य-पुस्तकों में जो पाठ आज आप लोगों में कर रहे हैं, कल वे ही पाठ शर्म पैदा करेंगे। अन्य राष्ट्रों की हार व करने में आज जो आपको गर्व होता है, वह आपको छोड़ना पड़ेगा।"

कुछ और भ्रमण

(६)

गोलमेज़-परिषद् के समाप्त होते ही गांधीजी के एक अंग्रेज़ मित्र ने लायड जार्ज को पत्र लिखा था कि 'गांधीजी की आपसे मिलने की बहुत इच्छा है।' परन्तु मि० लायड जार्ज की बीमारी ने इस मुलाक़ात में बाधा डाली। इसलिए जब वे सीलोन के लिए रवाना हुए, उसके एक दिन पहले ही यह मुलाक़ात हो सकी।

उसी शनिवार की शाम को टेम्स नदी के दूसरे किनारे पर एक बड़े भारी सभा-गृह में गांधीजी रेडक्रॉस के कार्यकर्ताओं के सामने भाषण देनेवाले थे। वहाँ से उन्हें लेने के लिए मैं सर प्रभाशंकर पट्टणी की मोटर में गई। लन्दन में चर्ट तक के रास्ते के विषय में आखरी सूचनाएँ देने के लिए मि० लायड जार्ज के मन्त्री भी वहां हाजिर थे। हमारे पास सरदी के बचाव के लिए पूरे-पूरे कम्बल हैं कि नहीं, इसकी तलाश महादेव देसाई ने पहले ही कर ली थी और मीरा बहन ने गांधीजी के रात के भोजन के लिए फलों का टोकरा रख दिया।

अंगूर, खजूर, पीसे हुए बादाम आदि हम लोगों ने अपनी गोद में ही परोसे।

बापू ने कहा—'आप इसमें से थोड़ा कुछ लें।'

मैंने चाय पी ली थी और मुसाफिरी पूरी होने पर मैं भोजन करने ही वाली थी, तो भी आंखों को लुभानेवाले इन फलों को खाने का लोभ मैं संवरण नहीं कर सकी।

मैंने बापू से कहा,—"आपका भोजन बहुत ही अच्छा होता है। मुझे ऐसा महसूस हो रहा है कि मैं शीघ्र ही साध्वी हो जाऊँगी।"

बापू ने कहा,—"तुम्हें सिर्फ आहार बदलने के लिए इतनी हद तक जाने की आवश्यकता नहीं है।"

मोटर सरे परगने के रास्तों पर सरटि से चली जा रही थी। आखिरकार

चर्ट पहुँच कर मि० लायड जार्ज के मकान के सामने आकर रुकी। यह लायड जार्ज ने बरसों पहले अपने लिए बनवाया था। यह बहुत ही सुन्दर बना हुआ है। उनके घर के सामने की ज़मीन चौकोर ढालू है और दूर-दूर की टेकरियों तक फैली हुई है। घर और उसके चारों ओर के पेड़ों की जो सुगन्ध आती है, उससे इस जगह की रमणीयता बढ़ जाती है।

गांधीजी के सत्कार में सिर्फ़ मि० लायड जार्ज को ही आनन्द सो बात नहीं थी; उनके घर के सभी नौकर-चाकर इसमें शामिल खाने में चीनार की लकड़ियां अंगीठी में जल रही थी और उसमें से निकल रही थीं। चौड़ी अंगीठी की दोनों तरफ़ ये दोनों पुरुष गहरी आराम-कुर्सियों पर बैठे थे। तीन घण्टे तक इनमें बातचीत हुई। गां लायड जार्ज को रुपये-पैसे का झगड़ा, सेना का सवाल, हरिजनों का हिन्दू-मुस्लिम समस्या, शराब और अफ़ीम का सवाल ये सब एक-एक तरह समझाया। वे बोलते जाते थे और मि० लायड जार्ज बीच- के उद्गार निकालते जाते थे। ऐसा मालूम हो रहा था, मानो दो पहले ही एक-दूसरे को समझे हों और अब उन्हें एक दूसरे के ही आनन्द आ रहा हो। वेल्स की राष्ट्रीय लड़ाई और १९१७ के से जो भारतीय आन्दोलन के प्रसंग मिलते-जुलते थे, उन पर भी

परन्तु यदि हम इन दोनों आत्माओं की गहराई में देखें तो ही कोटि के हों, ऐसा मैं नहीं मानता। वे दोनों एक ही जैसे क्या उन दोनों के हृदयों में उन शब्दों का एक ही अभिप्राय क्या एक-जैसी भाषा का प्रयोग करते हैं? कष्ट-सहन की अ भारतीय ऋषि और द्रष्टा की चमचमाती अग्नि-शिखा के समान के उस पुरुष के हृदय पर जो असर किया था, वह क्षणिक है रात को गांधीजी से मुकाबला करने की अपेक्षा उनके साथ

आज़ाद हिन्दुस्तान का वह दर्शन चिरकाल तक टिकेगा ? हम लोग भले ही सन्त पुरुष हों या सामान्य पुरुष, अथवा भूतपूर्व प्रधान-मंत्री क्यों न हों, परन्तु हम लोगों में से किसमें हलके हृदय से गांधीजी का रास्ता पसन्द करने की ताक़त है। क्योंकि वे तो हम लोगों को कहते हैं,—"तृष्णा से छुटकारा पाओ, सत्ता और सुख-चैन के पीछे मत पड़ो, आपके जो असाधारण अधिकार हों उन्हें तिलांजलि दो,— दिन के प्रत्येक क्षण में ईश्वर का स्मरण करो और उसके साथ हमेशा सान्निध्य रखो। ऐसा करोगे तब ही आप लोग अकाल, कैद और हिंसा की टक्करों को झेलने की ताक़त प्राप्त कर सकोगे। इन सहन-शक्तियों का प्रयोग यदि भय और क्रोध के बगैर किया जाय तो इससे मुक्ति अवश्य ही मिलेगी।"

गांधीजी एक जल्से में लेडी एस्टर से मिले थे। इनकी यह मुलाक़ात ख़ूब जमी। दोनों ने अपनी-अपनी सन्तानों की प्रशंसा की, साथ-साथ खूब हँसे और आपस में मजाक भी की। दोनों ने यह क़ुबूल किया कि राजनीति में जो मतभेद हैं, वे दूर नहीं हो सकते और दुबारा मिलने का भी निश्चय किया। मुलाकात का समय युद्ध-विराम के दिन, यानी ११ नवम्बर को सुबह ११ बजे का रखा गया। उस दिन ११ बजे सुबह जो दो मिनट की शान्ति रखकर लोग ट्राफल्गार मैदान में जमा होते हैं, उसमें शामिल होने के लिए हम लोग नाइट्स ब्रिज से ठीक समय पर निकल पड़े। सार्जन्ट एवेन्स ने गांधीजी के लिए एक बड़ा-सा फूल ले लिया था। मैं यह ध्यान से देख रही थी कि शान्ति का गांधीजी पर क्या असर होता है और एक महाविपत्ति का स्मरण करते हुए हजारों नागरिक अपने बीच एक विद्रोही मनुष्य को देखकर क्या धारणा करते हैं और उसके साथ क्या वर्ताव करते हैं ?

मोटर धीमी हो गई। सवारियों के समुद्र में मोटर के रुकते ही लोगों ने गांधीजी को पहचान लिया। और स्मित-हास्य के साथ उन्होंने सत्कार के लिए हाथ ऊपर उठाये। इसके बाद तोप छूटी, भोंपू बजे ; और एकाएक जो नीरव शान्ति फैल गई, उसमें लोगों को तरह-तरह की भूली हुई स्मृतियाँ याद आ गईं। हृदय की गहराई में जो सुप्त व्यथाएँ छुपी हुई थीं वे उभर आईं, और दया तथा खेद की भावनाओं का प्रवाह चल पड़ा।

मैंने गांधीजी से कहा,—"यहां तो आप लोगों के एकदम बीच में थे, आपको लोगों का हृदय नजर आया होगा ? वे क्षण-भर विचार में पड़ गये। बोले, "मैं इससे पहले भारत में ऐसी शान्ति देख चुका हूं।"

मैंने कहा,—"हां, परन्तु वह शान्ति यहां जैसी नहीं होगी। अं इंग्लैण्ड छोड़कर कहीं जाते हैं तो वे थोड़े बदल-से जाते हैं। बम्बई में विराम दिन मनाया जाता है, वह उच्च अधिकारियों के दबाव से मनाया वहां इसे साम्राज्यवाद का एक कीमती साधन माना जाता है। पर यहां सच्ची भावनाओं से मनाता हुआ देख रहे हैं। और यहां के गरीब अं लोग भी इसे पालते हैं। चमकती तलवार और शानदार सैनिक ही तो प्रतिनिधि नहीं हैं।"

लार्ड एस्टर ने हमारा ठीक ग्यारह बजकर १० मिनट पर स्वागत पहले माले के दीवानखाने में ठहराया गया। वहां काफी धूप आती पौधों की शोभा भी वहां निराली थी। जो मुहल्ले में रहनेवाली मुझ तो यह सब देख बहुत ही आनन्द हुआ।

लेडी एस्टर ने अपने एक मित्र का हमसे परिचय कराया। विज्ञान पर व्याख्यान दिया करते थे। इसके बाद हम लोग जिन अ बैठे थे, वे बहुत ही आरामदेह साबित हुईं।

लेडी एस्टर ने मुझसे कहा,—"आप अपने इस महात्मा को सकती कि उनकी नीति कितनी खतरनाक है।" इसके बाद गां ज तिब होकर बोलीं,—"आप तो सिर्फ नाश ही करना जानते हैं। मैं पाखंडी हैं, आपसे पवित्र तो मिस लिस्टर हैं। हम अंग्रेज हैं होंगे और इसमें भी कोई शक नहीं कि हम लोग अनेक हत्यारा हैं। परन्तु इसके मुकाबले में हम लोग अनेक बातों का सर्जन भ ही रहते हैं।"

— में अनेक बढ़-चढ़कर आरोप

प्रहार किये। कभी-कभी तो पहले जिस दृष्टि को ध्यान में रखकर आक्षेप किये जाते थे, अब उससे ठीक विपरीत दृष्टिकोण से आक्षेप किया जाता था और बार-बार अपने उस व्याख्याता मित्र की तरफ देखकर उनकी सहमति चाहती थीं।

लेडी एस्टर ने एक लम्बा व्याख्यान दिया। उसके खत्म होते ही गांधीजी ने कहा,—"आप अभी और कुछ कहना चाहती हैं, या मैं जो कुछ कहूँगा उसे आप ध्यान से सुनेंगी?" लेडी एस्टर ने कहा,—"मैं सुनूँगी।" गांधीजी ने कहा,—"आप प्रतिज्ञा करें कि बीच में आप दखल न देंगी। मेरे बचाव-पक्ष की बातें जब तक पूरी न हों तब तक आप अपनी टीकाओं को बन्द रखें। उसके बाद आप जो कुछ कहना चाहें, कह सकती हैं।"

लेडी एस्टर ने वचन तो दिया, पर अनेक बार भूल गईं। गांधीजी जब बोल रहे थे उस समय वे अनेक बार जोर से हँसीं और फिर माफी माँगी।

गांधीजी ने कहा,—"मैं चाहता हूँ कि आप वास्तविकताओं को पहचानें। तभी आप अपना निर्णय कर सकती हैं। आज आप सही बात से बहुत दूर हैं। आपका कहना है कि हम लोग तो सिर्फ नाश करते हैं, सृजन का तो कहना ही क्या है। परन्तु इन गत चौदह वर्षों में हमने हिन्दुस्तान में जो कुछ किया है, वह मैं आपको बताऊँ?"

इतना कहकर उन्होंने वही बात कही जो उन्हें बहुत ही प्रिय लगती है; ग्राम-सेवा और ग्रामोद्धार का काम, किसानों के उद्योगों का पुनरुद्धार, वर्ष में खेती के महीनों के अलावा जो समय किसानों का बचता है, उसमें छोटे-छोटे गृह-उद्योगों का संचालन करना, गांव की स्वच्छता के सामुदायिक कार्य के लिए ग्रामवासियों की पंचायत का संगठन, शराब-बन्दी का प्रचार, और स्त्रियों की उस जागृति का वर्णन जिसमें उन्होंने बहादुरी से सेवाकार्य और परदे का परित्याग करना भी शामिल था, किया। यह सुनकर लेडी एस्टर नाराज हुए बिना न रह सकीं। १९३० में गांधीजी के जेल में जाने के बाद औरतों को किस तरह अपना कार्य चालू रखना चाहिए, इस विषय में गांधीजी ने जो औरतों को व्याख्यान दिया था, उसे सुनकर किसका दिल न दहल जाता?

× × ×

मिस मेरी केम्पबेल एक अंग्रेज महिला हैं, इन्होंने जीवन-भर
को सेवा की है, और इसी सेवा से खुश होकर राजा ने उन्हें 'कैसरे-हिं
तगमा भी दिया है। दिल्ली में स्वयं उन्होंने दर्शकों को आश्चर्य में
अनेक दृश्य देखे थे। परदे में रहनेवाली स्त्रियों ने ही, जो बचपन से
में नहीं निकली थीं, अफीम और शराब की दूकानों पर धरना देने का
और बिना हिचकिचाहट के, स्वीकार किया था। इससे लोगों के आश्
न रहा और उन्हें देखने के लिए एक खासा मानव-समुदाय जमा हो
उन्होंने सहर्ष स्वीकार कर लिया। इन भोली स्त्रियों ने इससे पहले
पति, भाई और पिता के सिवा और किसी को नहीं दिखाया था। अब
पर्दा नारियाँ ग्राहकों के सामने आतीं, उनसे बातें करतीं और उन्हें
के लिए अनुनय-विनय करती थीं। और उनके इस कहने का लोगों
अच्छा पड़ता था। इनकी हिम्मत देखकर पुरुष भी शर्मा जाते थे।
को उन्हें सच्ची राह बताने के लिए धन्यवाद भी देते थे और आगे।
एक-दो दिन में दूकानें उजाड़ हो गईं और उन्हें बन्द कर दिया।
बाद दूकान के मालिकों ने सरकार के पास एक अर्ज़ी भेजी—"
आगामी पूरे साल के लिए पूरे-पूरे रोकड़ा पैसे नहीं भर दिये हैं?
की रोज की आमदनी में बाधा क्यों डाली जाती है? पुलिस के
हमारी सम्पत्ति की रक्षा करे और स्त्रियों को हटावे।" सरकार ने
मन्ज़ूर किया; इससे सरकारी कर-आय में भी बहुत नुकसान होता
देनेवाली स्त्रियों को दूकानों के सामने से हटाने के लिए दूकान
जबरदस्त पहरा बैठाया गया। सरकार का ऐसा पूरा निश्चय था
जरूर डर जायँगी। पुलिस की लारी में घुसना, अकेले ही पु
और जेल-जीवन के सभी अपमानों का सहन करना क्या पर्दा
कर सकती थीं?

दूकानें फिर खोली गईं। और मनुष्यों को उनमें शराब
——— औरतों को गिरफ्तार

ले जाने लगी। पर इन औरतों की जगह भरने के लिए हमेशा दूसरी स्त्रियाँ आकर खड़ी हो जाती थीं। हर वक्त आनेवाली नई टोली को भी गिरफ्तार कर लिया जाता था। इस प्रकार जबरदस्त, अविचारी, कानून के धनी सरकारी नौकर एक तरफ और दूसरी तरफ नई जागृत हुई नारियों का समूह, इन दोनों असमान पक्षों में मानो विग्रह छिड़ गया। इन दोनों दलों की ताकतों में बड़ा फर्क था। एक तरफ सिर्फ पशुबल पर अवलम्बित लोगों ने मोर्चा ले रखा था। और उनके सामने जो स्त्रियों का दल था, उसके पास सिर्फ एक कष्ट-सहन का ही बल था। सिर्फ सहन-शक्ति पर आधारित इसी अबला-दल की विजय हुई। ज़बरन दूकानें खुली रखने से किसी तरह आमदनी नहीं हुई। ग्राहक शराबखानों को छोड़कर चले गये। शराब बेचनेवालों का मान समाज में घट गया, वे शरमाये और उन्होंने दूकान से शराब की बोतलें उठा लीं और वे अपनी अन्तरात्मा से समाधान करने लगे। वे बोतलों से शून्य शराबखाने में हाथ-पर-हाथ रखकर बैठे रहते, और उधर दूकान के बाहर कद्दावर पुलिस और पर्दा-विहीन छोटी-छोटी स्त्रियों के दल खड़े रहते।

× × ×

गांधीजी द्वारा वर्णित इन वास्तविक घटनाओं के प्रवाह के खतम होते ही उस जगह दलीलें, विषयान्तर, अपवाद, अनुमान और तर्क-वितर्क की झड़ी बहुत देर तक कायम रही। आखिर में जब हम लोगों के जाने का समय हो आया, तब न-जाने कैसे ईश्वर के अस्तित्व के विषय पर बहुत ही गहरी बातचीत हो रही थी। हम पांचों जनों को ईश्वर का स्मरण और ध्यान हो आया। इस विषय में दोनों पक्षों का एक-मत होना सहज था। और हम उस समय मनुष्य की सभी आशाओं के उद्गम के आधार परमात्मा तक पहुँच गये थे। इन्हीं बातों में हम लोगों ने विदा ली और एक दूसरे को पुनः मिलने के वचन दिये।

× × ×

हम जब दुबारा लेडी एस्टर के यहाँ गये थे तो उस समय गांधीजी ने चर्खा अपने साथ ले लिया था। दीवानखाने के गलीचे पर चर्खे को खोलते हुए गांधीजी ने लेडी

एस्टर से कहा,—"अब मैं आपको इसका संगीत सुनाने जा रहा हूँ, सुनिएगा।" हम लोग भोजन के लिए उठे। उस समय वे अपने दैनिक सार पूरा कात चुके थे। भोजन में हमारे साथ लार्ड लोथियन और के वे व्याख्याता महाशय थे, जिनका जिक्र हम पहले कर चुके हैं। बीमारियों को दूर किया जा सकता है, इस बारे में बहुत कुछ कहा गांधीजी पर इसका ज़रा भी असर न हुआ। भोजन के बाद आठ गोलमेज परिषद् के एक निजी सलाह-मशविरे में भाग लेने के हाउस जाना था। वहाँ जाते हुए रास्ते में मैंने उनसे पूछा,—"आपके बदलने की नीयत से किये गये ऐसे प्रयत्नों से क्या आपको नहीं होती?"

गांधीजी ने कहा—"ऐसे प्रयत्नों का मैं आदी हो गया हूँ। लोगों ने मुझे धर्म बदलकर अपने धर्म में मिलाने के प्रयास किये। उनकी भलाई होती है। मुझे इससे बहुत ही लाभ पहुँचा है, क्योंकि अपने धर्म की अच्छी-से-अच्छी बातें मेरे सामने रखते हैं; और वे अच्छा साहित्य भी मुझे देते हैं। इन धर्मों की अच्छी-से-अच्छी हो जाता हूँ और मुझे इनसे बहुत ही फायदा होता है। इस तरह बातें सीख जाता हूँ।"

मैं डारचेस्टर हाउस में बैठे-बैठे सलाह-मशविरे खत्म होने थी। इस जगह आराम-चैन की तो कोई कमी थी ही नहीं। पर इस ठाट-बाट देखकर मेरे दिल को सख्त चोट पहुँची। कितनी शानो-शौ और विलास के इस विशाल धाम का काम बिना किसी शोर-गुल रहा था। यह स्वयं और बिना किसी रुकावट के चलनेवाली सेवा होने की बजाय जब धन्धे के तौर पर की जाती है, तब कैसी मालूम होती है! जीवन की पवित्रता और सादगी को भूले चांद की तरह स्वच्छ कमरों में आते-जाते थे; पर उनके मन आनन्द का अतिरेक होता हो, ऐसा नजर नहीं आया। नाच के

स्वरों की सुरीली आवाज़ आ रही थी। उपाहार-घरों में जीभ के सभी स्वादों को तृप्त करने की सामग्रियां मौजूद थीं। जगह-जगह कीमती फूलों के ढेर लगे थे।

थोड़ी ही देर में मेरे मान्य अतिथि बाहर आये। मोटर के लिए हमें एक मिनट ठहरना पड़ा। हम लोग हाल में बैठे। गांधीजी को देखकर अन्य लोगों के परेशानी के भाव क्या गायब हो रहे थे? मुझे ऐसा कुछ जरूर महसूस हुआ। पर शायद यह मेरी कल्पना ही हो। खैर! गांधीजी और मैं अपने वास्तविक वो के जीवन में—सुख-दुःख, प्रार्थना और सेवा के वातावरण में—वापस आये।

परिषद् की समाप्ति

(१०)

गांधीजी जब इंग्लैण्ड पहुँचे तो उनके लिए पहले हफ्ते
ाया कि वे कामन-सभा में मजदूर-दल के सदस्यों के
सवालों के उत्तर भी दें। चाय पीने के थोड़ी देर बाद १० वें
सभा हुई। सभा खत्म होने के बहुत देर बाद तक उनके
तर लेने के लिए आते रहे। जार्ज लान्सबरी ने साग्रह गान्धीज
अदला-बदली की और प्रार्थना का समय होने तक उनसे बातची
ठा कि 'क्या अब हम लोग सात बजे तक नाइट्सब्रिज पहुंच

किसी ने कहा,—"यहीं प्रार्थना क्यों न की जाय?"

यह ठीक लगा। दरवाजा बन्द किया गया, कुछ लोग कुर्सी
ोग जमीन पर, और हमारे भारतीय मित्रों ने प्रार्थना प्रारम्भ की
ी, इसी लिए हमें कामन-सभा के मकान से टकराती हुई टेम्स
ुनाई दे रही थी।

हर हफ्ते फ्रेण्ड्स् मीटिंग हाउस में भारतीय सवालों के लिए
ासमें गोलमेज परिषद् के हरेक धर्म के सदस्य भाग लेते थे।
के अंग्रेज लोग भारतीय-विषयक अपने उत्तरदायित्व को गंभीरता से
। पार्लमेंट के सदस्य अब यह समझने लगे थे कि पैंतीस करोड़
िर्णय की जिम्मेदारी उन्हीं पर अवलम्बित है। पार्लमेंट पर यह पुर
ज्योंही भारतीय-समस्या पर बात शुरू हुई कि सभा की कुर्सियां
र अब ऐसा नहीं होता था। प्रकाशकों का यह कहना था कि
म्बन्धी किताबों को बड़े चाव से खरीदते हैं। मिस मेयो को

अलावा अन्य अनेक कितावें पार्लमेण्ट के सदस्यों को भेंट दी जाती थीं। इसलिए हम सब लोगों के मन में आशा का उद्भव हो गया था।

इतने में पार्लमेंट का चुनाव आ गया। जब अपने देश ही के दिवालियेपन का डर हो, तब सात हज़ार मील दूर के किसी देश की स्थिति के बारे में विचार करने के लिए तो मनुष्य में अद्भुत कल्पना-शक्ति चाहिए। कुछ समय बाद लोगों को यह भी महसूस होने लगा कि भारतीय समस्या का ज्यों-ज्यों अभ्यास किया जाता है, त्यों-त्यों वह और भी पेचीदी होती जाती है। उदाहरण के लिए 'हरिजनों' का ही सवाल लीजिए। पहले तो यह स्पष्ट जाहिर था कि गांधीजी ही हरिजनों के हितकर्ता और हिमायती हैं। क्या गांधीजी ने दस वर्ष से यह काम नहीं शुरू किया था? एक हरिजन लड़की को अपने यहाँ पाल-पोसकर उन्होंने सनातनी ब्राह्मणों का आचार-धर्म नहीं तोड़ा था? और क्या बार-बार हम लोगों ने उनके अनुयायियों द्वारा हरिजनों के लिए खोली गई पाठशालाओं के विषय में नहीं सुना था? ये पाठशालाएँ ब्राह्मण चलाते थे और वे अपने शिष्यों के साथ खाते-पीते थे; इससे क्या वह शाप दूर नहीं होता? क्या भारत के अनेक अखबारों में ऐसी खबरें नहीं आती थीं कि गांधीजी के प्रवास में अमुक जगह सभा में हरिजनों को और लोगों से अलग बैठाने का प्रबन्ध किया गया था, परन्तु गांधीजी ने इसपर ध्यान नहीं दिया और सवर्णों की हरिजनों के प्रति की अवज्ञा को ध्यान न देकर स्वयं उनके बीच बैठकर भाषण दिये? क्या उनके स्वयंसेवक हरिजनों को अपने साथ लेकर तीर्थयात्रा को नहीं जाते थे? और जहाँ उन्हें मन्दिर-प्रवेश के लिए रोका गया वहाँ वे मन्दिर के बाहर धरना लगाकर सप्ताहों तक इन्तजार करते रहे। और उन्होंने क्या यह प्रार्थना नहीं की थी कि 'हे नाथ, तू मन्दिरों के पाषाण-हृदय रक्षकों के हृदयों को पिघलाकर उनके हृदय में कोमलता का संचार कर?' क्या इन्हीं निरन्तर के प्रयत्नों द्वारा हरिजनों को मन्दिर-प्रवेश नहीं मिला था?

परन्तु अब यहाँ एक हरिजन, डा० अम्बेडकर, गोलमेज परिषद् के एकमात्र हरिजन सदस्य, गांधीजी के इन उपर्युक्त कामों को झूठा साबित कर रहे थे। उनका कहना था कि गांधीजी हरिजनों की स्थिति और माँगें नहीं जानते; और

हरिजनों को अलग जातीय प्रतिनिधित्व चाहिए ही। दूसरी तरफ रहे थे कि यह भेंट हरिजनों के लिए घातक सिद्ध होगी।

अंग्रेज जनता किसे सही और सच्चा समझे? जातीय प्रतिनि में क्या अर्थ निहित है, यह तो स्पष्ट जाहिर नहीं था।

अजीब और अनमुने शब्दों को सुनकर अंग्रेज असमंज हिन्दुस्तान कितना विशाल देश है, इसकी उन्हें खबर ही नहीं थी हिन्दुस्तान की स्थिति का वर्णन करने के लिए एक ही जैसे शब्दों व और लगभग उनका अभिप्राय भी एक जैसा ही होता है; ह समझता था। इसलिए वे थोड़े ही समय में ऐसा समझने लगे कि का न तो सिर है, न पैर। और वे निराश हो गये।

सच्चा कौन?—डा० अम्बेडकर या गांधीजी? हरिजनों के दुःखों किसे अधिक है? बिलकुल गरीब लोग—इंग्लैण्ड में हरिजनों लोग; कहने लगे कि—'जब तक मध्यम वर्ग के लोग हमारे प्रति लोगों के लिए लड़ते थे, तब तक हमारे दुःख कायम ही रहे। इन लोगों ने हमारे लिए अपना जीवन दे दिया, हमारे लिए भाव और लेख भी लिखे; पर ये लोग हमेशा हम पर सवार रहते थे। लोगों को गांधीजी का दर्शन नई तरह से ही होने लगा। वे डा० कथन का विरोध करते थे और ब्रिटिश जनता से यह कहते थे चुने हुए प्रतिनिधि डा० अम्बेडकर की अपेक्षा वे हरिजनों की मांग अच्छी तरह जानते हैं। ब्रिटिश राजनीति से जरा भी परिचय व्यवहार बहुत ही परिचित और भयानक मालूम होता था। लोगों विचार उठते थे कि राजनीति में जो ईर्ष्या-द्वेष, अहंकार और वह तो गांधीजी में नहीं आ गया है? ऐसे अनेक तर्क-वितर्क लोगों इसलिए भारतीय समस्या के निर्णय को स्थगित रखा गया।

इधर हिन्दू-मुस्लिम-समस्या भी उग्र रूप धारण कर रही थी। गई दिवंगत हो गये थे, अतः उनकी जगह उन्होंने स्वयं ली।

गांधीजी और उनके अनुयायी इन्हें 'बड़े भाई' कहकर पुकारा करते थे। उस समय वे प्रेमी, सहिष्णु, विनोदी और मिलनसार थे। पर इस समय वे बदल गये थे, ऐसा हमें ही नहीं अपितु उनके पुराने-से-पुराने मित्रों को भी महसूस होता था। अब तो जब कभी पुराने नेताओं का नाम निकलता तब वे झगड़ ही पड़ते थे।

वे बार-बार कहते,—'मैं तो शान्ति चाहता हूँ ; हमें अच्छी सुलह कर इस झगड़े को खत्म कर देना चाहिए।'

अंग्रेज़ अधिकारियों को ये शब्द बड़े ही आकर्षक लगते। वे समझते थे कि मुसलमानों को कुछ अच्छी शर्तें देकर खुश किया जा सकता है और उन्हें ब्रिटिश सरकार से अलग सुलह करने की बात समझाई जा सकती है और इस प्रकार क्या साम्राज्यवादी रोम के उस पुराने सूत्र का वे नया समर्थन नहीं करेंगे ? आठ महीने पहले, प्रथम गोलमेज परिषद् के समय, जब मौलाना मुहम्मदअली का स्वर्गवास हुआ उस समय ये ही शौकतअली गांधीजी के बारे में कहते थे ; "मेरे गुरु ! मेरे सरदार ! यदि वे यहां आते तो कितना अच्छा होता ! उन्हें तो इस समय लन्दन में होना चाहिए था !"

गांधीजी प्रथम गोलमेज परिषद में गैरहाजिर थे। उस समय शौकतअली साहब ने उपर्युक्त हृदयोद्गार प्रकट किये थे।

अब उनकी इच्छा पूरी हुई। गांधीजी अब हाजिर थे। परन्तु द्वेष तो अब और अधिक मात्रा में था।

शौकतअली अब बार-बार कहते,—'हम मुसलमानों को तो अब सुलह-शान्ति चाहिए।'

परन्तु 'शान्ति' का अर्थ यहां सांसारिक व्यवहार की दृष्टि से अधूरी और इनाम के तौर पर मिलनेवाली सुलह भी हो सकती है। और इस शब्द का वास्तविक अर्थ जो शाश्वत और आध्यात्मिक दृष्टि से बहुत ही ऊँचा है तथा जिसे गांधीजी अकसर शौकतअली साहब के अनुयायियों को बताते रहते थे, अर्थ यदि इस समय लिया जाता तो शौकतअली साहब की नजरों में उस 'शान्ति' शब्द की खींचातानी ही होती !

गोलमेज परिषद् की लम्बी-लम्बी सभाओं में हिन्दू-मुस्लिम-एकता भाषण हुए। परन्तु उच्च-से-उच्च अंग्रेज अधिकारियों द्वारा अच्छे-से-अच्छे इन छोटे और उत्तम प्रवचनों का श्रोताओं पर ज़रा भी असर नहीं पड़ा निराकरण न तो कानूनी-कायदे कर सकते हैं और न उच्च अधि... गये लच्छेदार भाषण ही। ये चीज़ें क्या हम लोग बचपन में ही ... पक्षों के बीच जब कोई विदेशी सरकार पड़ती है या अत्यन्त तर्क... लेनेवाला प्रधान-मन्त्री पड़ता है, तब इन दोनों पक्षों का वैमनस्य और धारण कर लेता है। झगड़ा खड़ा करनेवाले तो झगड़ालू प्रचारक ही प्रचारकों के हाथ में बनावटी धर्म-श्रद्धा है और उनके कथनानुसार ... अखबार भी हैं। इन दोनों साधनों के द्वारा ये लोग भोली-भाली जनता टालकर उल्टे रास्ते पर ले जाते हैं। वे अपनी इन हरकतों से कभी ... वाले हैं। जिस समय विलायत में गोलमेज परिषद् में भारतीय हिन्दू-... पर वाद-विवाद हो रहा था, उस समय भारत में लाखों ग्रामवासी और मिलकर शान्ति-सुलह से रह रहे थे; हिन्दू और मुसलमान बिना ... एक-दूसरों के उत्सव-त्योहारों में भाग ले रहे थे और एक-दूसरे की ... कर रहे थे और खुशी में एक-दूसरे से गले मिलकर आनन्दोत्सव ... परन्तु दूसरी तरफ विलायत के अखबारों को तो कौमी-एकता के ... छापने का चस्का पड़ा हुआ था। गांधीजी और डा० अम्बेडकर के ... वाद-विवाद चला था, वह तो इन पत्रकारों के लिए मन-माना भोजन ... नमक-मिर्च मिलाकर परोसने से वे लोग कब चूकनेवाले थे? हरि... वास्तव में क्या हो रहा था, यह तो हमारे अंग्रेज भाई बहुत ही ... इने-गिने लोग—जानते थे। हरिजनों को अलग प्रतिनिधित्व भले ... देखने में तो एक आकर्षक तोहफ़ा लगता था, परन्तु वस्तुस्थिति ... यह स्पष्ट देख रहे थे कि यह उनके लिए एक मार-रूप ही सिद्ध हो... प्रतिनिधि चुनने की गफ़लत बन गई तो यह तो निश्चित ही है कि ... (अस्पृश्य) को मत दे सकेगा। और इस प्रकार उस वोट देने ...

उनकी अस्पृश्यता की बेड़ियाँ और भी मजबूत हो जायँगी, वे सदैव के अस्पृश्य हो जायँगे और हमेशा अन्य हिन्दू-समाज से वे अलग ही रहेंगे। गांधीजी ने इन बेड़ियों को तथा इस कथित अलगाव को दूर करने की प्रतिज्ञा ली ही थी। इनके अनुयायी इस अस्पृश्यता के नाश के लिए तथा इस दाग को मिटाने के लिए और इस 'अस्पृश्य' शब्द को हमेशा के लिए खत्म करने के लिए कमर कसे हुए थे। 'हरिजन' मनुष्य की तरह एक नागरिक के नाते अपना वोट जिसे चाहें उसे दें, यही उचित है — ऐसा गांधीजी और उनके अनुयायी दोनों चाहते थे।

गांधीजी ने आक्सफोर्ड के विद्यार्थियों के सामने भाषण देते हुए यह कहा था:—

"मुसलमान और सिख सगठित हैं। हरिजनों का संगठन बहुत कमजोर है। उनमें राजनीतिक जाग्रति बहुत ही कम है। और उन पर इतना अत्याचार किया जाता है कि मैं उन्हें उनकी अपनी गलतियों से बचाना चाहता हूँ। अगर अपना वोट देने के लिए उनका एक अलग फिरका बन जाता है तो गाँवों में जहां रूढ़िग्रस्त हिन्दू लोग बसते हैं, वहां उनकी और भी बुरी हालत हो जायगी। युगों तक हरिजनों की उपेक्षा का प्रायश्चित्त तो सवर्ण हिन्दुओं को ही करना है। यह प्रायश्चित्त सक्रिय समाज-सुधार द्वारा हरिजनों की सेवा करते हुए उनके जीवन में सुव्यवस्था निर्मित करके पूरा किया जा सकता है। उनके लिए अलग मत-विभाजन करके तो वह हो ही नहीं सकता। मत-विभाजन द्वारा आप लोग हरिजनों और सवर्णों को लड़ा देंगे। आपको मालूम होना चाहिए कि मुसलमानों और सिक्खों का अलग प्रतिनिधित्व स्वीकार करना भी मेरे लिए एक अनिवार्य अनिष्ट है। और हरिजनों के लिए तो वह विशुद्ध रूप से हानिकारक है......।

हरिजनों के मत-विभाजन से उनका दासत्व हमेशा के लिए क़ायम रहेगा। मुसलमानों के मत-विभाजन से क्या वे मिट जायँगे? क्या आप लोग यही चाहते हैं कि 'अस्पृश्य' हमेशा ही अस्पृश्य रहें? अलग-अलग वोट देने के अधिकार तो इस चीज़ को हमेशा के लिए क़ायम रखेंगे। वास्तविक आवश्यकता तो अस्पृश्यता-निवारण की है, और इसके 'ऊँचे' लोगों ने 'नीच' लोगों पर जो प्रतिबन्ध लगा रखा है, वह दूर हो जायगा। यह प्रतिबन्ध हट जाने पर आप किसे अलग वोट देने का

अधिकार देंगे ? यूरोप का इतिहास देख जाइए। आप लोगों के यहाँ स्त्रियों को अलग से वोट देने का अधिकार है ? पुख्ता उम्र की हरि॰ देने का अधिकार हरिजनों को भी देकर आप उन्हें संरक्षण देते हैं ग्रस्त सवर्ण-हिन्दुओं को भी उन्हीं के पास वोट मांगने के लिए जाना है।

"आप यह जानना चाहते हैं कि तब डा॰ अम्बेडकर उनके द॰ का अधिकार क्यों चाहते हैं ? मैं डा॰ अम्बेडकर का बहुत ही आदर उन्हें हमें कटुवचन कहने का पूरा अधिकार है। वे इतना संयम रखते हैं हम लोगों का सिर नहीं फूटता। आज उनके अन्दर वहम ने इतनी ज॰ कि उन्हें और कुछ नजर ही नहीं आता। उनका हरेक सवर्ण हिन्दू को पक्का शत्रु मानना स्वाभाविक है। मुझे अपनी जवानी में ऐसा ही अनुभ॰ वहाँ मैं जहाँ-जहाँ जाता, वहाँ गोरे मुझे तंग करते। डा॰ अम्बेडकर प्रकट करें, यह स्वाभाविक ही है। परन्तु वे जो अलग वोट देने का द रहे हैं, उससे उन्हें सामाजिक सुधारों में सफलता नहीं मिलेगी। वे सत्ता या ओहदे का उपभोग करेंगे, परन्तु इससे हरिजनों का ज़रा भी होगा। मैं यह सब कुछ साधिकार कह रहा हूँ, क्योंकि मैं वर्षों तक साथ रहा हूँ और उनके सुख-दुःख में मैंने भाग लिया है।"

× × ×

नवम्बर के आखिरी सप्ताह एक दिन मैंने देखा कि गांधीजी के द से आई डाक का एक ढेर पड़ा है, और उनके चेहरे पर विषाद की ए

"कोई बुरा समाचार है ?" मैंने पूछा।

उन्होंने कहा,—"बहुत ही गंभीर समाचार है। यह ज॰ पत्र है। और शायद उनका यह आखिरी पत्र होगा। ऐसा मालूम हो उनकी गिरफ्तारी होनेवाली है।"

"उन्हें इस समय क्यों गिरफ्तार किया जा रहा है ?" मैंने पूछा

गांधीजी ने कहा,—"क्योंकि वे किसानों को यह कह रहे हैं कर देने के लिए खुद को न बेच बैठना। वे उन्हें कहते हैं, ए॰

और अपने पशु बेचकर महसूल देने की अपेक्षा जेल जाओ तो अधिक अच्छा होगा। क्योंकि वे लोग महसूल चुकाने का भगीरथ प्रयत्न करें और फिर भी न चुका सकें तो भी सरकार उनसे कहेगी, - 'देखो तुम लोगों के पास पैसे होते हुए भी तुम महीनों से नहीं चुका रहे हो, तुम तो बहुत कर्जदार हो गये हो। भारतीय कलेक्टरों के हाथ में इतनी अधिक सत्ता है कि दुनिया के किसी भी भाग के किसी भी अधिकारी वर्ग के पास न होगी। वे जो चाहें, कर सकते हैं। जब तक मेरी सांस चलती है तब तक क्या तुम समझती हो कि मैं इन किसानों के उत्साह को यूँही जाने दूँगा? तुम्हारी सरकार हमारे यहाँ पश्चिम के सुधारों की सुख-सहूलियत देना चाहती है। वह कहती है,—'यह रहे तुम्हारे लिए सिनेमा, यह तुम्हारे छुट्टी के दिन हैं और ये रहे लाइसन्सवाले घर।' परन्तु लोगों की माँग तो हमेशा एक ही है,--'हमें रोटी दो।' आर्डिनेन्सों का मतलब तुम अंग्रेज़ लोग नहीं समझ सकते। जब यह कहा जाता है, कि पुलिस को सत्ता सौंप दी गई है तब आप लोग इंग्लैण्ड के जैसी ही किसी पुलिस का ख्याल करते हैं। इंग्लैण्ड के पुलिस के अफसर तो सद्‌गृहस्थ हैं, पर भारत में पुलिस का अर्थ बिल्कुल अलग ही होता है। मैंने इंग्लैण्ड के उच्च पुलिस अधिकारियों से बातचीत की है। और बहुतों के साथ मेरी जान-पहचान भी है। वे बहुत ही सज्जन हैं, इसमें तो कोई शक ही नहीं। यह तो आपको मालूम ही है कि ये लोग जब कवायत करते हैं तो एक ही साथ इन्हें बोलना पड़ता है, 'हम जनता के सेवक हैं, हम जनता के सेवक हैं।' इससे ये शब्द इन लोगों के हृदयों में घर कर जाते हैं। ये लोग वास्तव में आप लोगों के सेवक हैं। उनका हरएक काम सेवा से परिपूर्ण है। परन्तु भारत में तो वहाँ की विदेशी सरकार ने बदमाश, बड़े-बड़े अपराधी और नीच वर्ग के लोगों में से पुलिस की भर्ती की है। इसलिए वे लोग जनता से जैसा व्यवहार करते हैं उसमें आश्चर्य जैसा कुछ भी नहीं है। आप इन लोगों को दोष नहीं दे सकते। इन लोगों के हाथ में यदि सत्ता दी जाय, तो इन की जिनसे व्यक्तिगत शत्रुता हो, उन्हें पकड़कर अपना बदला लेते हैं। उन्हें अपने रोष को शान्त करने के लिए अनेक मौके मिल जाते हैं, यह हम लोग जान नहीं सकते? इनका जनता के साथ कोई स्वाभाविक संबन्ध नहीं

होता। वे तो केवल मशीन-मात्र हैं। अधिकारियों के चेहरे पर के समझने की आदत भी इन लोगों में होती है। इन आर्डिनेन्सों की वजह को इन्हीं लोगों पर अवलंबित होना पड़ता है। गांव में से कोई भाग न ज॰ वे गांव को घेर लेते हैं, और इसके बाद घेरा क्रमशः छोटा करते जाते केवल संदेह पर ही सारे गांव को अपने शिकञ्जे में कस लेते हैं। औ चलाये बग़ैर ही लोगों को जेलखानों में ठूस देते हैं।"

कुछ दिनों बाद एक दिन गांधीजी ने मुझसे कहा,—'मेरी भारत- .गृह देर तक बातचीत हुई।' अमुक परिस्थितियों के होने की सं ।॰ ग विषय पर चर्चा हुई। उसी दौरान में सर सेम्युअल होर ने गांधी॰। --'कांग्रेस को कुचल देना होगा।'

मैं ध्यान से सुनती रही, क्योंकि मैं यह जानती थी कि सर ॰ प्रति गांधीजी के मन में बहुत उच्च अभिप्राय थे,—"वे एक सच्चे ॰ नज़रों में इनसे अधिक सच्चा और कोई आदमी नहीं है। 'डेली उनका वह रेखा-चित्र आया था, हूबहू सम्पूर्ण था। मि॰ लास्की द्वारा एक बात की पूर्ति के लिए मैं घटनाएँ दे सकता हूँ। आप हमेशा ॰ के मन में क्या विचार उठते हैं यह जान सकते हैं। वे कुछ भी गु॰ मुझे उनके साथ काम करना अच्छा लगता है। क्योंकि वे अपने ज॰ खोल देते हैं।"

"परन्तु इसमें तो कोई शक ही नहीं कि कांग्रेस को कुचलना क्यों ठीक है न?" मैंने पूछा। दमन नीति के कारण जनता की प्रतीकार-संकल्प कितना उग्र हो जाता है, यह मैं विचार कर रही थ

इतने में गांधीजी ने स्वस्थता से उत्तर दिया,—'बेशक नहीं अल ओर से प्रार्थना की कि आप परिस्थिति पर पुनः विचार करें। परना शुरू करेंगे तो मेरे आपके दोनों देशों पर अपार कष्ट आ याद दिलाया कि पहले के वाइसरायों—लार्ड चेम्सफोर्ड स कांग्रेस को मान्य किया था। इसके उत्तर में उन्होंने कहा,—'

आज विद्रोह जाग उठा है और मैं विद्रोह को सहन नहीं कर सकता।' मैंने उन्हें समझाया—'पर आप विद्रोह किसे कहते हैं? संसार के इतिहास में इसके जैसा विद्रोह कभी हुआ भी है? विद्रोह जब सम्पूर्ण शान्ति-मय हो तब भयंकर नहीं होता, यह तो आप मानते हैं न? हमारे दिलों में आप लोगों के प्रति ज़रा भी शत्रुता नहीं है।' वे बोले,—'कांग्रेस ने जब तक विद्रोह किया हुआ है, तब तक उसे देखा नहीं जाता, और खासकर इसलिए कि वह मुकाबले में दूसरी सरकार खड़ी कर रही है।' मैंने कहा,—'बहुत-से काम जो सरकार को करने चाहिए, वे हम लोग कर रहे हैं, इसमें तो कोई शक ही नहीं है। पर इसका कारण एकमात्र यही है कि सरकार ने ये काम बिल्कुल नहीं किये हैं। हमने शराबियों को उनकी बुरी आदतों को छुड़ा कर उन्हें सच्चा नागरिक बनाया है। यह दोष हम अपने ऊपर खुशी से लेते हैं, पर उधर सरकार तो इसी शराब की दूकानों द्वारा शराब के व्यापार को प्रोत्साहन दे रही है। हम बेकारों को काम देते हैं और इसी लिए हमारे खादी-सेवकों ने अनेक लोगों के कर्ज़ को उतार फेंका है। यह भी सरकार का ही काम है। हमने अपनी अदालतें खड़ी की हैं, उसमें आना-न-आना जनता की इच्छा पर है, फिर भी बहुत-से लोग आते हैं।' सर सेम्युअल होर ने कहा,—'आप शायद मुझे बहुत ही कठोर व्यक्ति समझें और भविष्य में मुझे बुरा भी कहें। लोग मुझे जैसा कहना हो कहें, मैं यह सह लूँगा, पर किसी को यह कहने का मौका मैं नहीं देना चाहता कि उसने अमुक बात करने का वचन दिया था, पर की नहीं।' मैंने कहा—'सर सेम्युअल, इस बात में हम सहमत हो सकते हैं। इसके लिए मैं आपके साथ हाथ मिलाता हूँ। आपकी यह सत्यता ही हम दोनों के बीच एकता स्थापित करनेवाली वस्तु है। मैं आपका आभारी हूँ।'

नवम्बर में जनरल स्मट्स लन्दन होकर कहीं जा रहे थे। वे और गांधीजी पुराने दोस्त हैं। बीस बरस पहले दक्षिण अफ्रिका के भारतीयों की लड़ाई में गांधीजी का उनके साथ संघर्ष हुआ था। जनरल स्मट्स से जब अधिक अधिकार न मिले, तब गांधीजी ने पाँच हजार मज़दूरों को अपने साथ लेकर ट्रांसवाल में प्रवेश करने के लिए बड़ी भारी कूच की थी। सत्यपालन के अपने व्रत के कारण गांधीजी ने अपनी इस योजना की सूचना जनरल स्मट्स को दी थी। जिस दिन कूच प्रारम्भ हुई उस

गांधीजी ने फिर उन्हें फ़ोन किया, परन्तु वहाँ फ़ोन का चोंगा नीचे रख
था। एक दिन की कूच के बाद उन्हें गिरफ़्तार कर लिया गया, परन्तु कू
ये गये प्रोग्राम के अनुसार जारी रही। आखिर जनरल स्मट्स को अपनी
ज़नी पड़ी और सुलह की शर्तों को बनाने के लिए गांधीजी को क़ैद से
ा गया। सन १९३२ की उस विषम परिस्थिति के काल में ब्रिटिश सरकार
ेजी के बीच समझौता हो सके यही सोचकर जनरल स्मट्स अपने
धिक अधिक दिन तक ठहरे। जहाज़ में बैठते समय जनरल स्मट्स ने
मुलाक़ात देते हुए ये वचन कहे थे :—

"इस देश के सामने इस समय भारत की आज की समस्या सबसे महत्
भयंकर है। ग्रेट ब्रिटेन को भारत के संतोष के लिए पूरी पूरी कोशिश
ए। इस दिशा में वह जितनी शीघ्रता कर सके उतना अच्छा है, क्योंकि
जो समझौते का मौक़ा मिला हुआ है, वह बहुत देर तक नहीं रहेगा।
ास है कि गांधीजी उचित समाधान के लिए बहुत ही आतुर हैं; और
न जहाँ तक कायम है, वहाँ तक वे ब्रिटेन का समाधान करने में पूरी पूरी
ा। गांधीजी भारत के अधिकतम भाग के प्रतिनिधि हैं, और उनके शुक्र
ासन का पालन कोई नहीं करा सकता। ग़लतफ़हमी को और भा
वस्था से होनेवाले कष्टों को दूर करने के लिए इस समय कुछ भी
ा चाहिए। इसका इलाज पशुबल का प्रयोग नहीं है; और आधुनिक भावना
श स्वभाव इन दोनों में से एक भी दमन-नीति की आजमाइश नहीं क
ज़ परिषद् की यह बैठक यदि इस काम को पूरा न कर सके तो इसे
ऐसी सद्भावना और समझ से स्थगित करना चाहिए कि जिससे शीघ्र ही
ाम शुरु किया जा सके और शीघ्र इस कार्य की समाप्ति की जा सके।
ग्द ही स्वराज्य देने में न तो सम्प्रदाय बाधक हैं और न मत-विभाजन।
समय सबसे मुख्य बात यह है कि दोनों पक्षों में परस्पर विश्वास और समझ
ा पैदा हो; और ऐसा कोई भी काम न हो, जिससे भारतीय और ब्रिटिश के
न संदेह की भावना पैदा हो जाये। मेरा पूरा विश्वास है कि दोनों पक्ष स

परन्तु गुप्त रूप में जो सहूलियतें दी गई थीं, उनके लिए ॰
तहज़ीब के खिलाफ़ था। इसलिए उन्होंने परिषद् के सभी ॰
मंत्री के अथक परिश्रम, कुशल सभापतित्व, उनकी समय
खूबी से काम निकालने की कला की तारीफ़ की और उसके ,

प्रधान-मंत्री ने जवाब में कहा,—"प्रिय महात्माजी, मैं च
इस सहयोग के रास्ते को जारी रखें। यही शायद एक मात्र र
व्यवहारों के मूल में जो भव्य और आध्यात्मिक वृत्तियाँ पड़ी हुई
राजनीतिक विचारों से नहीं मिला देना चाहिए? एक बात के लि
झगड़ा है। वे मेरी बराबरी में अपने को बूढ़ा क्यों मानते हैं?
बड़े बुलन्द आवाज में हमारे सामने बोलनेवाला व्यक्ति जवान ॰
जवानी में गांधीजी मुझसे एक क़दम आगे हैं। हम दोनों में ॰
नज़र आता है यह तो मैं नहीं कह सकता, पर मैं समझता हूँ
मैं अन्तकाल के अधिक नज़दीक हूँ। जिस मनुष्य ने कुरसी पर
लोगों से काम लिया वह बूढ़ा आदमी था। यहाँ मेरे साथ बैठ इस
मुझे सुबह छः बजे उठने के लिए मजबूर किया। भविष्य में ॰ ।
शायद मि० गांधी सभापति का आसन ग्रहण करेंगे, और अगर ऐसा
यहाँ उपस्थित होकर यह देखने की इच्छा होगी कि वे समय-पालन में
हैं या नहीं। आप सब लोगों की यात्रा सफल हो ऐसी मेरी इच्छा है
इतना तो ज़रूर याद रखिएगा कि हम लोग एक ही कार्य में एक
जुटे हुए हैं।"

परिषद् के खत्म होते ही, हाथ मिलाना, विदा का आदान-प्रदान
चार के वचन आदि बहुत देर तक होता रहा। हम लोग तुरन्त ही एक
बैठकर एक सदस्य के निजी घर पर गये। वहाँ दीवानखाने में भारतीय
तथा कांग्रेसवादी नेताओं की भीड़ लगी हुई थी। ये लोग मि० मेक॰,
घोषणा के अध्ययन के लिए एकत्र हुए थे। यूरोपियनों को शारीरिक ॰
गांधीजी सर्वोपरि महत्ता देते हैं। यह उनकी आदत-सी हो गई है। इसका ॰

जनक प्रसंग मेरे सामने भी आया। इस कमरे में इकट्ठे हुए अनेक उत्कंठित व्यक्तियों को देखने का आनन्द मुझे मिल रहा था। मैं इस समय एक ऐसी सभा में हाज़िर थी जहाँ मुझे तरह तरह के अभिप्राय सुनने को मिलते थे और इससे मुझे बहुत ही ख़ुशी हो रही थी। दुपहर का एक बज चुका था। गांधीजी यूरोपियनों के खाने के समय का खूब ध्यान रखते हैं। अत्यन्त महत्त्व के प्रश्नों की चर्चा चल रही थी, इतने में एक टेबल लाया गया और उस पर मेरे अनेक बार मना करने पर भी मेरे लिए भोजन परोसा गया। मैंने विवेक की खातिर थोड़ा खाया और तुरन्त सुनने बैठ गई। परन्तु गांधीजी ने अत्यन्त महत्त्व के प्रश्नों पर से अपना ध्यान हटाकर मेरी तरफ देखा और कहा,—"क्यों? तुमने प्रति दिन की अपेक्षा आज जल्द भोजन क्यों समाप्त किया?" यह चीज़ मेरे लिए असह्य-सी हो रही थी, पर फिर भी उनके आग्रह के कारण मैं भोजन का आनन्द लेती रही।

पेरिस में

(११)

सुबह साढ़े पांच बजे। गांधीजी अपने ऊपर के कमरे से नी
अन्धकारवाले प्रार्थना-गृह में प्रवेश करते हैं; इस कमरे को पार
दरवाज़े पर पहुँचते हैं। बीच में प्रार्थना के लिए कुरसियाँ रखी हैं,
गांधीजी बहुत ही कुशलता से आगे बढ़ते जाते हैं। पुलिस,
शुभाकांक्षियों का समूह खड़ा है; उनका अभिनन्दन करते हुए आखिरी
की गलियों में घूमने जाते हैं।

सुबह साढ़े छह बजे वे स्नान और नाश्ते के लिए वापस आ जाते

सुबह सवा आठ। विदा की रस्म शुरू होती है। पुलिस की
चौकीदारी खत्म हुई। गांधीजी इनके साथ तथा घण्टों से राह देखते
के साथ हाथ मिलाते हैं। और डा० फतियाल की गाड़ी आज
के किनारे पर मुड़ती है। उसके आगे पुलिस की ज़बरदस्त मोटर है,
बड़ी भीड़ होते हुए भी हमें रास्ता मिल जाता है। हम पूरी लन्दन के
लिए तो ऐसी व्यवस्था बाइबल की चमत्कार-घटना के समान थी जिसमें
पानी ने अलग होकर मार्ग बना दिया था। हम लोग अब तीसरी
को घटी-से-घटी और उत्तम गाड़ी में बैठे हैं। यह गाड़ी सर प्रभाशंकर पट्टणी

अचानक ही हम लोग माल्बरो रोड पर भीड़ में घिर जाते हैं। रास्ते
ए एक पुलिस ने हमें रोका है! क्या मोटर पर जो गोलमेज़ परिषद्
गा है, वह उसने नहीं पहचाना है? ऐसा तो नहीं हो सकता! यह हम
कितना अपमान है! एक दूसरे की बनावटी चिढ़ देखकर हम लोग हँ
। अब हम लोग पुनः साधारण व्यक्ति हो जायेंगे। अब न तो हमें किसी

का खास अधिकार होगा और न ही सरकार हमारी तरफ खास ध्यान देगी, यह कैसी विचित्र बात है ?

विक्टोरिया स्टेशन आने ही वाला था कि हम लोग सर प्रभाशंकर पट्टणी के पास से गुज़रे। वे पैदल ही गांधीजी को विदा देने के लिए आ रहे थे। हम लोगों ने हाथ हिलाये। उनका ध्यान इस तरफ नहीं था। वे तो भारतीय तरीक़े से ज़मीन की तरफ आंख करके चलते आ रहे थे।

सुबह ९ बजे। प्लेटफार्म के लिए टिकिट के पैसे नहीं खर्चने पड़ते हैं, यह कितना अच्छा मालूम होता है। हमारी मण्डली के पास ब्रिंडिसी पहुँचाने के लिए कुल वासठ नग थे। परन्तु हम लोगों को ज़रा भी चिन्ता नहीं थी। मनुष्य अपने सामान की चिन्ता से मुक्त हो जाय तो उसे कितनी ख़ुशी है। गुप्त पुलिस के अधिकारियों ने टिकिट, पास-पोर्ट, और सामान आदि की सभी ज़िम्मेदारियाँ अपने ऊपर ले ली थीं।

परन्तु फिर भी गांधीजी ने चिन्तातुर होकर एक सवाल पूछा,—'खिलौने ठीक ठीक आ गये हैं कि नहीं।' खिलौने सुरक्षित हैं, यह सुनकर कहते हैं,—'मैं जो सामान साथ लाया था, उसके सिवा सिर्फ़ इन खिलौनों को ही मैं अपने साथ भारत ले जा रहा हूँ।' वो मुहल्ले के बालमन्दिर के बालकों ने गांधीजी की वर्षगांठ पर उन्हें छोटे-छोटे ऊनी जानवर, रंगीन मोमबत्तियाँ और चाक से बनाये हुए कुछ चित्र उन्हें भेंट किये थे। इन्हीं खिलौनों की वह बात कर रहे थे।

गाड़ी चलती है—वहां जो अंग्रेज़ हैं वे Auld Lang Syne का गीत गाते हैं।

महादेव,—'यह भजन मुझे बहुत ही अच्छा लगता है। इसे सुनने के लिए मुझे दुनिया के किसी भी कोने में जाना पड़े तो ज़रूर जाऊँगा।'

सुबह साढ़े दस। फोकस्टन में हम लोग जहाज़ की सीढ़ियों पर चढ़ते हैं, यहाँ ब्रिटिश सिनेमावाले सामने मौजूद रहते हैं।

सुबह साढ़े ग्यारह। जिस फ्रेंच अधिकारी को गांधीजी की रक्षा का भार दिया गया था, उसकी सार्जंट एवन्स गांधीजी से पहचान कराता है। वह झुक करके

प्रणाम करता है और पूछता है—'आप जहाज़ से
या पीछे ?'

गांधीजी,—'आपको जैसा अनुकूल हो वैसा।'

दुपहर साढ़े बारह बजे। फ्रांस में प्रवेश करने का
तरीक़ा है, न तो किसी तरह का जकात है, न किसी तरह
तरह का पासपोर्ट या टिकिट बताने की आवश्यकता है। हम
पर आये, और हम लोगों ने सोचा आखिर यह चलने की
स्टेशन—मास्टर हमें रेलगाड़ी के एक आलीशान डिब्बे में
आधुनिक ढंग की बड़ी से बड़ी खिड़कियाँ हैं।

गांधीजी,—'परन्तु हम लोगों के पास तो पहले दर्जे की टिकि

रेलवे-अधिकारी नमस्कार कर कहता है, ये सभी सूचनाएँ
हमें अच्छी तरह बिठाकर वह चला जाता है।

दुपहर का एक। पत्रकारों का जमघट आगे बढ़ आता है,
इतना ही कहते हैं,—'मुझे ख़ुशी है कि मुझे फ्रेंच भूमि पर एक
अवसर मिला, और मैं इसका यथाशक्ति पूरा सदुपयोग करूँगा।'

पत्रकार गांधीजी के अन्य साथियों से पूछताछ करते हैं।

"गांधीजी लन्दन में कहाँ ठहरे थे ?"

किंग्सली हाल का परिचय देने जितनी हम लोगों की फ्रेंच
थी, इसलिए हमें बहुत ही संकोच हुआ।

"वाय॰ एम॰ सी॰ ए॰ ?" एक अख़बार—नवीस ने पूछा।

"क्लब" दूसरे ने उत्साह से हामी भरी।

"फोयर ?" आखिर में यह निर्णय होता है कि यह आखिर का वर्णन

(नोट—फ्रेंच भाषा में 'फोयर' किसे कहते हैं, यह मालूम करना

दुपहर के दो बजे। भारतीय ढंग के भोजन परोसने का काम मैंने
ने अभी अभी पूरा किया है। दो दिन की मुसाफ़िरी के लिए जितना भो-
था उतना—रोटी, साग, नीबू का अचार, फल और पीसे हुए बदाम

लोगों ने अपने साथ शुरू से ही ले लिया था। देवदास ने कहा,--"इंग्लैण्ड तो हमने कुछ देख डाला; अब यहाँ फ्रांस में रहकर भी कुछ इस देश का परिचय पाया जाय तो कितना अच्छा हो! आपका फ्रेंच लोगों के प्रति क्या दृष्टिकोण है? ज़रा बतायेंगी?"

मैंने कहा,—'इन दो देशों के स्वभाव में दो ध्रुवों का-सा अन्तर है।'

"आप एक-दूसरे के इतने नजदीक होते हुए इतने दूर हैं; यह आश्चर्य-जनक है!!"

मैंने कहा,—'हमें ईश्वर ने इतना समीप रखा है, इसीलिए शायद हम लोगों के बीच का अन्तर आप लोगों को इतना अधिक नज़र आता होगा। हम दोनों दो आर्य-परिवार की अलग अलग दो शाखाओं के हैं। ये लोग जितने अंश में हम लोगों के पितृ-पक्ष के हैं, उतने तो शायद आप लोग भी नहीं हैं?'

देवदास,—'परन्तु यह इतना फ़र्क हुआ कैसे?' देवदास को भी अपने पिता की तरह, बात पूरी-पूरी समझ में न आये तब तक उसे छोड़ने की आदत नहीं है। जब किसी मनुष्य ने बहुत ही सादगी से कोई बात कह दी हो या कोई सिद्धान्त ही कह दिया हो, जो स्थायी भी हो सकता है और अस्थायी भी, तो उस समय सामने-वाले ऐसे मनुष्य की आदत कहनेवाले को कभी-कभी असमंजस में डाल देती है।

इसलिए मैंने जो वाक्य सहज स्वभाव से कह डाला था, उसके लिए मुझे कारण खोजने पड़े। इन दो देशों का सैकड़ों वर्ष पुराना विरोध, इंग्लैण्ड की खाड़ी के पार करते ही लोगों की स्वभाव-सम्बन्धी भिन्नता, फ्रेंच बन्दरगाह बुलों पर मचनेवाला शोर-शराबा, इसी शोर से बात का बतंगड़ बन जाता है; धक्का-मुक्की, हाथ-पैर का पट-कना, गले फाड़-फाड़कर क़सम खाने की आदत और ब्रिटिश-जहाज़ की सीढ़ियों पर चढ़ते हुए मजदूरों के शोर-शराबे का वर्णन कर मैंने कुछ भेद उन्हें बताये। एक तरफ यह है और दूसरी ओर अंग्रेज खलासी और रेल्वे मजदूरों का शान्ति और स्वस्थता से आना-जाना, ये भेद हैं जो ध्यान देने योग्य हैं। इसके बाद उत्साहित होकर मैंने कहा,—'इनका स्वदेश-प्रेम देखिए। वे अपने स्वदेश-प्रेम के बारे में, गंभीर, उन्नतिशील और उसे पवित्र चीज मानते हैं। वे अपने सरकारी अधिकारियों

मजिस्ट्रेटों का ख़ूब आदर करते हैं, और सच्चे दिल से राज्य के नियमों का पालन करते हैं।'

महादेवदास,—'इसमें कोई शक नहीं। ऐसे राज-नियमों की बाबत में तो लन्दन के मेयर का जलसा, अंग्रेजों की भोजन-पार्टी, बकिंघम महल का आदि उनको याद आ रहा था।

उनकी अधूरी बात को लेकर मैंने कहा,—'हाँ, ज़रूर। हम लोग ये सब आकर देखते ज़रूर हैं; पर रणभेरी और लाल पोशाक के सामने हम लोग अपने को नहीं भूलते और इस बात का हमेशा ख़्याल रखते हैं कि हम अपने आपे से बाहर न हो जायँ।

दोपहर साढ़े तीन बजे। पेरिस का स्टेशन आ गया। ऐसा महसूस होता था कि हम रूसी-विप्लव, या बेस्टिल के पतन की फ़िल्मों के भयंकर दृश्यों में खड़े हैं, गाड़ी के बड़े-बड़े डिब्बे, लोहे और काँच के बड़े-बड़े ऊँचे ढेर, आग्रह भरी ... नी देते हुए खींचनेवाले मनुष्यों की आवाज़, राक्षसी यंत्रों पर ... जैसे ही मालूम होनेवाले आदमियों का दृश्य देखकर ऐसा मालूम होता था मानों ये किसी बड़ी भारी फ़िल्म की आधुनिक ढंग की रचनाएँ हों। और इन ... बनावटी प्रकाश तो इन दृश्यों को और भी भयंकर बना रहा था।

बुलों बन्दरगाह पर हमारे उतरते ही लोगों का समूह तो जमा हो गया था। मालूम होता था कि फ्रेंच जनता के असली नमूनेदार दाढ़ी और ... के स्टेशन-मास्टर ने पुलिस को इस जन-समूह पर नियंत्रण रखने का अधिकार दे दिया था। इसलिए लोगों की शोभा और शान्ति से जहाज़ से ... पहुँचा दिया गया था।

परन्तु पेरिस में तो जन-समूह ने गांधीजी का स्वागत करने के लिए उन्हें घेर लिया। प्लेटफार्म पर मानव-समूह जमा हो गया। लोग एंजिनों और गाड़ी के डिब्बों की छतों पर चढ़ गये। सीढ़ी और स्टेशन की छत भी न बची। रेलवे के ... तो हँसते ही रहते हैं—सामान्यतः हम लोग जब किसी को सलाम देते हैं ... मुक़ाबले में जब ये लोग एक तिरस्कार भरी नज़र फेंकते हैं, उन लोगों ...

लोग बिल्कुल भिन्न नज़र आते हैं। भूरी पोशाकवाले मज़दूरों को मामूली बाँसों द्वारा बनाई हुई सीढ़ी पर जगह-जगह खड़ा किया गया था, वे लोग अपने सिर पर सीमेन्ट आदि का मसाला लिये हुए थे। फोटोग्राफर सभी दिशाओं में फोटो लेने के लिए प्रकाश फेंक रहे थे, और इस तीक्ष्ण प्रकाश के कारण स्टेशन की विशालता और नीरसता में वृद्धि हो रही थी। मालूम हो रहा था कि यह प्रसंग बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। मैं तो घिसटती जाती हूँ और शोर मचाते हुए पेरिस-वासियों के बीच कुचलती-सी जा रही हूँ। मैं सार्जण्ट एवन्स के पीछे-पीछे चलने का प्रयत्न कर रही हूँ, उनकी चौड़ी पीठ के कारण रास्ता मिलता जाता है। पुलिस तो इस छोटे-मोटे युद्ध से बिल्कुल अलग ही है। इनके गौरव और अनुशासन का आधार तो उनके मुखिया पर निर्धारित करता होगा। वह मुखिया जब इन्हें नज़र आये तभी तो इनकी धाक जमे न! परन्तु यहाँ तो सब ओर नर-मुण्ड ही नर-मुण्ड हैं।

इस मानव-समुद्र के अन्दर गांधीजी चलते जाते हैं। वे सदा की तरह शान्त और प्रसन्न हैं, पर वे अपने साथियों से बिल्कुल अलग हो गये हैं। अखबार-नवीस और उत्साही लोग उनके और पुलिस के बीच व्यवधान बनाये हुए हैं। केमरे और सिनेमा की गाड़ियों के लिए लगाये गये रस्से ज्यों के त्यों प्लेटफार्म पर पड़े हैं। हमें इतने ज्यादा विघ्नों को पार करके रास्ता ढूँढ़ना पड़ता था कि सार्जण्ट एवन्स ने इनसे तंग आकर अन्तर्राष्ट्रीय विवेक को भंग करने का बीड़ा उठा लिया। और अपने मोहक स्मित-हास्य की वजह से, रास्ता तय कर, गांधीजी के पास जाकर हमेशा की अपनी जगह पर कायम हो गये।

दुपहर के चार बजे। हमारे गुज़रते ही स्टेशन के लोहे के दरवाजे एक बड़े भारी आवाज़ के साथ बन्द हो जाते हैं और जनता की भीड़ वहीं रुक जाती है। हमें थोड़ी देर का विश्राम बहुत ही अच्छा लगता है, और हम लोगों ने आराम की साँस ली। इतने में तो सामने से एक और जन-समूह हमारे स्वागत के लिए हम पर टूट पड़ता है। कुछ मेहरबान लोग जो हमें एक आलीशान होटल में ले जाना चाहते थे, वे इन्हें रोकते हैं। इसी होटल में पेरिस के भारतीयों ने एक स्वागत-समारंभ की आयोजना की थी।

चार बज गये। होटल का विशाल हाल छोटी-छोटी मेजों से भर गया
ी-बड़ी चाँदी की चायदानियों से अपूर्व शान से कपों में चाय ढाली जा रही
क ऊँची मेज के आगे गांधीजी के साथ दस-बारह आदमी बैठे हैं और
के सत्कार-सम्बन्धी लम्बे-लम्बे भाषण दे रहे हैं। इनमें एक मशहूर
हैं। वे तो कविता और गीत भी गा रहे हैं। सत्कार के भाषणों के बा
आँखों की रोशनी कम हो गई है ऐसी एक अत्यन्त वृद्ध, ऊँची महिला
और भव्य मूर्त्ति खड़ी होती है, और मानों आशीर्वादस्वरूप 'वन्दे मातरम्'
गीत गाती है।

सके बाद परिचय की लम्बी रस्म अदा होती है। और गांधीजी अपना भाष
रते हैं। उनके शुरू के शब्द सुनते ही सारे हाल में सन्तोष और शान्ति
फैल जाती है।

"क्या खूब! कितने दिनों बाद हिन्दी सुनने को मिली।" मेरे नज़दीक बै
ाम्मण बिल्कुल धीरे से बोला।

शाम के छह बज गये। गांधीजी रात को मादाम गीज के यहाँ रहनेवाले
ाने ढंग का, सुन्दर बंगले का एक छोटा-सा ब्लॉक है। ऐसा डर लगता
ाले लोगों की भीड़ से इनकी दीवारें और ताले टूट जायँगे। बँगले की
सीढ़ी है, उस पर तो इतनी भीड़ थी कि तिल रखने की जगह भी नहीं
ट से बाहर का शोर-शराबा सुनाई दे रहा था। लोग अन्दर आने के ि
य-विनय कर रहे थे। और दरवाजे का कुन्दा बार-बार खड़खड़ाते
र में द्वारपाल एक व्यक्ति का नाम पहचानता है और धीरे से दरवाजा खो
एक कोध से काँपता हुआ लथर-पथर आदमी तीर की तरह अन्दर आता
कोई थका और निराश अपराधी आश्रय पा गया हो। मैं देखती रही।
न्तुक को अब यह महसूस होने लगा कि वह भी एक भाग्यशाली पु
ए अब वह बाहर की भीड़ के प्रति अपना तिरस्कार और गुस्सा दिखा
और जितनी बार दरवाजा ठेलने की आवाज़ आती थी उतनी बार कह
था,—'खोलना नहीं, किसी को अन्दर न आने देना।' बाहर की

को देखकर फोन करके पुलिस को बुलाया जाता है, परन्तु इसके आने पर भी परिस्थिति में ज़रा भी फ़र्क नहीं आता। आखिर में सार्जंट एवन्स पूछते हैं,—"मैं जाकर देखूँ, यदि कुछ हो सके तो ?"

द्वारपाल आभार मानकर स्वीकृति देता है।

सार्जंट एवन्स फ्रेंच भाषा नहीं जानते। पर उनका शरीर विशाल है और वे नाराज़ होकर अपने को खोते नहीं हैं। उनकी लाल मुख-मुद्रा पर हमेशा प्रसन्नता की हँसी विराजमान रहती थी। वे मनुष्यों की भीड़ को जिसमें जनता और पुलिस दोनों थी, सीढ़ी से नीचे आराम से उतार देते हैं। लम्बी गड़बड़ी के बाद एका-एक शान्ति का साम्राज्य हो जाता है और हम लोगों को विश्रान्ति मिलती है।

इसी बीच दीवानखाने में पेरिस के बुद्धिजीवियों की एक मण्डली जमा हो जाती है। इनकी संख्या इतनी ज्यादा है कि इनमें से आधों को तो जमीन पर बैठना पड़ा। कमरे की हवा दूषित हो जाती है और घबराहट पैदा होती है। आने वाले लोग लम्बे-लम्बे भाषण दे रहे थे। ठीक हवा न मिलने से गांधीजी को खाँसी आने लगी, परन्तु भाषणों की झड़ी तो लगी ही रही। आखिर में मुकर्रर किया हुआ एक घण्टे का समय खत्म होता है और लोगों को गांधीजी का भाषण सुनने और प्रश्नोत्तर करने का अवसर मिलता है। हम लोगों में से आठ को, रात की आठ बजे की आम सभा से पहले बगलवाले कमरे में जाकर भोजन कर लेना था। जाना तो हमें सिर्फ छह कदम ही था, परन्तु कमरे की भारी भीड़ के कारण इतना चलने में भी बहुत समय लग जाता है।

मेहमान बिखरने ही वाले होते हैं कि इतने में एक आदमी घर के एक खास कमरे के दरवाजे की ओर बढ़ता है। मैं उसे रोकती हूँ। अपनी इच्छा पूरी न होने से वह लाल-पीला हो जाता है और मुझे कहता है कि मैं अमुक अखबार का प्रतिनिधि हूँ। मुझ पर इसका जरा भी असर नहीं होता। मेरे मन में तो यही विचार घर किये हुए था कि यह झूठे नाम से प्रवेश कर रहा है। मैं उसके और दरवाजे के बीच रास्ता रोककर खड़ी हो जाती हूँ।

मन में तिरस्कार की भावना जाग्रत हुई और मेरा अंग्रेजी खून खौल

उठा। मैंने कहना शुरू किया,—'आपको गांधीजी का ज़रा भी ख्याल उन्होंने दो सभाओं में हाजिरी दी और दो में और देनेवाले हैं। ग्यारह चार बजे तक के समय में ये काम कुछ कम हैं क्या? आम-सभा पूरी आना। उस समय एक घंटा सिर्फ अखबारनवीसों के लिए है।'

वह बोला,—"दो मिनिट, सिर्फ दो मिनिट।"

मैं नाराज़ हुई,—'देखते नहीं; यहां, हर एक को दो ही । जरा अक्ल से तो काम लीजिए।'

वह बोला,—'मैं इस परिवार का परिचित हूं।' यह दूसरा झूठ था

"मैं बारह अखबारों का प्रतिनिधि हूँ।" उसने बात जारी रखी तथा विलायत के अनेक दैनिक अखबारों के नाम गिना गया।

'तो आप उन्हें रात को मिल सकेंगे।'

'परन्तु मुझे तो उनसे खास काम है। मैंने चार सवाल तैयार जवाब मैं उनसे चाहता हूं।'

मैं ज़रा नरम हुई,—"गांधीजी को सवाल अच्छे लगते हैं। ये मुझे दें। मैं इन सवालों का जवाब रात-रात में उनसे लिखवा लूंगी

"ओ हो! लेकिन सवाल तो मैंने अभी तक लिखे नहीं हैं। बैठकर लिख लेने दो?"

परन्तु अब मैंने अहिंसा छोड़ दी। वास्तव में देखा जाय विचार दोनों में मनुष्य को अहिंसा का पालन करना चाहिए। एक मज़बूत खूंटी समझकर उससे चिपटी रही। मैं तंग आ ग कँपकपी आने लगी। हमने अपने इन मान्य अतिथि की तक लगातार सेवा-शुश्रूषा की और उनके स्वास्थ्य को पेरिस में तो उनका बुरा हाल हो रहा है। और यहां एक नवीस उनके कुटुम्ब का मित्र होने का दावा कर रहा है और के लिए शोर मचा रहा है। पर उसने अभी तक इन सवाल तकलीफ नहीं की।

वह मेरी ओर टकटकी लगाकर देखता रहा और धमकी देते हुए बोला,—'अगर उन्होंने मुझसे मुलाक़ात न की तो मैं उनकी बुरी हालत कर दूँगा। मैं उन्हें नुक़सान पहुँचा सकता हूँ।'

मैं उसे जब बाहर छोड़कर आई तो मुझे ऐसा लग रहा था मानों मेरे चेहरे पर एक खूनी-के-से भाव हों। दूसरे दिन उसके संघ के पत्रों में मेरे और उसके मिज़ाज़ के नमूने ज़ाहिर होते हैं। गांधीजी के दृश्य का वर्णन करने में तो ये महाशय विन्स्टन चर्चिल से भी आगे बढ़ गये थे। गांधीजी का वर्णन करने में इन्होंने "बड़े विदूषक" और "खों-खों करता हुआ, थका-मांदा आदमी।" ऐसे शब्दों का प्रयोग किया था।

रात के आठ बज गये। एक विशाल सिनेमा थियेटर है। सभा के समय से पहले ही वहां लोगों की ख़ूब भीड़ जमा हो जाती है। टिकिटों के लिए बड़ी-बड़ी रकमें आ रही थीं, उन्हें लौटाया जा रहा था। हमारे लिए जो जगह रखी गई थी वहां तक पहुँचने के लिए हमें धक्का-मुक्की करनी पड़ी। लोगों में अपूर्व उत्साह है। सभागृह की मुख्य-मुख्य जगहों में सिनेमा के सरंजाम रखे गये हैं, परन्तु इन जगहों पर तो गांधीजी बोलनेवाले नहीं हैं, इसी को लेकर सभा के व्यवस्थापकों और इन सिनेमावालों में झगड़ा हो रहा है। बालिकाओं का एक स्वयंसेवक दल भीड़ को शान्त करने की कोशिश करता है। गरमी की तो आप बात ही न करें, इसका उपाय कौन कर सकता है? इसी कारण आदमियों की गरदन लचक रही है, और मुँह तो पसीने से तर-बतर हो रहे हैं। लोगों की भावनाएँ बढ़ती जाती हैं, और वह इसलिए कि थोड़े दिन पहले शहर में, राजा के राज्य में विश्वास करनेवाले लोगों ने सभाएँ की थीं और जलूस भी निकाले थे। लोगों का जमघट न जाने क्यों भयानक लगता है। मुझे तो ऐसे जमघट का कभी अनुभव नहीं हुआ है। उनकी भावनाएँ इतनी उग्र थीं कि वे समुद्र की लहरों की तरह आगे-पीछे हिलकर अशान्त और प्रक्षुब्ध हो रही थीं।

ऐसी जनता का विक्षोभ पहले न जाने कितनी बार हुआ होगा? परन्तु आज का यह प्रसंग तो अनोखा ही था। आज तो व्यास-पीठ पर मेरे सामने नई से नई

क क्रांतिकारी बैठे हैं। वे शान्ति और अपनी आत्मा के दृढ़ विश्वास के संदेश दे रहे हैं कि सत्य और अहिंसा दुनिया में बड़ी-से-बड़ी और सक्रिय और इसी के द्वारा हम घमंडी सत्ता से मोर्चा ले सकते हैं।

के साढ़े दस बज जाते हैं। विशाल जनसमूह बिखर जाता है। और हम र-अपने ठहरने की जगह का रास्ता लेते हैं।

के साढ़े ग्यारह बजे जिस समय हम लोग जाने को तैयार होते हैं इसी ऱ फोटोग्राफर हमारे यहाँ आ जाते हैं। मुझसे प्रवेश की इजाज़त चाहते कहते हैं,—"हमें अन्दर आने की इजाज़त मिली हुई है।"

पूछा,—'किसकी ओर से।'

गेले,—'गांधीजी की ओर से।' वे सचमुच झूठ बोल रहे थे। इसलिए। आ गई। वे लोग निराश हो चले जाते हैं। परन्तु फिर रात को एक जाते हैं, और इतना शोर और गड़बड़ी करते हैं कि मादम गौज़ के पड़ो- अपनी नींद के हर्जाने का हज़ारों फ्रांकों का दावा उन पर कर दिया।

रे दिन स्टेशन पर मिलने की सूचना में थोड़ी गड़बड़ हुई। इसीलिए ऱ्फार्मपर पहुँची तो देखा कि हँसमुख चेहरावाला जनसमूह गांधीजी क हर लौट रहा था। साथ में पुलिस की एक टोली भी थी जो गांधीजी को पहुँचाकर निश्चिन्त-सी नज़र आ रही थी।

ा पासपोर्ट, मेरी टिकिट, मेरा सामान और मेरा भोजन सब कुछ मेरी मण्डल था और हमारी इस छोटी-सी मुसाफिरी में पैसे की तो कोई खास आवश्य ती नहीं; इसलिए मेरे पास विलायत के कुछ सिक्कों की रेज़गारी और कु सिवा और कुछ न था।

देश में मोटरवाले उचित भाड़े की अपेक्षा दुगुना ही माँगते हैं, ऐसी ... लोगों के साथ अन्तर्राष्ट्रीय स्नेह-भाव कैसे कायम किया जा सकता है ा परदेश के लोग स्नेहवश होकर हम लोगों के लिए निःस्वार्थ होकर स सुख-सुविधा कर देते हैं तो उनके प्रति हमारे मन में कितना प्रेम उ। । मैं गांधीजी की मण्डली में थी, इसलिए मुझे इस परिस्थिति में ज़रा

दिक्कत न हुई। मैं रात को जिन बहन के यहाँ सोई थी उनके साथ सुपरिन्टेण्डेण्ट के आफिस में गई, चुपचाप खड़ी रही (परभाषा जब न आती हो, तो यही रास्ता है) और अब क्या हो सकता है, इसका विचार भी अन्य लोगों पर छोड़ दिया। थोड़ी ही देर में मुझे एक हस्ताक्षरवाला कार्ड दिया गया और कहा गया कि अब पासपोर्ट, टिकिट अथवा रोकड़ा पैसा आदि किसी भी चीज की आवश्यकता नहीं है। मुझे कहा गया,—'आप जो दो-तीन घंटे बाद यहाँ आ जायेंगी तो दूसरी गाड़ी जो यहाँ से छूट रही है, उसमें आपको स्टेशन-मास्टर बिठा देगा। इस बीच गांधीजी को भी खबर पहुँचा दी जायगी, और आपको अपना पासपोर्ट रास्ते में कहीं मिल जायगा।' लोगों के समूह में एक भारतीय भाई थे। उनकी मेरे साथ किसी तरह की जान-पहचान नहीं थी। तो भी वे मेरे हाथ में कुछ पैसे रखकर चलते बने।

मैं आनन्द से एक और चक्कर लगा आई। दुबारा नाश्ता किया—फ्रांस में खाने-पीने का आनन्द तो हमेशा से है ही। और आखिर में खूब शोभा के साथ मुझे गाड़ी तक पहुँचाया गया। मुझे पहले दर्जे का डब्बा बताया गया, इस पर मैंने कहा,—'मेरी टिकट इस समय जहाँ कहीं भी हो, पर वह तीसरे दर्जे की है।' परन्तु इस बात की किसी ने परवाह ही नहीं की।

मेरा पासपोर्ट और टिकिट जिस गार्ड ने मुझे लारोश स्टेशन पर लाकर दिया था, स्टेशन मास्टर, जिसने अपने मददगारों को बुलाकर मेरी यात्रा जल्द पूरी करने में मदद की; और अत्यन्त मनमोहक अदबवाला वेटर, जिसने मुझे भोजन और अखबार ही नहीं अपितु मेरी फाउन्टेनपेन में स्याही भी भर दी—इन सब हितेच्छुओं और मददगारों को मैं कैसे भूल सकती हूँ?

बोलो फ्रान्स और फ्रान्स के लोगों की जय।

स्विट्ज़रलैण्ड में स्वागत

(१२)

स्विट्ज़रलैण्ड के विलनव गांव में हम लोग पांच दिन रहे। रोलां के दो बँगले हैं, वे भर गये; और हम लोग जो बाक़ी रहे, के एक होटल में रहे। हम जहां-जहां जाते थे वहां सभी जगह व या परदेशी लोगों के छोटे-छोटे समूह हमारे इन्तज़ार में खड़े ही हो ऐसा महसूस होता था कि ये लोग गाना गाने, वायलिन बजाने, गां देने या उनसे प्रश्न करने के लिए हमेशा आतुर रहते हैं।

एक बूढ़ा एक छोटे-से ब्लाकुअ में रहता था और वहीं ... और ठण्डे पेय पदार्थों को बेचा करता था। वह तो हमेशा गांधी- प्रतीक्षा ही किया करता। मैं जब वहां से गुज़रती तब वह मुझसे गुलदस्ता मैंने महात्माजी के लिए ही रख छोड़ा है, वहां से ... कर मेरे हाथों से इसे लेंगे तो मैं उन्हें अपने पक्षी भी दिखाऊँगा।'

एक बार अपने बारह फुट लम्बे चौरस बगीचे में ले जाकर उ... ने 'देखो बहन, ये पक्षी कितने हिलमिल गये हैं!' उसने सीटी बजानी में तो आस-पास के पेड़-पौधों से पक्षी उड़कर आये, और हमारे ... फड़काकर विविध रागों में गाने लगे।

बूढ़ा कहने लगा,—'मुझे विश्वास है, गांधीजी को ये पक्षी ज़...

गांव के बच्चों को जब मौक़ा मिलता तब वे अपने मान्य ... सुनाते; और ऐसे मौके उन्हें बहुत मिलते। एक सारंगीवाला सीढ़ियों पर चढ़कर खड़ा रहता, और गांधीजी जब नाश्ता ... बजाकर सुनाता। गांवों के सामूहिक गायनों में गानेवाले

जी-तोड़ मेहनत करके अच्छे-अच्छे राग सुनाये। एक-दो वार तो रोम्याँ रोलाँ ने स्वयं पियानो पर बिथोवेन के गीत गा-गाकर गांधीजी को समझाया और उन्हें मुग्ध किया।

बँगले के नीचे का एक विशाल चिलाँ नामक होटल का थोड़े समय से अंग्रेज़ तथा अमेरिकन बच्चों की पाठशाला के रूप में उपयोग होता था। जिस रात गांधीजी विलनव पहुँचे उसी रात वे वहाँ से गुज़रे, और 'रूल ब्रिटानिया' नामक गीत के स्वर उनके कानों में पड़े। दूसरे दिन पाठशाला के लड़के बगीचे के दरवाज़े के बाहर उनकी इन्तज़ार में खड़े रहे, और गांधीजी के गुज़रते ही उनके हस्ताक्षर माँगने लगे और उन्हें पाठशाला में पधारकर भाषण देने का निमंत्रण भी दिया।

यद्यपि रोलाँ और गांधीजी की मुलाक़ात पहले कभी न हुई थी। और वे एक-दूसरे के साथ एक ही भाषा में बात भी नहीं कर सकते थे। रोलाँ तो बड़े भारी साहित्य-सम्राट्, संगीत-शास्त्री, इतिहासकार, नाटककार, उपन्यासकार और एकान्त-सेवी साधुजन हैं। 'जान क्रिस्टोफ़र' नामक उनका जो महान उपन्यास है, उससे उनके व्यक्तित्व की कुंजी ज़ाहिर होती है। और मैं मानती हूँ कि बिथोवेन के संगीत पर जो किताबें इन्होंने लिखी हैं उनकी दुनिया में बहुत बड़ी कीमत है। फ्रांस देश के निवासी ये महापुरुष तो विचारक और दूरदर्शी ऋषि, और भविष्य जाननेवाले भी थे, इसी लिए गतमहायुद्ध के समय इनके लिए फ्रांस में रहना बहुत मुश्किल हो गया था। 'युद्ध के पार' (एबव दी बैटिल) नामक उपन्यास इन्होंने लिखा था। इसका ध्येय मित्र-राष्ट्रों ने जो ध्येय युद्ध के लिए ज़ाहिर किये थे या गुप्त रखे थे, उससे मेल नहीं खाता था। इसीलिए इन्हें फ्रांस छोड़ना पड़ा था और स्विट्ज़रलैण्ड को अपना निवासस्थान बनाना पड़ा था। इन्होंने 'महात्मा गांधी' नामक पुस्तक लिखी, जिससे जहाँ-जहाँ मनुष्य रहते हैं वहाँ-वहाँ गांधीजी का नाम और उनका काम पहुँच गया। यह १९२२ की बात है। तभी से इन दो महापुरुषों के बीच मित्रता स्थापित हुई। ये लोग अनेक बार परस्पर पत्र-व्यवहार भी करते रहते हैं। पुनः परस्पर मिलने की अभिलाषा दोनों में बहुत थी।

दुर्भाग्य-वश रोलाँ अपंग हैं, अतः वे अपने सोने के कमरे में

त्कार कर सकें। उन्होंने बहुत देर तक बातचीत की, इसके बाद हम
अन्दर बुलाकर उन्होंने हमारा भी यजमान के साथ परिचय कराया। मुझे
उस समय हम लोग इन दो महापुरुषों की खुशी का कुछ अनुभव कर
इसका असर हम लोगों के हृदय पर भी हुआ। छोटे-से कमरे में सूर्य
खूब अच्छी तरह आ रहा था। उसकी दीवारों का जो भाग पुस्तकों की
ने बचा हुआ था, वहाँ रोलाँ को जिन व्यक्तियों के प्रति श्रद्धा है,
के सिरों की शिल्पाकृतियाँ रखी हुई हैं। वे व्यक्ति ये हैं,—गेटे, वि
गोर्की, गांधीजी, रवीन्द्रनाथ और आइन्स्टीन।

दोनों बँगलों के एक-एक कमरे में जत्था-बन्द किताबें हैं। रात को
कठिन हो जाता था, क्योंकि मेरे दरवाजे के पास की आल्मारी में
उपन्यास सजाये हुए थे। वर्जीनिया वल्फ के 'आरलेण्डो' नामक
अनुवाद के पन्ने मैं पलटने लगी, इसलिए मुझे कपड़े उतारने में बहुत
'आसनों के अभ्यास की सामग्री' नामक मासिक के तीन वर्ष की
सामने पड़ी थीं, परन्तु वे घृणा पैदा करनेवाले लेख नींद
दिन शान्ति से निकलने के लिए मैंने शौचालय में से एक
गांधीजी थोड़े समय से इस किताब को अपने साथ ला रहे थे।
'दि लिटिल बाइबल।' छोटी-सी सुन्दर छपाईवाली किताब है
अच्छे-से-अच्छे उद्धरण दिये हैं। मैंने इसे खोला और एक अच्छी
इस तरह पढ़ते-पढ़ते न जाने मुझे कब नींद आ गई। रात को
तो जल रही थी। मैंने बटन दबाकर बिजली को बुझाया।
पहाड़ों के पीछे निकले हुए तारे खिड़कियों में से झांक रहे थे
आ गई।

सुबह साढ़े पांच बजे मीरा बहन ने मुझे जगाया। मैंने
की किताब फिर शौचालय में रख दी। नीचे के एक
बिछाकर महादेव, प्यारेलाल और देवदास सो रहे थे; उनको
— · · धानी से मैं नीचे उतरी।

परन्तु मैंने अगले कमरों में से पुरुषों की आवाज़ सुनी। एडवर्ड प्रीवा, पीयर सेरेसोल को लेकर गांधीजी के साथ सुबह घूमने के लिये आए थे। इन्हें देखकर मुझे अत्यन्त आनन्द हुआ। सितम्बर में जब गांधीजी मार्सेल्सके बन्दरगाह पर उतरे थे तभी से सेरेसोल से मिलना चाहते थे। उनकी आतुरता का एक विशेष कारण था। उन्हें किसी ने कहा था,—'सेरेसोल को तो आपको ढूँढ़ निकालना होगा, क्योंकि वे कभी किसी के सामने नहीं आते।' सेरे सोल उस समय वेल्स में थे, और स्विट्ज़रलैण्ड जाने की तैयारी में थे। उन्हें उसी समय तार दिया गया था, तो भी लन्दन होकर किंग्सली हाल नहीं आये थे।

इस लोकनायक ने उस समय ऐसा जवाब दिया था,—'परन्तु मैं उनका अमूल्य समय क्यों लूँ? उन्हें तो इससे भी महत्व के और भी काम करने हैं।"

इस समय भी विल्नव और सेरेसोल के निवासस्थान में थोड़े ही मीलों का फ़ासला था। और सुबह घूमने जाने की तो हर किसी को छूट थी; तो भी उनके मित्र प्रीवा उन्हें घसीटकर यहाँ ले आये थे, ऐसा कहा जाय तो अत्युक्ति न होगी। इनके शान्त, निरन्तर और कुशल सेवा-कार्य के मुकाबले में हमारा क्षुद्र अहङ्कार और अभिमान-भरे प्रलाप में कितना मिथ्याडम्बर भरा हुआ है! स्विट्ज़रलैण्ड के पुराने-से-पुराने अमीरी कुटुम्बों में से पीयर का जन्म हुआ था। ये सख्त सैनिक अनुशासन और अमीरी वातावरण में पले थे। इनके विषय में लोग यह उम्मीद कर रहे थे कि ये किसी बड़े भारी सरकारी ओहदे को सम्भालेंगे। परन्तु गत महायुद्ध में उन्होंने पुराने चोले को त्यागकर नया ही रास्ता अख़्तियार किया।

घूमने में हम लोग पांच थे। तारों के प्रकाश में हम लोगों ने बगीचे, खेत और टेढ़ी-मेढ़ी गलियों को पार किया। एक झरने को भी पार किया और पहाड़ के पथरीले रास्ते पर चले।

गांधीजी ने कहा,—'मि० सेरेसोल, मुझे अपनी प्रवृत्तियों को विशद रूप से बताओ, मैंने उनके बारे में कुछ सुना है।

पीयर ने अपनी आप-बीती कही। गत महायुद्ध में एक ग्रामीण पाठशाला के शिक्षक ने ईसा-मसीह के नाम पर तीन महीने तक सैनिकरूप में काम करने से

कर दिया था। परिणामस्वरूप पहले उसे पागलखाने में और बाद में
में डाल दिया गया। इसके बाद पीयर ने स्वयं यही रास्ता अख्तियार
कितने उनके अनुयायी हुए। आज भी ये लोग सेना की नौकरी से
हैं और उनके लिए जेल जाते हैं। इन सब लोगों को सेवा तो करनी
नका रास्ता दूसरा है—वे नागरिकों के नाते सेवा करते हैं। संसार के
गग में किसी भी देश के मनुष्य दुःख और ज़ुल्म से यदि कष्ट पाते हों
लोगों का कर्तव्य है कि उन ज़िन्दा और मुसीबतज़दा लोगों की ये सेवा
ोल ने अपनी अन्तर्राष्ट्रीय-सेवा सेना का जिक्र किया। इस सेना में
न हैं, स्विस हैं और अंग्रेज भी हैं। वे स्वेच्छा से सैनिक-अनुशासन से
न अनुशासनों का पालन कर हर वर्ष महीनों तक सेवा का काम करते
समय आस्ट्रेलिया में वर्फ के तूफान के कारण एक समूचा गाँव गर्क हो
सकी पुनर्रचना में इन लोगों ने मदद की थी और हर वर्ष वे कुछ-न-कु
रचनात्मक कार्य करते ही रहते हैं। इस साल ग्रीष्म ऋतु में इन लोगों ने
क्षिण भाग की एक जगह पर काम किया और बेकार खान के मजदूरों
आस-पास के तमाम क्षेत्र में एक नई आशा की लहर फैला दी थी।
ाई कर्नल सेरेसोल के अधीन ये लोग सैनिक अनुशासन का अभ्यास भी
ल्ली सैनिक नौकरी के बजाय, ये लोग जो यह सेवा कर रहे हैं, उसे
ान्य करे ऐसी वे कोशिश कर रहे हैं। इन सेवाओं को सरकार
इनके लिए हर साल स्विस पार्लमेण्ट में एक बिल भी रखा जाता है, और
तक एक चौथाई सदस्यों ने अपनी सहमति प्रकट की है।

गांधीजी जब इंग्लैंड में थे तभी उन्होंने ये बातें सुनी थीं। तो भी
ने सब बातें खूब ध्यान से सुनीं। लन्दन में सुबह घूमते समय में जब
मुलाकात, यो महल्ले के लोगों के जीवन के विषय में, अथवा युद्ध-समय
अहिंसावादी अनुभवों के विषय में या स्वेच्छा से गरीबों के लिये किये परिश्र
में बात करती, तब गांधीजी ऐसे प्रसंगों को छोड़कर स्वयं ही अधिक
प्रश्न करते। मैं जब कभी बोलती थी, तब वे बीच में कभी टोकते नहीं

यह उनका अतिथि-विषयक विवेक होगा। परन्तु मैं समझती हूँ कि उन्हें मेरी बातें सुनकर आनन्द होता होगा। मैं जब बोलती तो एक लम्बा भाषण ही दे डालती, क्योंकि मैं यह निश्चय कर चुकी थी कि उन्हें बोलने का अधिक श्रम न करने दूँगी। परन्तु हमेशा वे ध्यान देकर सुनते, क्योंकि जब कभी मैं किसी स्त्री की बात दुबारा कहती तो वे झट कह उठते,—'मुझे याद है, मुझे याद है, तुमने पहले भी इसके विषय में मुझसे बात की थी।'

मैं समझती हूँ, पीयर की पाँच मिनट की बात के बाद गांधीजी बीच में बोले। पीयर की सेनाओं की अनेक क्रियाशील प्रवृत्तियों के कारण जो सवाल उठ खड़े हुए थे उनके बारे में उन्हें चर्चा करनी थी।

गांधीजी,—"अब मैं आपके सामने कुछ बातें रखूँ? आपको अब यह लड़ाई अधिक समय तक नहीं चलानी चाहिए। ज़रूरी सैनिक नौकरी के लिए जब सरकार बुलावे तभी सिर्फ़ वर्ष में एक ही बार आप लोगों को महायुद्ध का विरोध क्यों करना चाहिए? आप लोगों की ज़िन्दगी का एक-एक दिन युद्ध से रँगा हुआ है। तुम लोग जब तक राज्य से सुख-सहूलियत की माँग करते हो तब तक वे लोग तुम्हें रोक रखते हैं।"

पीयर को अपने विषय में बात करना तो अच्छा ही न लगता था। इसलिए जब गांधीजी बोलने लगे तो उन्हें शान्ति मिली। इसके बाद कभी आश्चर्योद्गार, संक्षिप्त प्रश्न या सम्मति-सूचक वाक्य के सिवा वे शायद ही कुछ बोले हों।

गांधीजी,—"१९१४ में मेरे विचार ऐसे न थे। उस समय तो मुझे नागरिक के नाते सभी कर्तव्यों को पूरा करना था। इसलिए मैंने बिना शर्त ही ब्रिटिश-सरकार के चरणों में अपनी सेवा समर्पित कर दी। मैं उस समय समझता था कि ब्रिटिश सरकार मेरे देश को ज़ुल्म से बचा रही है; इसलिए मैं समझता था कि मुझे भी एक अंग्रेज नागरिक की तरह पूरी-पूरी मदद करनी चाहिए। मुझे रेडक्रास का काम सौंपा गया। मैंने मन में कहा,—'यह बहुत ही अच्छा हुआ।' क्योंकि मैं हिंसा नहीं करना चाहता था। पर इतने ही से मैंने अपनी आत्मा को फुसलाया नहीं। रेडक्रास के काम में हिंसा कम है, ऐसी डींग भी मैं नहीं हांक सकता था। लड़ाई के समय में

भी तो वही परिणाम होता है; क्योंकि इसी की बदौलत तो दूसरे मनुष्य के लिए तैयार होते हैं। इन लोगों ने मुझे बन्दूक भी दी। यदि मुझे की तालीम दी गई होती तो मैं उसका उपयोग भी करता। मैं ज़रूर ।। हाँ, अगर बन्दूक चलाते-चलाते मेरे अंग ही काँप जाते तो बात मैं जब कभी भी अपने जीवन में कोई बुरा काम करने गया हूँ, तब हुआ है।

'मैंने उस समय यह मान लिया था कि लड़ाई में हृदय से मदद देना ही स्वतंत्रता-प्राप्ति का सच्चा रास्ता है। इसके पहले जुलुओं का बलवा हु नके प्रति मेरी सहानुभूति थी। मुझे उनकी मदद करने में बहुत ही आन पर उस समय मेरे अन्दर इतनी ताक़त नहीं थी कि मैं उनकी मदद । न मुझमें बल था, न नियंत्रण और न पूरा-पूरा अनुभव ही। मुझे उ रने का कोई रास्ता नज़र नहीं आया। मेरे पास उन्हें देने के लिए को भी नहीं था। मैं क्या कर सकता हूँ? मैंने विचार किया कि मैं ब्रिटिश-राज शामिल होकर उसे मदद करूँ और इस प्रकार राजतंत्र की कमियों को मैं प्रयत्न कर सकूँगा। मैंने वहाँ की सरकार को अपनी सेवा समर्पित की यलों को उठा ले जाने का काम सौंपा गया। यह तो मेरे अनुकूल कार्य था सोच रहा था कि मुझे घायल जुलुओं की सेवा का अवसर मिले तो वह ।। सेनाओं के प्रमुख डाक्टरी अधिकारी में कुछ मानवता थी। इसलिए मैं ने कहा कि मुझे औरों की अपेक्षा घायल जुलुओं की सेवा करना अधिक लगेगा।' तब वे बोले,—"इसे ही तो प्रार्थना का जवाब कहा जाता है न।"

थी कि कुछ कैदियों को पीटा गया था और उनके घावों से पीब निकल गोरे तो उनकी सेवा करने को तैयार ही नहीं थे। इसलिए मैंने ही उनकी सेवा की। इन्हें सींखचेवाली कोठरियों में बन्द रखा जाता था। उनके मरहम-पट्टी जब हम लोग करते थे, तब गोरे सैनिक देखने आते थे और उन गों की सेवा-शुश्रूषा करने के लिये वे हम पर कटाक्ष करते और हँसते थे। वे लों पर गालियों और धमकियों की बौछार करते। 'हम लोगों को तुम लोग

मरने क्यों नहीं देते ? विद्रोहियो ! दुष्ट नीग्रो !' यह विद्रोह जिस रीति से दबा दिया गया वह रीति भयानक थी। सशस्त्र सैनिक निःशस्त्र लोगों पर टूट पड़ते। यह देखकर मुझे सबक हासिल करना चाहिए था। इस सबके होते हुए भी मैंने ब्रिटिश राज-तंत्र में रहने की पूरी-पूरी कोशिश की। मैंने राज्य के अन्दर रहकर अपने आदर्शों को अमल में लाने की कोशिश की, इससे कुछ भी न हुआ। परन्तु इन प्रयत्नों से मैंने बहुत कुछ सीखा। दक्षिण-अफ्रिका में सरकार की सेवा करने के बाद भी मैं जुलुओं के प्रति उनके खराब व्यवहार को सुधार न सका। इसके अलावा गत महायुद्ध के दरमियान में राज्य की सेवा करने के अपने कर्तव्य को ध्यान में रख ब्रिटिश-साम्राज्य की सेवा करता रहा। और सरकार ने मुझे जो काम बताया वही मैं करता रहा, तो भी उस युद्ध के अन्त में मैं अपने देश की स्वतंत्रता हासिल न कर सका। इसलिए उसके बाद में साम्राज्य से अधिक सहयोग न कर सका।"

पीयर ने कहा,—"गांधी, जब राज्य या सरकार विदेशी हो तो मैं ये बातें समझ सकता हूँ। परन्तु इस यूरोप में तो हमारी ऐसी स्थिति नहीं है। परदेशी-सरकार के सामने आदमी जूझे और लड़े तो यह तो ठीक और स्वाभाविक ही है। पर जहां सरकार अपनी खुद की हो ; और हम लोग यह भी जानते हों कि भले ही सरकार खराब क्यों न हो, वह तो अपने देशवासियों के सैकड़ों वर्षों के बलिदान और धैर्यपूर्वक किये गये अनेक प्रयत्नों का फल है। और पीढ़ी दर पीढ़ी ज्यों-ज्यों नया प्रकाश फैलता गया हो, त्यों-त्यों वह सरकार विकसित भी होती गई हो तब तो हालत दूसरी ही हो जाती है न।"

गांधीजी,—"राज्य की रचना ही इस प्रकार की होती है कि आदमी उसमें रहकर नया रास्ता निकाल ही नहीं सकता। वह राज-काज में जरा भी असर नहीं डाल सकता। तुम लोग बन्धन में जकड़े हुए हो। मैं तो तुम्हें राज्यतंत्र से बिलकुल अलग देखना चाहता हूँ। मैं चाहता हूँ, म्युरियल गरीब स्त्री-पुरुषों का ऐसा आन्दोलन खड़ा करे कि ये लोग सरकार की तरफ से मिलनेवाले पैसों को लेने से साफ़ इन्कार कर दें। वे स्वेच्छा से ही काम करने को तैयार हो जायँ, परन्तु मुफ्त पैसा न लें। धनी लोग गरीबों को कुछ दिन पैसे का लालच देकर उनके मन को बदल

। यही उनके लिए सबसे खराब चीज़ है। ऐसा सन्तोष तो बहुत ही र सुलभ है। वे लोग ऐसा सन्तोष पाकर उसी के आसरे पर बैठे रहते हैं -आराम और गरीबी के बीच का जो घोर अन्याय है, उसे वे भूल जाते मे स्वयं-सेवक-दलों द्वारा भोगा गया कष्ट कभी निष्फल नहीं जाता है हिंसा का ज़बरदस्त प्रभाव पड़ता है। वे सभी जगह बुलन्द आवाज़ से ही देंगे। लोगों को तब वास्तविक चीजों पर विचार करना पड़ेगा। प्रति, जो बिलकुल सही हैं, आज वे लोग लापरवाही करते हैं। वह कनी पड़ेगी। सारे और गरीब लोग जब किसी सत्कार्य के लिए कष्ट-स हैं तो उसका यही अर्थ होता है कि वे आत्म-शुद्धि कर रहे हैं; और आखिर विजय मिलकर ही रहती है।"

गीयर बहुत ही गंभीर आवाज़ में बोले,—"परन्तु गांधीजी, मैं समझता यूरोप के लोग आपके हिन्दुस्तान के लोगों से बिलकुल भिन्न होते हैं। कि वे ऐसे कामों के लिए शायद ही तैयार हों।"

बातचीत ज़रा रुकी। इसके बाद बहुत धीमे सौम्य स्वर में गांधीजी बोले, सेरेसोल, आपको विश्वास है कि लोग तैयार नहीं हैं?" यह कहते हुए पर इस आक्षेप के लिए खेद के चिह्न ज़रूर नज़र आ रहे थे।

सब लोग शान्त हो गये। गांधीजी के कथन में जो आवाहन था, उसे स हुए सेरेसोल ने कहा—"ओ हो! आपके कहने का आशय मैं समझ की बात ठीक है। हम लोग स्वयं ही निकम्मे हैं। हम लोगों में नेता है। आप यही कहना चाहते हैं न?"

गांधीजी पहले की भी ही धीमी आवाज़ में बोले,—"मि० सेरेसोल, मानना ही पड़ेगा कि यूरोप में मुझे वास्तविक नेता नहीं नज़र आये— ने यही मतलब था कि आधुनिक वातावरण के मुताबिक।"

गीयर,—"आपकी दृष्टि में इस ज़माने के नेताओं में कौन-से गुण होने चा

गांधीजी,—"चौबीसों घण्टे परमात्मा के साक्षात्कार।"

"और कोई यह पूछे कि 'ईश्वर से आप क्या समझते हैं।' तो?"

"तो मैं कहूँगा कि 'सत्य ही परमेश्वर है और अहिंसा उसकी प्राप्ति का साधन है।' नेता में आत्म-विजय की शक्ति पूरी-पूरी होनी चाहिए। क्रोध, भय और असत्य को तो उसे अपने जीवन से निकाल बाहर करना चाहिए। मनुष्य को शून्य की तरह हो जाना चाहिए। उसे जीभ के स्वादों को त्याग देना चाहिए। उससे भोग-विलास का आनन्द नहीं लिया जा सकता। ऐसी आत्म-शुद्धि से ही उसमें ताक़त आती है। यह शक्ति मनुष्य की अपनी नहीं होती है, अपितु ईश्वर-प्रदत्त होती है। मुझमें ताक़त कहाँ है? मेरी क्या बिसात है? पन्द्रह वर्ष का लड़का मुझे धक्का मारकर गिरा सकता है। मैं तो बहुत तुच्छ हूँ। परन्तु मैंने भय और वासना से मुक्ति पा ली है, इसलिए मैं जानता हूँ कि ईश्वर की क्या ताक़त है। मैं कहता हूँ कि आज अगर सारी दुनिया एक तरफ होकर यह कहे कि ईश्वर नहीं है, तो उन सबके मुक़ाबले में खड़ा होकर कहूँगा—'ईश्वर है'। मैं तो निरन्तर इस चमत्कार का दर्शन करता रहता हूँ।

"तुम्हारा धर्म अभी युवावस्था में है। ईसा मसीह ने एशिया से आती हुई एक लहर को पकड़ा और उसे सारी दुनिया को दिया। पश्चिम में इस लहर के साथ अनेक मिलावट हो गई है। तुमने इसके साथ जो राय-व्यवस्था जोड़ दी है, उसका इससे मेल नहीं खाता। इसीलिए मैं अपने को ईसाई नहीं कह सकता। क्योंकि तुम लोगों ने इस धर्म की आड़ में जो राज्य-व्यवस्था खड़ी की है, उसे मैं नहीं मानता। उस राजतन्त्र का आधार पशुबल है। उस राजतन्त्र के अन्दर घुसा हुआ जो भ्रम है, उसे दुनिया के सामने स्पष्ट कर देना हिन्दुस्तान के हिस्से पड़ा है। हिमालय पहाड़ की चढ़ाइयाँ हमारे ऋषियों के हड्डी के ढांचे से सफेद हो गई हैं। ये ऋषि ध्यान, अभ्यास और आत्म-शुद्धि में निमग्न हो गये थे। ये लोग सैकड़ों वर्षों से ईश्वर से उसके गूढ़ तत्त्व के सत्य को पाने के लिए अविरत कोशिश करते आये हैं; और वे हमसे कहते हैं 'सत्य ही परमेश्वर है, और अहिंसा उसकी प्राप्ति का उपाय है।'

"मैं यरवदा जेल में था, तब मैंने पूज्य-भावपूर्वक सभी धर्मों का अभ्यास किया। वास्तव में इस्लाम भी तो शान्ति का धर्म है। 'इस्लाम' शब्द का अर्थ

ा है। परन्तु वह भी अभी युवावस्था में है। मुहम्मद पैगम्बर एक ही साथ ा के लिए एकान्त में चले जाते थे, और ख़ुदा से अधिक सत्य की मां विनती करते थे। लौटकर उन्हें जो सत्य हासिल होता था, उसे दूसरें ने प्रकट करते थे। अनेक बार ख़ुदा उन्हें उनके सवालों का उत्तर नहीं दे . वे उमर की सलाह लेते थे। एकबार पैगम्बर साहब ने कहा,—'उमर, . ा दुश्मनों से लड़ें या सुलह करें?' उमर बोले,—'मैं क्या जानूं? ख़ुदा • पैगम्बर साहब बोले,—'बेवकूफ़! तुम क्या यह समझते हो कि मैंने ा मुझे यदि ख़ुदा ने जवाब दिया होता तो मैं तुमसे पूछता ही क्यों?"

तना अधिक बोलने के लिए दोपहर को मैंने गांधीजी को उलाहना दि ; उन्हें सुबह का समय याद आया और वे हँसे। "आज सुबह यूसने ा आनन्द आया? ऐसा अनुभव मैंने इससे पहले कभी नहीं किया। मेरे कुछ था, वह सब मैंने कह डाला। उस युवक ने मेरी वाणी को प्रे था। वह बहुत ही भला आदमी है।"

मैं हँसी,—"बापू! ऐसा आप नहीं कह सकते? वे बहुत ही कम बोले ही बीच में बोलने लगे थे। आप हमेशा ही ऐसा किया करते हैं।"

"नहीं, उसी ने मुझे प्रेरित किया। वे मौजूद थे, इसीलिए मैंने इतनी सब डालीं। मैंने जितने भी उत्तम आदमी देखे हैं, वे उनमें से एक हैं। मुझे बातों को अधिक सुनना नहीं पड़ता, मैं इसके बगैर ही आदमी की अ- ा का निर्णय कर सकता हूँ। कहा नहीं जा सकता कि हज़ारों मनुष्यों से ना पड़ता है, इसीलिए यह ऐसी आदत हो गई है।"

स्विट्ज़रलैण्ड में लोगों के बड़े-बड़े समूहों को गांधीजी का भाषण सुन ा मिला। लोसा की आम-सभा एक बड़े भारी चर्च में हुई थी। चर्च ने ाल घण्टे से लोगों को इस सभा की सूचना दी। रास्तों पर लोगों को ा हो गई और आना-जाना मुश्किल हो गया। परन्तु गांधीजी को तो प्रेम है, इसलिए उन्होंने मोटर में बैठने से साफ़ इन्कार कर दिया। स्थान तक ही चलकर जाना था, पर इतना चलने में भी काफ़ी देर हो

उनके चर्च में प्रवेश करते ही एक वायलिनवाले ने उनका स्वागत किया, और वह उनके आगे वायलिन बजाता-बजाता उन्हें व्यासपीठ तक ले गया; और इस समय सभी श्रोताओं ने खड़े होकर उनका स्वागत किया।

सभापति ने अपने भाषण में कहा,—"महात्मा गांधी! आप हमारे देश में पधारे हैं, इससे हमें अपार ख़ुशी हो रही है। हम आपको जवान भारत का नेता समझते हैं। आप ही भारत को स्वतंत्रता तक पहुँचा सके हैं। हम यूरोपवासी डरते हैं,—हमें अज्ञात वस्तुओं का डर है, गरीबी का भय है, जेल का डर है और डर है कष्ट-सहन का। परन्तु आप तो इन सभी चीज़ों का स्वागत करते हैं। आप इन्हें ख़ुशी से स्वीकार करते हैं। आप निडर हैं। हमें तो सिर्फ ईसा-मसीह का गिरिप्रवचन कण्ठाग्र है, आप उसे समझते हैं और उसके अनुसार करते हैं। हम लोग ईश्वर और शान्ति-सम्राट् ईसा के प्रति श्रद्धा रखते हैं, और आपके सामने नम्रता का अनुभव कर रहे हैं।"

उत्तर में गांधीजी ने कहा,—"हमने अपनी स्वराज्य-प्राप्ति के लिए जिन उपायों की आजमाइश की है, उनके बारे में आप कुछ जानना चाहते हैं। पराधीन देशों ने आज तक स्वतंत्र होने के लिए जिस तरह का शस्त्र-प्रयोग किया है, वह तो आज तक का इतिहास आप लोगों को बतायेगा। पर हम लोग जान-बूझकर अहिंसक साधनों को ही पकड़े हुए हैं। हमें महसूस होता है कि हम अपने ध्येय की तरफ आगे बढ़ रहे हैं। मैं जानता हूँ कि यह तो परीक्षा मात्र है। यह परीक्षा पूरी तरह सफल हुई है, ऐसा दावा मैं नहीं कर सकता। पर इतना तो मैं अवश्य कहूँगा कि उसे इतनी सफलता तो मिली ही है कि तुम लोग उसका अभ्यास करो। यह प्रयोग यदि सफल होगा तो यह समझा जायगा कि भारत ने विश्व-शान्ति में अपना इतना पार्ट अदा कर लिया है।

"मैंने जो बात पेरिस के लोगों को कही, वही आप लोगों को कहनी है। मैं देख रहा हूँ कि सारे पश्चिम का हृदय एक तरह से व्याकुल हो गया है। जिस सैनिक-भार के कारण इस समय यूरोप दर्द से कराह रहा है, उस बोझे से आप लोग भी थक गये हैं। अपने मानव-बन्धुओं के रक्त-प्रवाह की तैयारी देखकर आप

। घृणा और कँपकँपी होती है। गत युद्ध को जो 'महान्' विशेषण लगाया , वह गलत है। इस युद्ध ने आपको और सारी मानव-जाति को अनेक सबक दिये हैं। उसने आपको मनुष्य-स्वभाव के बारे में अनेक आश्चर्यजनक बातें दी हैं। आप लोगों ने यह भी स्पष्ट देखा कि इन युद्धों को जीतने के लि सा छल-कपट, झूठ और धोखेबाज़ी करने में किसी तरह की कमी न की गई ह करने में लोग उचित-अनुचित का भी ख्याल न करते थे। दुश्मन के नाश के लिए कोई भी साधन अनुचित नहीं प्रतीत होता था। ए र में ही आपके जवानों के दोस्त आपके कट्टर शत्रु बन गये, एक भी र न रहा और एक भी चीज सही-सलामत नहीं बची। पश्चिम के इस त -सुधार को जब तराज़ू में तोला गया तो वह अधूरा निकला।

"अब बहुत-से देशों की जनता गरीबी के किनारे तक पहुँच गई है। का प्रत्यक्ष और सीधा-सादा परिणाम है। पैसा और कूटनीति दोनों का दि गया है। हम लोग अब भी इन दोनों के इतने नज़दीक हैं कि इस विक परिणाम आँक नहीं सकते। और यह बुराई सिर्फ यूरोप की ही बात नहीं। यह एशिया में भी फैल गई है। प्रत्येक वस्तु इस समय हुई नजर आती है। भारत से और सिर्फ भारत से ही आशा का एक स हा है। भारत अहिंसा और सत्य से अपनी स्वतंत्रता पुनः प्राप्त क ा कर रहा है। गत ग्यारह वर्षों से वह इन आधार साधनों की हा है। इस शान्ति-मय आन्दोलन में हजारों स्त्री-पुरुषों ने भाग मनुष्य यदि खून का एक कतरा बहाये बिना अपनी छिनी हुई आजादी करने में सफल होंगे तो वह दुनिया के लिए एक बड़ा भारी सबक। लोग इस समय किसी ऐसी वस्तु की खोज में हैं, जिसे युद्ध की ।मैं यह कह सकता हूँ कि वह नैतिक चीज़ भारत का यह परी कती है।

"पूरे आत्मश्रद्धा से अभी इस बात को नहीं कहा जा सकता। परन्त ापसे यही प्रार्थना है कि आप यहाँ की परिस्थिति का गम्भीरता से

करें। निष्पक्षता से अभ्यास कर जब आप यह पूरी तरह समझ जायँ कि यह आन्दोलन प्रामाणिक है, तभी आप उसमें सहयोग दें, उससे पहले नहीं। आप लोग उस आन्दोलन के बारे में यूरोप तथा अन्य देशों में लोकमत तैयार कर सकते हैं। इस तरह यह एक अमोघास्त्र हो जायगा। अहिंसा का यह तरीका सम्पूर्णतः लोकमत पर आधारित है। और यह जगह-जगह दुःख से पीड़ित लोगों की आवाज़ है।

"दो आपस में लड़नेवाले देशों को यदि स्विट्ज़रलैण्ड से होकर गुज़रना होता तो वे देश स्विट्ज़रलैण्ड से भी लड़ते। परन्तु कोई विदेशी सेना दूसरे राज्य पर हमला करने के लिए स्विट्ज़रलैण्ड में से गुज़रना चाहे और तुम लोग उसे गुजरने दो तो यह तुम्हारी नामर्दी होगी। मैं यदि स्विट्ज़रलैण्ड का नागरिक या उसके समूह-तन्त्र का प्रधान होऊँ तो चढ़ाई करनेवाली सेना को एक भी साधन-सामग्री न देने की एक-एक नागरिक से ज़बरदस्त अपील करूँ और दूसरी बात यह करूँ कि ज़िन्दा स्त्री-पुरुषों की एक दीवार खड़ी करूँ, और उन चढ़ाई करनेवालों से उस पर से गुज़रने को कहूँ। आप कहेंगे यह चीज़ सहन नहीं हो सकती। मैं कहूँगा नहीं, यह असम्भव नहीं है। गत वर्ष हमने कर दिखाया कि यह वस्तु हो सकती है। हमारे यहां स्त्रियां अपना व्यूह रचकर छाती निकालकर खड़ी रहीं और ज़रा भी न डिगीं। पेशावर में हज़ारों लोगों ने गोलियों की बौछार सही थी। कोई सेना तुम्हारे देश में से गुज़रना चाहती हो, उस समय तुम उसके सामने ऐसे ही स्त्री-पुरुषों के व्यूह की कल्पना करो। शायद वह सेना उन पर से गुजर भी जाय, तो भी तुम्हें तो विजय ही मिलेगी, क्योंकि फिर कोई सेना ऐसी घृणित परीक्षा न करेगी। अहिंसा निर्बलों का शस्त्र नहीं है, और न कभी था। यह तो कठोर-से-कठोर हृदयवाले का शस्त्र है।"

स्त्रियों को सम्बोधित कर गांधीजी ने कहा,—"आप लोगों ने जो सन्देश अपने लिए माँगा है, उसे देने की मुझमें ताक़त है या नहीं, यह मैं नहीं जानता। अगर आप लोग नाराज़ न हों तो आपके लिए मेरा यही संदेशा है कि आप लोग भी भारतीय नारियों की तरह, जिस तरह वे गत वर्ष एक साथ जागृत होकर खड़ी हो गई थीं, उसी तरह जागृत होकर आप भी अहिंसा का अङ्गीकार करें। मुझे पूरा

है कि यूरोप यदि अहिंसा को स्वीकार करेगा तो वह यूरोप की स्त्रियों द्वारा। अहिंसक युद्ध की यही खूबी है कि उसमें स्त्रियाँ भी पुरुषों की तरह ही र्य अदा कर सकती हैं। हिंसक युद्ध में स्त्रियों को ऐसा कोई अवसर नहीं। परन्तु हमारे गत अहिंसक युद्ध में स्त्रियों ने पुरुषों की अपेक्षा अधि गादक रूप से भाग लिया था। कारण इसका बहुत ही साधारण है। अहिं कष्ट-सहन की आवश्यकता बहुत अधिक होती है। और स्त्रियों के न है जो इसे पवित्रता और कुलीनता से पूरा कर सके? भारतीय स्त्रियों ा बहिष्कार किया और देश के लिए काम करने को निकल पड़ीं। उन्हों क देश उनसे घर सँभालने की अपेक्षा और भी काम कराना चाहता है नमक बनाया, शराब और विदेशी कपड़ों की दुकानों पर धरना दिया न दोनों चीजों के बेचनेवालों और खरीदारों से उन चीज़ों को छुड़वाने किया। बहुत रात गये वे लोग हृदय में हिम्मत और उदारता लेकर शरा ड़े-मोटे शराबखानों तक जातीं। वे जेल में भी गईं; और उन्होंने ों की मार खाई वैसी पुरुषों ने बहुत कम खाई होगी। पश्चिम की ि पुरुषों के साथ पशु बनने की कोशिश करेंगी तो उन्हें भारतीय स्त्रियों से नाशा नहीं मिलेगी। यूरोपियन स्त्रियों को अपने पति और पुत्रों को अन्य त्या के लिए भेजना, और उनके पराक्रम के लिए अभिनन्दन देना आदि रोक देना होगा।"

इसके बाद, हमेशा की तरह गांधीजी ने श्रोताओं को प्रश्न पूछने का । उनमें से कुछ यहाँ दिये हैं।

प्र०—'रेडक्रास सोसायटी के बारे में आपके क्या विचार हैं?'

उ०—'रेडक्रासवालों को युद्ध और युद्ध में लोगों को आराम देने का देना चाहिए। और युद्ध के बिना ही लोगों की सेवा-शुश्रूषा का विचार ा। युद्ध के लिए यदि हमारी इतनी हिम्मत, इतनी इज्जत और इतना न होता तो हम लोग बहुत कुछ कर गये होते! दुनिया में करोड़ों लोग ाधिकारों की कैद में पड़े हैं और लाखों पर सहनशील हो गये हैं।

आगामी कल का अहिंसक संघ यदि सेवा का काम ले लें तो उसके लिए इस दुनिया में बहुत काम पड़ा हुआ है। मैं चाहता हूँ कि स्विट्ज़रलैण्ड इस सेवामार्ग में औरों का नेतृत्व करे।'

प्र०--'हिन्दुस्तान ब्रिटेन के शासन से मुक्ति पाकर यदि युद्ध में शामिल हो तो उसका क्या होगा?'

उ०--'उसने यदि अहिंसक उपायों से स्वतन्त्रता प्राप्त की, तो वह युद्ध में शामिल हो ही नहीं सकता।'

प्र०—'अध्यापक आइन्स्टीन यहां आकर रहेंगे, पर वे अब अमेरिका चले गये हैं। आइन्स्टीन ने लोगों से विनती की थी। वे अपनी सैनिक अवधियों को पूरा करने की अपेक्षा जेल जायँ तो अधिक अच्छा है, इसके बारे में आपका क्या विचार है? उन्होंने कहा था,—'दुनिया के दो प्रतिशत लोग भी यदि मेरी विनती का पालन करें तो दुनिया से सैनिकवादी सत्ता का नाश हो जायगा'।'

उ०—'लोग अध्यापक आइन्स्टीन की विनती पर अमल करें तो मुझे बहुत ही खुशी हो। आइन्स्टीन जैसे महापुरुष के बारे में यदि मुझे कुछ कहने को कहा जाय तो मैं यही कहूँगा, कि उन्होंने अपने ये वाक्य मुझ से चुरा लिये हैं। परन्तु जब सरकार की ओर से सैनिक नौकरियों के फ़रमान आने के बाद यदि आप लोग उनसे इन्कार करेंगे तो यह शुरुआत देर की शुरुआत होगी। सेना में नौकरी करनेवाले मज़बूत और सशक्त शरीरवाले एक मनुष्य के पीछे घरों में हजारों आदमी होते हैं। ये लोग भी युद्ध के लिए उतने ही गुनाहगार हैं, जितना कि युद्ध में जूझनेवाला सैनिक। राज्य तुम्हें जो सहूलियतें देता है उनसे इन्कार कर तुम्हें असहयोग करना चाहिए। भारत में हमने देखा कि सरकार सड़कें बनाती है, स्कूल चलाती है, रेल दौड़ाती है, डाकखाने खोलती है; अँग्रेज़ों के आने के साथ-साथ पादरी लोग वहां आये और उन्होंने अस्पताल खोले और आज ये सारे काम ब्रिटिश सरकार अपनी बन्दूक की नोक से चला रही है। महलों की-सी बड़ी-बड़ी अदालतें बांधी गईं, पर इनका सारा खर्च तो हमें ही देना पड़ा न। राज जो सुख सुविधाएँ देता हो, उसे हमें त्याग ही देना चाहिए। उनके स्कूलों से निकल जाना चाहिए।

अपने झगड़े उन न्यायालयों में ले जाकर उनकी महत्ता नहीं बढ़ानी -
पंचायती अदालतों का निर्णय मान्य करना चाहिए। हमें सरकार की
मान-सम्मान या खिताब मिले हों, उन्हें त्याग देना चाहिए। इन
लेकर फिर सरकार को महसूल न भरकर उसके साथ असहयोग कर
काम है। इन सहूलियतों और मान-सम्मान का त्याग तो तुम्हें करना
हमें अपने आन्दोलन की इमारत रचते-रचते दस वर्ष हो गये। सन् १
अपनी सहूलियतों को छोड़ना शुरू किया, परन्तु महसूल न भरने
सन् १९३० से पहले नहीं शुरू की थी। यहाँ एक और बात का भी
है। वह यह कि मैं दक्षिण-अफ्रिका का भारत द्वारा शोषण भी
चाहता। आप लोगों के राज तो अफ्रिका, चीन और भारत के
रचित हैं। कभी भी यदि भारत दूसरे देश का शोषण करने
से जलावतन होना पड़ेगा। पर मैं कहाँ जा सकता हूँ, सिवा
हुए मरूँ। इस प्रकार मैं अहिंसा का प्रयोग अपनी स्वार्थ-बुद्धि
क्योंकि मैं यह नहीं चाहता कि मुझ पर आत्म-हत्या करने की नौ

प्र०—'पूँजीवादी जब मज़दूरों पर हिंसा की बौछार कर
को हिंसा के बिना न्याय कैसे मिल सकता है?'

उ०—'प्रहार के सामने प्रहार यह पुराना और जंगली तरी
नियमों से छुटकारा पाने के लिए मैं मनुजोचित परीक्षण कर
याद मज़दूर-संघ का मुख्य सलाहकार माना जाता हूँ। इसी
हम लोग मज़दूर और पूँजीपति के बीच के सवालों का हल
प्रयत्न कर रहे हैं। इसीलिए मेरा जवाब अनुभव-सिद्ध है।
संगठन और आत्म-बलिदान की भावना हो तो वे हमेशा न्याय

प्र०—'जिनेवा के एक पत्र में आपका इस प्रकार
"आम जनता यदि आज के अहिंसक कार्यक्रम को न
का रास्ता लेना पड़ेगा।" क्या आपने ऐसा कहा था?'

उ०—'कभी नहीं। और यह मैं कह दूँ कि अ

नहीं है, अपितु वह तो शाश्वत जीवन-धर्म है। मैं ईश्वर से यही प्रार्थना करता हूँ कि मुझे किसी भी हिंसात्मक कार्य में प्रवृत्त होने से पहले वह मौत दे दे।'

प्र०—'आप राष्ट्र-संघ के बारे में क्या कहते हैं?'

उ०—'उससे लोग आशा तो यही करते हैं कि वह ऐसा चमत्कार करे जिससे शस्त्र-युद्ध खत्म हो जाय और जब राष्ट्र-राष्ट्र के बीच कलह हो तब वह मध्यस्थ का काम करे। परन्तु अपने निर्णयों के पालन करने का जो बल होना चाहिए, वह उसके पास नहीं है। उसे अमुक राष्ट्रों के सद्भाव पर ही आधारित रहना पड़ता है। हमने जो उपाय लिये हैं, उनमें से उसे आवश्यक ताक़त मिल सकती है।'

प्र०—'स्विट्ज़रलैण्ड तो एक छोटा, तटस्थ और अनाक्रमणकारी देश है। इसे शस्त्र-संन्यास लेने की बात क्यों कह रहे हैं?'

उ०—'इसलिए कि आपके तटस्थ देश की भूमि पर खड़ा होकर मैं यूरोप के सभी राष्ट्रों के साथ बातचीत कर रहा हूँ। दूसरी बात, स्विट्ज़रलैण्ड तटस्थ है और वह किसी पर आक्रमण नहीं करना चाहता। इसीलिए उसे सैनिकवाद की आवश्यकता नहीं है। तुम दुनिया के सभी लोगों को आकर्षित करते हो; और तुम इस पुण्य भूमि में रहते हो; इसीलिए तुम सारी दुनिया को शस्त्र-संन्यास का उपदेश भी दे सकते हो। इसके अलावा यदि तुम लोग बिना शस्त्र के अपना काम चला लो तो यह तुम्हारे लिए कुछ कम महत्त्व की बात है?'

प्र०—'हमारे देश में जो सैनिक तालीम की पवित्र प्रणाली है, उसके प्रति आप आँख क्यों मूँद लेते हैं? हमारी सरहद पर गत महायुद्ध में स्विस-सेना पड़ी हुई थी; इसीलिए हम उस महायुद्ध की विभीषिका से बच सके, यह आप नहीं जानते?

उ०—इस प्रश्न के पीछे दुहरा अज्ञान छिपा हुआ है। प्रश्नकर्ता यह मान बैठे हैं कि सैनिक के कामों के सिवा आत्म-बलिदान हो ही नहीं सकता। तो मैं यह कहता हूँ कि अहिंसा सैनिक के काम से भी अधिक बलवान है। अहिंसा की तालीम फ़ौज़ी-तालीम से ज्यादा कठिन है। आपमें सहन-शक्ति होनी चाहिए और मृत्यु-भय छूट जाना चाहिए। इसमें बड़ी सख्त मेहनत है। इसमें सुख की सेज पर नहीं सोना है। इसमें आप अपने घरबार की रक्षा की जवाबदारी से मुक्त नहीं हो

सकते। इस कर्तव्य में तो स्त्री और बच्चे भी भाग लेंगे। दूसरों के न्यौछावर करने के उपदेश को ग्रहण करने में तुम्हारा काम सरल हो जाता

प्र०—ईश्वर के प्रति जताया गया प्रेम बड़ा है या मनुष्य के प्रति

उ०—दोनों एक ही हैं। इन दोनों के य यदि संघर्ष हो समझना चाहिए कि मनुष्य के अन्तःकरण में कुछ खामी है और उसे अ होना चाहिए।

प्र०—आप अपने आन्दोलन को ईश्वर की प्रेरणा पर देना चाहते ?

उ०—ओ हो! प्रश्नकर्ता आन्दोलन का अभ्यास किया हुआ यह आन्दोलन कभी भी ईश्वर की प्रेरणा के बाहर नहीं रहा। ऐसा विश्व-व्यापी आन्दोलन चलाने में कम-से-कम मैं तो अपने समझता हूँ। इस आन्दोलन ने जितनी भी सफलताएँ प्राप्त की लिए मैंने कभी मैंने यह नहीं कहा कि यह मेरे कारण हुई है कभी दावा ही किया है। परन्तु इसमें जब कभी कोई कमी हुई यही कहा है कि यह सब मेरी कमज़ोरियों का फल है, और हूँ। क्योंकि मैं यह जानता हूँ कि मैं तो ईश्वर के हाथ का मात्र हूँ। मैं आन्दोलन की खोज में कभी नहीं निकला, तरफ़ से स्वयं ही मिला, ऐसा मैं मानता हूँ। ईश्वर पर ऐसे विशाल आन्दोलन का नेतृत्व हो ही नहीं सकता।

इटली में स्वागत

(१३)

स्विट्ज़रलैण्ड में हम लोग जहाँ-जहाँ घूमे वहाँ-वहाँ एक झमझमाता, चमकदार और नया तीसरे दर्जे का डब्बा हमारे उपयोग के लिए हमें मिला हुआ था। अब इटली की सरहद आने लगी, इसलिए हमारे साथ गाड़ी में स्विस लोग बैठे थे। वे अपनी अपनी अटकल लगाने लगे कि हमारी सारी मण्डली को पहले दर्जे के डिब्बे में मुफ्त घुमाने की तत्परता, जो इटालियन सरकार ने बताई थी, वह पूरी होगी कि नहीं ?

"क्यों पूरी न होगी ? जब उन्होंने स्वयं कहा है कि हम आपको ऐसी सुविधा देंगे।" इतना छोटा-सा बहुत ही उपयुक्त प्रश्न पूछकर गांधीजी बातचीत में भाग लेना बन्द कर देते हैं और जो स्विस फासिस्ट-विरोधी थे, वे तरह-तरह की अटकलें लगाकर कहने लगे कि इटली की सीमा पर ज़रूर झगड़ा होगा।

गांधीजी पूछते हैं,—"यह रेलवे राज्य की अपनी है ?" स्विस मित्र रेलवे-सम्बन्धी एक बात उन्हें बताते हैं। एक रेलवे कुछ फ्रेंचों की व्यक्तिगत सम्पत्ति थी। उसे दुर्घटनाओं के बदले में हर वर्ष भारी रकमें देनी पड़ती थीं। इस बात की जाँच की गई। जाँच में निष्णातों ने कहा कि गाड़ियों में गैस की बत्तियों की जगह बिजली की बत्तियाँ लगाई जायँ तो बहुत-कुछ दुर्घटनाएँ कम हो सकती हैं। रेलवे के डायरेक्टरों की मण्डली एकत्र हुई; निष्णातों की बातें सुनी गईं; उन्होंने भी कुछ बातें कहीं और आखिर में सवाल पूछा; "दोनों में ज्यादा खर्च किसमें होता है—बिजली की बत्ती लगाने में या दुर्घटनाओं की कीमत देने में ?" दोनों की तुलना कर जवाब दिया गया—"बिजली की बत्ती लगाने में।" बस, खत्म, निर्णय हो गया। अधिक विचार करने की अपेक्षा, जो स्थिति मौजूद थी, उसे ही जारी रखा गया।

गाड़ी के दोनों ओर सुन्दर दृश्य हैं, इसलिए बातें थोड़ी-थोड़ी और होती हैं। एक आदमी आकर गांधीजी से कहता है कि मैं कुदरती हुई गायों के चमड़े से चप्पल बनाने का कारखाना खोलने जा रहा हूं। के लिए किसी जानवर की हत्या की जा सकती है कि नहीं, इस प्रश्न की होती है। गांधीजी कहते हैं,—"मैं तो किसी भी प्राणी की हत्या करने अपनी जान देना अधिक पसन्द करता हूं।" "जीवमात्र अवध्य है" का वे फिर प्रतिपादन करते हैं।

ऐसा करने में क्या बुद्धिमत्ता है? सांप की जिन्दगी क्या मनुष्य जितनी ही क़ीमती है? तो भी इतना तो स्वीकार ही करना होगा छोटे-से-छोटे प्राणी में भी ईश्वर का दर्शन करते हैं, उन्हें ये प्राणी पहुंचाते। ज़हरी सांप गांधीजी के पास से गुज़र चुका है। साथ . . सांप उनके शरीर पर चढ़ गया था; परन्तु वे ज़रा भी अस्वस्थ न . . जैसे चढ़ा था वैसे ही उतर गया। उनका कहना है कि ऐसे जीवों . कारण होता है, फिर वह तुम्हारा भय हो या उस प्राणी का। पर ही सांप को छूते हैं या किसी इरादे के बगैर ही हम जब उसे तब वह काटेगा या नहीं? और यदि काटा तो मौत का इत्मान हम लोग इसी मौत को गांधीजी के सामने रखते हैं।

गांधीजी,—"ऐसा बहुत ही कम होता है। मोटर की दुर्घ . की अपेक्षा इसमें ज्यादा डर नहीं है।"

मिलन स्टेशन पर हम लोग जिस रेलगाड़ी में से उतर . में बैठते हैं, वह काम बहुत ही दौड़-धूप और खटपट से होने पर भी एक जनसमूह शोर मचाता है, हर्षनाद करता प्रगति को ध्यान से देखता है। गांधीजी पत्रकारों से मिलना ये लोग अब हमारे संघ के अन्य सदस्यों से मिलना करने . मुझे भूल से मिनेज़ नायडू समझ लिया जाता है। और मैं . . पर अलग हुई, उस समय नायडू के प्रतिनिधि

मुझसे कुछ मसाला मिलेगा। इसलिए जब हमारा खास डिब्बा पहली जगह से हटाया गया तब वह मेरा हाथ पकड़ता है, और रेलवे लाइनों को पार कराता हुआ मुझे उस जगह घसीट ले गया, जहाँ अब हमारा डिब्बा खड़ा किया गया था। वह बहुत ही ख़ुशी से कहने लगा कि रोम में मुझे उसकी एक पत्र-प्रतिनिधि युवती-मित्र मिलेगी, जिससे मिलकर मुझे बहुत ही ख़ुशी होगी। परन्तु मेरा जी तो इस समय एक कप कॉफ़ी पीने के लिए तरस रहा था, और यह आदमी इस विषय में बिल्कुल रूखा-सूखा नज़र आता है। यह मुझे यदि किसी उपाहार-गृह में ले जाकर कोई भी गरम पेय पिलावे तो यह जो-कुछ पूछे, मैं बताने को तैयार हूँ। परन्तु इसे तो गाड़ी के आस-पास घूमना ही पसन्द है। थोड़ी देर में तो हम लोग चल पड़ते हैं, और वह बिना किसी खबर के ही रह जाता है।

अब हमें आधा भोजन मिल चुका है। हमें यह मुसाफ़िरी इतनी सुख-सुविधा-वाली लगती है कि नींद बहुत अच्छी आ जाती है और हम लोगों में से बहुत-से तीन बजे की प्रार्थना में हाज़िर नहीं हो पाते। परन्तु मैं जल्दी उठ जाती हूँ, मुँह धोकर कपड़े बदलती हूँ और खिड़कियों में से विशाल, सपाट मैदानोंवाले देश पर नज़र डालती हूँ। रोम-प्रवेश की तैयारी की दृष्टि से यह मुल्क बहुत अच्छा लगता है। तीस वर्ष पहले मैं इसी रास्ते पर रात की गाड़ी से रोम आई थी। उस समय मैं स्कूल में पढ़ती थी। और परदेश की मुसाफ़िरी में पहिली ही बार निकली थी। आज बहुत ही सवेरे प्रभात-काल के शीतल प्रकाश में फिर बाहर नज़र फेंकती हूँ, और मैं इस मुल्क में किसी तरह का कोई खास परिवर्तन नहीं पाती। विशाल, सपाट क्षितिज के सामने एक क़ब्रस्तान नज़र आता है, उसमें हरएक क़ब्र पर एक छोटा दिया जल रहा है।

आखिर में सीवीटा वेछिया आता है। यह नाम सुनकर आज भी रोमांच हो आता है, पर इसके स्मरण से मेरे मन में कुछ नये ही विचार उठते हैं। काउन्ट टॉलस्टॉय की सबसे बड़ी लड़की अपनी दूसरी शादी के बाद यहीं कहीं रहती हैं। उनके पति सिन्योर आल बर्टिनी इटली के एक मुख्य अखबार के मालिक हैं और उन्होंने एक पुराने महल की मरम्मत कराकर वहीं अपनी रहने की जगह बना ली है।

के आठ बजे। रोम में रोम्यां रोलां के एक पुराने मित्र जनरल मॉरिस से मिलनेवाले हैं। पर हमारी गाड़ी वक्त से पहले पहुँच जाती है, इसलिए यजमान की राह देखते हुए गांधीजी के डिब्बे में ही बैठे रहते हैं।
ग्रावाले चक्कर लगा रहे हैं, अखबारवाले स्पर्धा कर रहे हैं, लोग हर्षनाद कर रहे ंधीजी धीरे-धीरे मुस्करा रहे हैं। वह पत्र-प्रतिनिधि युवती आकर मेरे गाती है। उसने सुन्दर कपड़े पहने हैं, और मुँह पर अद्भुत हास्य है, हमारे मित्र-वृन्द की वह पुरानी सदस्या हो। हम लोग देर से उसीकी रहे थे। पर उसे जब यह मालूम हुआ कि गांधीजी जब तक इटली में हैं, अखबारवालों से नहीं मिलेंगे, तब वह चली गई।
था इसी का बदला लेने के लिए इन अखबार-नवीसों ने लन्दन में यह हानि-तथ्य भेज दिया था कि गांधीजी ने उन्हें मुलाकात दी और कहा "मैं इंग्लैंड के सामने आन्दोलन खड़ा करने के लिए जा रहा हूं; और इस बार दिक्कतों को बढ़ाने में बहिष्कार प्रबल साधन होगा।]
री मुसाफिरी में अनेक फासिस्ट अफसर सादी पोशाक में हमारी देख-रेख थे, पर अब हमें सरकार की ओर से आमन्त्रण दिया जा रहा था। सिपा-: एक बड़े अफसर से गांधीजी का परिचय कराया जाता है। ऐसे जवान और युवक को इतने बड़े ओहदे पर देखकर चित्त अत्यन्त प्रसन्न होता है।
ने में हलचल होती है। जनरल मॉरिस आ गये हैं। वे अपने तीन मेहमानों ा घर ले जाते हैं। हम बाकी के लोग शहर के मध्य-भाग के एक होटल ।
ारा कार्यक्रम शहर के दृश्यों को देखना था। सांझ को छः बजे हम सबको मॉरिस के घर इकट्ठा होना था। गांधीजी पोप तथा मुसोलिनी दोनों से चाहते हैं; परन्तु दोनों में से एक भी मुलाकात अभी तक निश्चित नहीं थी ंझ को छः बजे हम लोग जनरल मॉरिस के बँगले पर पहुँचते हैं। दीवान किनारे पर आग के पास बैठे-बैठे गांधीजी बात रहे थे; और हम लो के समय तक दिल-भर में हुए अपने-अपने अनुभवों का आदान-प्रदान क

रहे थे। पोप न मिल सके इसका गांधीजी को खेद रहा। परन्तु मुसोलिनी की मुलाक़ात में उन्हें खूब आनन्द आया। मीरा बहन और महादेवभाई उनके साथ गये थे। मुसोलिनी के मेहमानों को उस विशाल हाल में कितना चलना पड़ता है—बहुतों को तो यह अनुभव कष्टप्रद लगता था—और इतना चलने के बाद ही हाल के दूसरे किनारे पर जहाँ विशाल मेज़ के सामने बड़े ठाठ से मुसोलिनी बैठता था, वहाँ पहुँचा जा सकता था। इन सब बातों को देखकर इन्हें ख़ूब मजा आया। इन मेहमानों का स्वागत करने के लिए तो मुसोलिनी अपना गौरवपूर्ण स्थान छोड़कर हाल के आधे रास्ते तक आये थे, और आधे घंटे बाद जब मुलाक़ात पूरी हुई, तब उन्हें विदा देने के लिए भी दरवाज़े तक आये थे।

वेटिकन चर्च की गैलरियों को गांधीजी के लिए ख़ास तौर से खोला गया था। उनके बारे में गांधीजी ने उत्साह-पूर्वक बातचीत की। उसमें जो कला-संग्रह है, उसे देखने में तो गांधीजी को बहुत ही आनन्द आया। चर्च की लम्बी प्रतिध्वनियों से गूँजती चालों में एक गांधीजी अकेले-अकेले फिरे। इनमें एक मन्दिर को देखकर तो वे आदर और आश्चर्य की भावनाओं से परिपूरित हो गये। वे बोले,—"वहाँ मैंने ईसामसीह की एक मूर्ति देखी। उसे देखते-देखते मेरा मन अघाया ही नहीं। उसे छोड़कर आना मेरे लिए मुश्किल हो गया। देखते-देखते मेरी आँखों में आँसू आ गये।"

छह बज गये। प्रार्थना का समय हो गया। बहुत-से मुलाक़ाती आकर दर्शन कर गये हैं, तो भी कुछ लोग प्रार्थना के लिए दूसरे कमरे में बैठे हुए थे। कुछ निराश पत्रकार जिन्हें अन्दर आने से रोका गया था, वे भी यहीं बैठे हुए थे। उन्हें प्रार्थना में आने की तो मनाही नहीं थी; इसलिए वह विशाल कमरा लोगों से ठसाठस भर गया है। बत्ती बुझाई गई और जलती लकड़ी के मन्द प्रकाश में देवदास ने प्रार्थना शुरू की और लोग उसका साथ देते रहे।

प्रार्थना के अन्त में गांधीजी शान्त, स्वस्थ और आवेश से रहित आवाज़ से बोले,—"अब कोई बत्ती जलायेगा?"

मुलाक़ाती चले जाते हैं। और हम छह लोगों की मण्डली भोजन करने बैठी।

भोजन का कमरा मोहक था। मेज बड़ी है, तो भी उसने कमरे का एक घेर रखा है। जो बूढ़ा नौकर हमें भोजन परोस रहा था, वह जनरल मा॰ ज़िन्दगी-भर से था।

दूसरे दिन हमने आकर देखा कि गांधीजी अभी शहर से घूमकर आये हैं। उन्हें क्या-क्या देखना चाहिए, इस विषय में हम सब लोगों अलग कल्पना थी और हम सब लोगों ने इस बारे में उन्हें आग्रहपूर्वक दी थी। हमारे एक रोमन कैथलिक मित्र ने उन्हें सेन्ट पीटर का आग्रह किया था; और मैंने 'फोरम' देखने का। मुसोलिनी ने अ मनुष्य के साथ गांधीजी को क्या-क्या देखना चाहिए, इस विषय की हुई लिस्ट भेजी थी। इसमें नये-नये ढंग के अस्पताल, औषधालय, और पाठशालाओं आदि के भी नाम थे। परन्तु गांधीजी को तो अ ख्याल थे। डा० मान्टेसरी से उनकी लन्दन में मुलाकात हुई थी। बाल-मन्दिर की मुलाकात लेकर उन्होंने अपनी जान-पहचान फिर

दोपहर का भोजन ख़त्म होते ही मुलाकातियों का तांता बँ कातते जाते हैं और बातें करते जाते हैं। मुझे सबसे अधिक दि की सबसे बड़ी लड़की मिन्योर अल बर्टिनी के विषय में है। वे मुस्ताल, मज़बूत अंगोंवाली और ऐसी घरेलू मुस्कुराहटवाली सी हैं। में समय नष्ट नहीं करतीं, वे कुर्सी खींचकर बिलकुल गांधीजी जाती हैं और कहने लगती हैं,—"मि० गांधी, आपसे बहुत आनन्द हो रहा है।"

"और मुझे आपसे मिलकर।" गांधीजी भी हँसते हुए बातें में से चमकती हैं।

"यह तो आप जानते ही हैं कि मेरे पिता आपके भक्त थे।"

"उनके पत्रों को मैं बहुत ही कीमती समझता हूँ। मालूम किसे थे कि आपकी बहन ने?"

"हम सभी लड़कियां, उन्हें काम में मदद करती थीं।"

बातचीत अधिक अपनेपन की ओर झुकने लगी। उसमें से कुछ एक वाक्य मुझे याद रह गये हैं।

"मेरे पिता कहा करते थे कि अगर मैं किसी को नहीं समझ सका तो टाल्स्टायवादियों को। वे नहीं चाहते थे कि लोग उनके अनुयायी बनें; लोग अहिंसा का पालन करें यही उनकी इच्छा थी। यही एक मात्र रास्ता है...ज़मीन हमारी अपनी थी। हमें वह बहुत अच्छी लगती थी और उस पर मेहनत-मज़दूरी करके गुज़ारा करनेवाले लोग भी हमें अच्छे लगते थे...आपका और उनका कार्यक्रम इतना ज़्यादा व्यावहारिक होने पर भी और इसी कारण से, आप दोनों को स्वप्नद्रष्टा, पागल, और बेवकूफ़ कहा जाता है, यह विचित्र बात है!...अँग्रेज़ आपको कैसे लगे, मि० गांधी?" प्रश्न करते-करते वे आगे झुकती हैं, गांधीजी को टकटकी लगाये देख रही हैं और उनका जवाब सुनने के लिये बहुत ही आतुर रहती हैं।

गांधीजी,—"मैंने वहां ख़ूब मज़े में अपना समय व्यतीत किया। मैं बहुत अच्छे-अच्छे लोगों से मिला।"

"ओहो!" सिन्योरा बोल उठीं, मानो उन्हें गहरा सन्तोष हुआ हो और कुर्सी पर अच्छी तरह बैठ गईं। "मुझे बहुत ही ख़ुशी है, मुझे यही उम्मीद थी। मुझे अँग्रेज़ प्रामाणिक और निष्पक्ष मालूम होते हैं।"

गांधीजी एक क्षण रुकते हैं और अपनी सम्मति देते हैं,—"हां, मैं भी मानता हूँ कि वे लोग प्रामाणिक और निष्पक्ष हैं।"

"और आप जानते हैं, ये दो गुण इनमें किस तरह आ पाये हैं? यह उनकी मन की स्वतंत्रता की बदौलत!"

"यह तो स्पष्ट ही है कि इन लोगों में मन की स्वतंत्रता बहुत है।"

मैं आग के पास बैठी हूँ और अब दीवार का सहारा लेकर बैठना चाहती हूँ। मेरा ब्रिटिश हृदय, जो इस समय एक ही है, गर्व से फूला नहीं समा रहा है, इतना कि मैं उसे इन लोगों को देखने देना नहीं चाहती। नहीं तो वे लोग बात करना बन्द कर देंगे। क्योंकि गांधीजी इस प्रकार सरलता से किसी की स्तुति या प्रशंसा नहीं

करते। परन्तु गांधीजी तो उससे भी आगे बढ़ते हैं, और कहते हैं,—तथा लन्दन के पूर्वी भाग के मज़दूर मुझे बात को जल्दी समझनेवाले भी मालूम पड़े। वस्तुतः मैं समझता हूं कि इण्डिया आफ़िस के अधिकारियों व मज़दूरों के मन भारतीयों की आकांक्षाओं को अधिक अच्छी तरह ... बड़े लोग अक्सर कान में ही बात रख लेते हैं, उस पर ध्यान नहीं देते लोग सुनते और समझते हैं।

एकाएक खटका होता है। एक ऊँचा, चश्मेवाला, सीधा, भूरी पो... रल आई्भी, जो अपने पुराने मित्र जनरल मारिस की जगह ... सत्कार कर रहे थे, आकर गांधीजी के पास बैठ जाते हैं और बात बादशाही कुटुम्ब के लोग आनेवाले हैं। राजा की छोटी राजकुमारी लिए जगह खाली करने के लिए लोग कमरे में से उठने लगे। ... गांधीजी के पास बैठ जाती है, परन्तु भाषा के कारण, पहले ... होती है। गांधीजी कात रहे हैं और दोनों एक-दूसरे के सामने राजकुमारी अपनी परिचारिका को टोकरा लाने के लिये भेजती है

राजकुमारी,—"ये हिन्दुस्तान के अंजीर हैं। आप आज ... हैं, आपके रास्ते के उपयोग के लिए मैं लाई हूं।"

गांधीजी खुश होते हैं और सुन्दरता से पैक किए हुए फलों राजकुमारी का आभार मानते हैं। परन्तु ये तो सलामकी, अंजीर नहीं हैं।'

"हां, हां, हमारे यहां इसे ही हिन्दुस्तानी अंजीर कहते आग्रहपूर्वक कहा।

परन्तु किसी लावण्यवती युवती राजकुमारी के लिये नहीं जा सकता।

गांधीजी,—"हम जिसे अंजीर कहते हैं वे ऐसे नहीं ... न हों।" ये शब्द कहकर, उन्हीं जो सभी युक्त-युक्तियों के और समझ ... उसी का भाव आंखों में लाकर, गांधीजी ने

बोले,—"इनका नाम कुछ भी क्यों न हो, पर मुसाफ़िरी में तो ये बहुत ही मीठे लगेंगे। मैं आपका आभार मानता हूँ।"

काले कपड़ोंवाली परिचारिका बोली,—"ये फल रानी साहिबा ने आपके लिए स्वयं पैक किए हैं।"

गांधीजी,—"यह इनकी मेहरबानी है।"

थोड़ी देर बाद राजकुमारी उठती है, हाथ मिलाती है और कहती है,—"मैं जाती हूँ, भगवान् आपका भला करे।"

गांधीजी का फिर शहर में जाने का समय हो जाता है।

मुझे आज रोम जाने की ज़रा भी इच्छा नहीं। मुझे लिखने के लिए शान्ति चाहिए। मैं बगीचे में चक्कर लगाने निकल पड़ती हूँ। वहाँ जनरल आर्ट्‌स्को से भेंट होती है। हम लोग बात करते-करते दीवानखाने में वापस आ जाते हैं। वहाँ स्विस दूत और उनकी पत्नी बैठी हैं, उनके साथ मेरा परिचय कराया जाता है। हमारी विलनव की यात्रा के बारे में वे पूछते हैं, "हमें वहाँ ख़ूब आनन्द रहा।" गांधीजी सुबह पहाड़ पर घूमे थे; उसका और पीयर सेरेसोल का उन पर कैसा असर पड़ा, आदि बातें मैं उन्हें बता देती हूँ। परन्तु वे लोग पीयर को किसी और ही नज़र से देखते हैं। उनकी अन्तर्राष्ट्रीय सेवा-सेना जो लड़ाकू-सेना का स्थान ले सकती है, उसके स्थापन में जिसने अपनी सारी ज़िन्दगी लगा दी हो, उसकी क़ीमत गांधीजी के सिवा और कौन कर सकता है? इन देशों के सत्ताधीशों को उसकी क्या क़ीमत होगी? परन्तु तो भी ये लोग बहुत अच्छे हैं। हम लोग शस्त्र-संन्यास पर बात करने लगे।

"हम मानते हैं कि विलायत में पीयर सारे यूरोप को रास्ता बता रहे हैं।"

एक स्विस महिला बोलीं,—"पर हम स्विस लोगों को सबसे पहले शस्त्र-संन्यास नहीं लेना चाहिए।"

मैंने पूछा,—"तो किसे करना चाहिए?"

"ओहो! हमारा तो यक़ीन है कि यह काम सबसे पहले ब्रिटेन को करना चाहिए।"

इतने में वह पत्रकार युवती और उसका साथी हाँफते-हाँफते आ गये परन्तु हम लोगों ने उन्हें रोका और कहा कि "गांधीजी अब मिलेंगे।" उन लोगों ने पूछा,—"हम प्रार्थना के बाद थोड़ी देर मिल लेंगे।" यही ठीक होगा।

प्रार्थना का समय होने आया। प्रार्थना के बाद तुरन्त ही गांधीजी होनेवाला था। और इसके बाद वे यूरोप की सीमा में जब तक हैं नहीं बोलेंगे। इसके बाद हम सब लोग विदा लेने वाले थे ही।

गांधीजी को विदा होते हुए ख़ुशी हो रही थी। वे जिस आये थे, उसे आज बारह हफ़्ते हो गये हैं। उनके आने से पहले मैं विचार करती थी तो मुझे ख़याल होता था कि वे तो महान प्रशंसा-पात्र हैं, बिल्कुल निःस्वार्थ हैं, प्रभुपरायण हैं और प्रार्थ न तो एक भी क़दम रखते हैं और न किसी बात का निर्णय ही राजनीति में तो उन्होंने नया तत्त्व दाख़िल किया है। भार के क्षेत्र में पवित्रता, और बिल्कुल खुल्लमखुल्ला काम तारीफ़ की जाय, थोड़ी है।

जब हम किसी के बारे में यह कहते हैं कि हम उसे यह आवश्यक है कि हम पहले उसके घर के जीवन को देख रह भी लेना चाहिए। मैं गांधीजी के साथ बारह सप्ताह रही और हरेक प्रसंग में देखा। इसके अलावा मैंने उन्हें भी देखा। मैं किसी भी स्थिति में क्यों न होऊँ, मेरे मन उठते हों, मैं थकी होऊँ, आनन्द में होऊँ या गंभीर हो मान्य अतिथि का विचार तो हमेशा करना ही पड़ता है।

मैंने उन्हें प्रतिदिन तड़के साढ़े पाँच बजे सरदी के प्रतिनिधियों से बड़ी रात तक बातचीत कर मध्यरात्रि में दोपहर में बालकों की टोलियों में घिरा हुआ देखा, के सामने घण्टों तक बैठे देखा। मैं-

उनकी स्त्रियों, राजाओं और प्रधान-मण्डल के प्रधानों से घिरे हुए भी उन्हें देखा। वे हमेशा एकरस ही नज़र आते—शान्त, प्रसन्न, विनोदी, सहृदय, निःस्वार्थ और ईश्वर तथा मनुष्य के साथ एकता का अनुभव करते हुए।

मुझे जिनके प्रति आदर था, ऐसे एक महापुरुष की तरह ही मैंने उनका वो मुहल्ले में स्वागत किया था। एक मुहब्बती, आनन्दी और सर्वथा विश्वासपात्र मित्र के नाते मैंने उन्हें विदा दी।

बनावटी मुलाक़ात

(१४)

यूरोप के अपने प्रवासों में गांधीजी का अखबारनवीसों के प्रति जो
उस पर मैंने ख़ास ध्यान दिया था। मेरी कल्पना थी कि दूसरे राष्ट्र
भारत की राष्ट्रभावना के प्रति सहानुभूति दिखाएँगे और ग्रेट ब्रि-
शाही हुकूमत की कटु आलोचना करेंगे। इस टीका-टिप्पणी का
भी मेरी पूरी तैयारी थी। मैंने यह कहने का विचार किया था कि
निकालना सहज होता है, परन्तु यूरोप की किसी भी प्रजा के हाथ
ऐसी बात नहीं है। परन्तु मैंने देखा कि मुझे अपने देश के ऐसे
ही नहीं है। प्रत्युत इसके मुक़ाबले में यूरोप के अखबार अनेक बार
करनेवाले, सामान्यतः झूठी ख़बरें छापनेवाले, और कितनी ही
करनेवाले साबित हुए।

अखबारनवीसों और गांधीजी के बीच की बातचीत में बहुत
थी। वे जो वाक्य बोलते थे, उनका प्रत्येक शब्द ब्रिटेन और भ
सम्बन्ध की आशा में ओत-प्रोत होता था। यह देखकर मेरे
था। अनेक बार अखबारवालों को नम्रता में ही देती थी।

गांधीजी शनिवार को सुबह रोम पहुँचे और रविवार को
चले। उन्होंने ऐसा निश्चय किया था कि इन दो दिनों में छुट्टी
बारवालों को मुलाक़ात देने से इन्कार किया गया था। मा
मुसोलिनी से मिलने और वेटिकन का चर्च देखने में बिताया
मान्टेसरी से मिले और उनका बालमन्दिर देखा और अन्य
को देखा। दोपहर के भोजन के लिए वे, मोन्टेसरियो, जन

और जहां वे ठहरे थे, आये। टालस्टाय की पुत्री, राजकुमारी तथा अन्य मुलाक़ातियों से मिले, इसके बाद मोटर में बैठकर फिर कुछ जगहों को देखने गये और चाय के समय वापस आ गये। बाद में उन्होंने हममें से प्रत्येक से विदा ली, क्योंकि प्रार्थना के बाद उनका चौबीस घण्टे का मौन था। मुलाक़ातियों की एक भीड़ उनकी राह देख रही थी, वह दीवानखाने में दाखिल हुई। प्रार्थना शुरू होने से पहले गांधीजी ने उन्हें सम्बोधित कर दो शब्द कहे। इसके बाद तो वे सोमवार की शाम को भूमध्य-सागर पर, जब उनका मौन खतम हुआ होगा, तभी बोले होंगे।

एक-दो दिन बाद जहाज़ के रेडियो पर हमें खबर मिली कि उन्होंने रोम में 'जियार्नेल-डी-इटालिया' नामक पत्र के प्रतिनिधि से मुलाक़ात की थी और कहा था,—

"गोलमेज़ परिषद् भारतीयों के लिए एक लम्बी और धीमी वेदना हो गई है, परन्तु इसके कारण ब्रिटिश अधिकारी भारतीय जनता और उनके नेताओं का जोश तो साफ़-साफ़ देख सके हैं और इंग्लैण्ड के सच्चे स्वार्थ ढक गये हैं। गांधीजी ने कहा कि वे इंग्लैण्ड के सामने अपना आन्दोलन शुरू करने के लिए वापस जा रहे हैं। और यह आन्दोलन सविनय अवज्ञा-भंग और ब्रिटिश माल का बहिष्कार होगा। वे समझते हैं कि चल्नी-सिक्कों की क़ीमत घट जाने और बेकारी से ब्रिटेन की मुसीबतें इस समय बढ़ गई हैं और उन्हें इससे भी ज़्यादा तीव्र करने के लिए बहिष्कार ही एक प्रबल शस्त्र हो सकता है। सभी ब्रिटिश माल के लिए हिन्दुस्तानी बाज़ार बन्द हो जायगा और इससे ब्रिटेन की औद्योगिक प्रगति घट जायगी, बेकारी बढ़ेगी और पौंड की क़ीमत और भी नीचे गिर जायगी।

"आखिर में मि० गांधी ने यह अफ़सोस जाहिर किया कि यूरोप के बहुत कम देशों ने अभी तक भारतीय प्रश्नों में दिलचस्पी ली है। यह खेदजनक है, क्योंकि स्वतन्त्र भारत ही विदेशी माल के लिए अच्छा बाज़ार हो सकता है। और भारत यदि स्वतन्त्र होगा तो वह व्यापार और बौद्धिक विषयों का आदान-प्रदान करेगा।"

इस मुलाक़ात को सुनते ही गांधीजी के मित्र—तीन यूरोपियन और चार भारतीय—समझ गये कि यह मुलाक़ात बनावटी है। गांधीजी ने इन शब्दों की कठोरता देखकर और इस सफ़ेद झूठ का निराकरण करने के लिए एकदम लन्दन तार भेज

दिया और उसमें लिखा कि न तो मैंने ऐसी कोई मुलाक़ात ही दी है अनुचित और कठोर शब्दों का प्रयोग ही किया है।

जहाज़ के पत्तन पहुँचते ही गांधीजी वहाँ के मुख्य अधिकारी से मि इस अत्यन्त हानिकारक ख़बर को झूठ साबित करने के लिए, सबसे उपाय क्या हो सकता है, इस पर विचार-विनिमय किया। वह मुलाक़ा हुई कि वे जहाज़ पर ठीक समय पर पहुँच सकेंगे या नहीं, इसमें लगा। परन्तु उन्होंने सर सैम्युअल होर तथा अन्य लोगों को जो उनका हृदय हल्का हो गया था।

गोलमेज़ परिषद् में जो लाभ हुआ था, उसका असर बहुत-से इस बनावटी मुलाक़ात से जाता रहा, ऐसा मुझे मालूम हो रहा था

रवीन्द्रनाथ जब रोम गये थे, तब भी ऐसा ही हुआ था। वह बनावटी वक्तव्य प्रकाशित किया गया था; और उसकी प्रति यति गाँव तक पहुँची थी। उस गाँव में एक इटालियन किरायेदार कर जाने पर उसी घर में मैं रही थी। इस व्यक्ति को तुरन्त गया था, वह भी सिर्फ़ इसलिए कि फ़ासिस्ट के निवेदन में समझा गया था।

दैनिक अख़बार में जब कोई झूठा समाचार छप जाता है दो दिन बाद और खंडन निकल जाते हैं; और फिर जब उधर तब उसका कोई विशेष असर नहीं होता। झूठी ख़बरें अक्सर तार समाचार होती हैं, और वह एक से दूसरे के पास इतनी उनके सही संस्करण की तो कोई निशान ही नहीं। और मुश्किल होता लगता है। इसके अलावा यह इटालियन एक संगठित पद्धति—झूठी समाचार-पत्रों का व्यूह—रच रखी ऐसी है, और पाठक के मन पर असर करनेवाली वैसी न

मैं गांधीजी को जिस पत्र ज्यों ही लन्दन वापस आ

के मन में गांधीजी के प्रति अब कटुता के भाव जागृत हो गये हैं। यह देखकर मुझे बड़ा दुःख और आश्चर्य हुआ। परन्तु जब किसी ने मेरे सामने इस मशहूर मुलाक़ात का रहस्य खोला तब मैं अपने देश-वासियों के व्यवहार में एकाएक परिवर्तन की लहर सरलता से देख सकी।

परिशिष्ट १

लन्दन की मुलाकात *

जोन हेन्स होम्स

आज सुबह मैं आप लोगों को अपने जीवन की एक निजी
हूं। मैं गांधीजी से मिला हूं। मैंने उनसे हाथ मिलाया है थे।
से आंख मिलाई है और उनकी आवाज़ भी सुनी है। वहीं
बैठकर मैंने उनका भाषण सुना है। उनके चरण-कमलों के पास
उनसे अनेक विषयों पर महत्त्वपूर्ण बातें की हैं। वे सब बातें
और किसी के लिए महत्व की नहीं हैं। परन्तु मैंने आप के
विषय में अनेक बातें की हैं, और यह महापुरुष—जिसे हम म
पुरुष' पहचानने लगे हैं—उसकी प्रशंसा और प्रेम में अ

* [साजेंट एवन्स और साजेंट रोजर्स अनेक पुरुषों पे
जानते हैं। गांधीजी की सुख-सहूलियत के लिए उन्होंने
सैनिका]

इनके बारे में गांधीजी ने लिखा था,—'गुप्त पुलिस के
मेरी देख-रेख का काम सौंपा गया था, उनमें से दो जि
गया था, वे मेरे अच्छे मित्र और अच्छे सहायक सा
मेरी हलचलों की गुप्त देख-रेख रखता हो, ऐसा मुझे कभी
उनका कोई ऐसा व्यवहार ही था और न मैंने कभी इस
ने की। अगर उनका उद्देश्य हेतु होता तो न मुझे आश्च
अन्दाज़ है कि वे मेरी प्रवृत्तियों की देख-रेख करनेवाले

अधिक सहयोग दिया है कि मैं अपने इस अनुभव को जीवन की सबसे क़ीमती चीज़ समझूँगा। और अपने इस अनुभव के भावों को यदि मैं आपके सामने यथाशक्ति प्रकट न करूँ तो मैं समझता हूँ कि मैं अपने कर्तव्य से चूक गया हूँ। इसके अलावा इस अनुभव में एक विशाल अर्थ है। मैंने गांधीजी के जिस समय दर्शन किये उस समय उनकी कीर्ति और कार्य का मध्याह्न था और उस समय जो घटनाएँ घटित हो रही थीं; वे सिर्फ़ हम लोगों के लिए नहीं, अपितु सभी युगों के महत्त्व की थीं। इसका अर्थ यह नहीं है कि मैं आप लोगों के सामने सिर्फ़ अपने ही मन पर पड़े हुए प्रभाव का वर्णन कर रहा हूँ; परन्तु आज इस महापुरुष का हिन्दुस्तान पर, बड़े भारी ब्रिटिश-साम्राज्य पर और सारे संसार पर जो असर हुआ, उसका वर्णन मैं आप लोगों के सामने कर रहा हूँ। दूसरे शब्दों में कहा जाय तो मैं केवल एक व्यक्ति से नहीं मिला, अपितु एक अहिंसक युद्ध के, आन्दोलन के और महान क्रान्ति के संचालक से मिला।

प्रेम इतना अधिक था कि मुझे जब ज़रा-सी तकलीफ होती थी तब ये लोग जी-तोड़ मेहनत करते थे और मुझे आराम पहुँचाने में कोई कोर-कसर नहीं करते थे। मेरे साथियों को इनकी मदद बड़ी कारगर साबित हुई। सामान वगैरह की चिन्ता तो ये पुलिस के अफ़सर ही करते थे। मेरे अनुरोध करने पर इन्हें मेरे साथ ब्रिंडिसी तक आने की इजाज़त मिल गई थी। ये लोग जब हमसे अलग हुए तो उन्हें भी बहुत दुःख हुआ और हमें भी। मनुष्य-प्रेम के ऐसे अनुभवों के लिए मैं धरती के इस कोने से उस कोने तक घूम सकता हूँ।

जहाँ आत्म-शुद्धि की लड़ाई हो, जिसका आधार सत्य और अहिंसा हो, वहाँ ऐसे मनुष्य-प्रेम की वृद्धि ही होती है। इससे हमारे सत्याग्रह की शक्ति भी चौगुनी हो जाती है।'—'नवजीवन' ३-१-३२]

[ब्रिंडिसी से जब ये गुप्त-पुलिस के अफसर गांधीजी से विदा लेने लगे तब उन्होंने यह इच्छा प्रकट की कि यादगार के लिए मैं आप लोगों को कुछ देना चाहता हूँ। दोनों अफसरों ने घड़ी लेने की इच्छा ज़ाहिर की। गांधीजी ने बम्बई बन्दरगाह पर उतरते ही इङ्गलैंड में बनी हुई दो घड़ियाँ उन्हें भेज दीं—अनुवादक]

गांधीजी की यूरोप-यात्रा

गांधीजी के लन्दन आने की बात मैंने जर्मनी में सुनी। इससे पहले में मुझे उनका एक पत्र मिला था। उसमें उन्होंने अपनी आगामी यात्रा पहुँचते ही मुझे वहां उनसे मिलने की इच्छा प्रकट की थी। परन्तु व लटाई में पड़ गई और उन्होंने घोषणा कर दी कि वे अब गोल्मेज़ परि न होंगे। इसके बाद उनका वायसराय के साथ समाधान हुआ और आने का निर्णय किया। गांधीजी आ रहे हैं, वे इस समय जहाज़ में प्रवास कर रहे हैं, ऐसा सुनते ही मैंने अपनी अन्य सभी योजनाओं और लन्दन की ओर रवाना हुआ। मैंने निश्चय किया था कि मैं दरवाज़े पर धरना दूँगा, और जब तक दरवाज़ा खोलकर मुझे अन्दर तब तक मैं उठूँगा ही नहीं। मुझे ऐसी आशा तो कदापि नहीं थी में पैर धरते ही मुझे आदर-सत्कार करने का अवसर मिलेगा। भी, नाटकों और विनोदी प्रसंगों की तरह एक स्वतंत्र कथा है। दिन फोकस्टन बन्दरगाह पर जहाज का इन्तजार कर रहा था।

[illegible] इस ऋतु में इंग्लैण्ड में जैसी होती है वैसी ही थी—सर्दी कभी-कभी बीच-बीच में बारिश का [illegible] झोंका भी आ जाता [illegible] लहरें खूब उछल रही थीं और बन्दरगाह पर खड़े हुए लोगों [illegible] रही थी। मैंने अपनी [illegible] पर से बरसात का पानी [illegible] पार [illegible] समुद्र पर नज़र डाली। [illegible] क्षितिज में एक छोटा [illegible] भूत [illegible] बाहर [illegible] आ रहा हो [illegible] जहाज़ के बन्दरगाह पर आने की सिर्फ एक व्यक्ति को—[illegible] प्रतिनिधि को ही जहाज़ पर जाने की इजाज़त मिली। गांधीजी के मित्रों, भारत से आये प्रतिनिधियों, [illegible] [illegible] और फोटोग्राफरों को—बरसात में ही [illegible] [illegible] के पीछे [illegible] का समूह [illegible]। परन्तु [illegible] था। थोड़ी ही देर में हम जहाज़ पर पहुँचे, और मैं [illegible]

[illegible] था। वहाँ मैंने

किये। वह अपनी बैठक पर पालथी मारकर बैठे थे और रेजीनाल्ड रेनल्ड्ज़ के साथ बहुत ज़्यादा बातचीत करने में मशगूल थे। यह अंग्रेज़ जवान क्वेकर भारत में गांधीजी के आश्रम में रहे हुए हैं, और दाण्डी-कूच प्रारंभ होने पर गांधीजी का पत्र वायसराय तक पहुँचाने के लिए मशहूर हो चुके हैं। गांधीजी के पैर खुले थे। उन्होंने शरीर पर गले तक एक खादी की शाल ओढ़ी थी। ऐसा मालूम हो रहा था कि वे कुछ ध्यान से सुन रहे थे। उनका सिर और कंधे इसीलिए झुके हुए थे। खुला, लम्बा, पतला और मजबूत हाथ शाल में से बाहर निकला और उन्होंने रेजीनाल्ड के हाथ से एक कागज़ लिया। दोनों के बीच कुछ बातचीत हुई, थोड़े हंसे और बातचीत पूरी हो गई।

अब मेरी बारी आई। मैं छोटे-से केबिन में घुसा। गांधीजी एकदम कूदकर उठे और बच्चों की-सी चपल और तेज़ चाल से मेरा स्वागत करने के लिए आगे बढ़े। उन्होंने अपने हाथ में मेरा हाथ लिया, यह पकड़ एक पहल्वान-जैसी थी। मैंने उनकी आंखों में जो तेज देखा वह इतना तीक्ष्ण था कि उनकी ऐनक के शीशे भी उस तेज को रोकने में असमर्थ थे। मुझे जिस आवाज़ से उन्होंने सम्बोधित किया, वह जितनी बुलन्द थी उतनी ही सौम्य भी थी। हम थोड़ी देर तक साथ रहे। मेरे मन में घबराहट और भावुकता के आवेश थे; और उस समय क्या-क्या बातें हुईं, इसका मुझे ज़रा भी ध्यान नहीं है। परन्तु इस मुलाक़ात में शब्दों का महत्त्व नहीं था, महत्त्व था भावनाओं का। जिस पुरुष की आत्मा आज से बरसों पहले आधी दुनिया के भागों और समुद्रों को पारकर, मेरे हृदय तक पहुँची थी, उसी पुरुष के सान्निध्य में मैं आज हूँ। और वह आत्मा इस सान्निध्य में मुझ पर ऐसा असर डाल रही थी, जो कभी नहीं मिट सकता।

इसके बाद और भी अनेक प्रभाव मुझ पर पड़े। परन्तु यह सबसे पहला प्रभाव कैसा था? इस सवाल का जवाब देना सरल है। यह उनकी सुन्दरता का असर था। लोगों को गांधीजी के कुरूप होने का ख़्याल कैसे आता है? कुछ लोगों ने उन्हें 'वामन', 'मानव-कपि' आदि विशेषण कैसे दिये होंगे? यह सच है उनका शरीर और उनके अवयव कमज़ोर हैं, पर उनका तपस्वी-जीवन फालतू चर्बी पैदा नहीं होने

देखा। इनका ढांचा ऊंचा, उनकी छाती चौड़ी और कद मध्यम है। मैं ने भारतीयों को देखा है जिनका चेहरा महात्मा गांधी के मुकाबले में [illegible] आता है। यह भी सच है कि उनके व्यक्तिगत विशिष्ट [illegible] बहुत [illegible] उनका सिर घुटा है, उनके कान बड़े-बड़े हैं, ओंठ मोटे हैं और दां[illegible] परन्तु उनकी सफेद शाल के मुकाबले में उनका गेहुंआ चेहरा बहुत [illegible] पड़ता है। उनकी आँखें अँधेरी रात के दीए की तरह चमकती हैं। [illegible] ज्यादा और ऊपर प्रभात काल की सृष्टि पर सूर्य के प्रकाश की [illegible] फैला हुआ है। हमारे मन पर इस पुरुष के शारीरिक दृश्य का प्रभाव [illegible] आध्यात्मिक सान्निध्य का प्रभाव पड़ता है। हमें अनायास ही उनके [illegible] और निर्दोषिता का ख्याल आ जाता है। वे एक बच्चे की-सी स्वाभाविकता से हमारे पास आते हैं और बातचीत करने लगते हैं। [illegible] तो [illegible] भी नहीं है, मगर मैं उनको काफी प्रसन्न होती [illegible] की वृद्धि होती है, तो भी उनमें न तो बनावट है, न ढोंग है और [illegible] उनके खान-पान, उनकी शारीरिक हरकतों और व्यवहारों [illegible] जाते हैं कि उनमें किसी तरह का छल-कपट नहीं है। हमें [illegible] आता है, यह तो उनके अलौकिक व्यक्तित्व का ही प्रमाण [illegible] है। इसलिए हम यही सोचते हैं कि वे कैसे हैं, न कि कैसे [illegible] शब्दों में कहें तो उनका पवन सत्य उनके चेहरे [illegible] नज़र आता है। दरअसल गांधीजी की सुन्दरता इसी [illegible] सौन्दर्य है। जान कीट्स ने जो लिखा है, वह तो आदर्श [illegible] ही सत्य है, और सत्य सौन्दर्य है; इतना ही जान लेने की सारी आवश्यकता है।"

[illegible] जहाज से उतरे और एक सरकारी मोटर में थे, साथ में उनकी [illegible]

[illegible]

— [illegible]

हम लन्दन पहुँचे और तुरन्त ही कीचड़ और बरसात में फ्रेण्ड्स मीटिंग हाउस गये। यहाँ गांधीजी के स्वागतार्थ सभा थी। मैंने गांधीजी को सभा-गृह में प्रवेश करते देखा और मेरे मन पर फिर उनके सौन्दर्य की गहरी छाप पड़ी और इस बार तो मुझे उनके सामर्थ्य का भी आभास हुआ। वे व्यासपीठ पर चढ़ने के लिए कैसे कदम उठा रहे थे, कितनी शान्ति और स्वस्थता से उन्होंने लन्दन के उस दृश्य की तरफ नज़र डालकर देखा; और उन्होंने किस खूबी से अपने प्रभाव द्वारा इन स्त्री-पुरुषों के चित्तों को जीत लिया, उसका तो वर्णन ही कौन कर सकता है? जिसे गांधीजी तथा इस समारंभ की महत्ता का ज़रा भी पता नहीं, ऐसा कोई दर्शक यदि वहाँ पहुँच जाता तो वास्तव में वह इस दृश्य को हँसी का पात्र ही समझता। यह भारतीय, जो नंगे पैर था, जिसकी टांगे जांघ तक खुली थीं, जिसने कच्छ पहना था और जिसने अपने शरीर पर खादी की एक मोटी चादर ओढ़ी थी, इस सभागृह में चढ़ा चला आ रहा था। वे बैठे, और बुद्ध की तरह शान्त और स्थिर हुए और इस दृश्य की हँसी—जो कुछ भी उस समय थी—वह एकाएक न जाने कहाँ चली गई। और उसमें भव्यता का संचार हो गया। उस सभा-गृह में उस समय जो भयमिश्रित आदर की भावना फैल गई थी उसे मैं ज़िन्दगी-भर नहीं भूल सकता। गांधीजी का अपने करोड़ों देश-भाइयों पर जो व्यापक प्रभाव है उसका रहस्य मैं आज पहली ही बार समझा। अगर उस समय वहाँ कोई बादशाह होता तो भी उसके प्रति हमें इतना आदर और श्रद्धा न होती। मुझे तुरन्त ही उस भावनाशील अंग्रेज़ पत्रकार मि० राबर्ट बरनेस का वचन स्मरण हो आया। उन्होंने कहा था,—"उन्हें देखते ही हमें बादशाही वातावरण का अनुभव होता है।" मुझे अपनी थोड़े ही सप्ताह पहले की एक बादशाह की मुलाक़ात का स्मरण हो आया। जो मनुष्य तीस से भी अधिक वर्ष पहले अपने ज़माने का सबसे अधिक प्रभावशाली राजा था, उसके साथ भी मैंने बातचीत की थी। उस राजा ने प्रभावोत्पादक पोशाक पहनी थी। उनके आस-पास दरबारी लोग थे, और वे स्वयं मोहक, सुन्दर और कद्दावर शरीरवाले थे, परन्तु उस राजा का वह सारा दबदबे-भरा दृश्य गांधीजी के इस बादशाही दृश्य के सामने कुछ भी नहीं था।

नहीं था। उसमें एक मेज़, एक कुर्सी और गांधीजी की ज़मीन पर सोने का एक पतला गद्दा, इतना ही साजो-सामान था। मीरा बहन उस कमरे की एक मात्र खिड़की को धो रही थीं। महात्माजी कुरसी पर बैठे थे और हल्की धूप में सूर्य-स्नान कर रहे थे। वे एक बड़े भारतीय नेता से बातचीत कर रहे थे। थोड़ी देर में बातचीत पूरी हुई, अतः मैं उनके पास पड़ी हुई एक कुरसी पर जाकर बैठ गया। हमने गोलमेज़ परिषद् की बात चलाई—क्या वह सफल होगी? नहीं, उसकी सफलता का कोई भी कारण गांधीजी के पास नहीं था। उनका मन उन्हें गवाही दे रहा था कि वह असफल हुए बिना रहेगी ही नहीं। वे बहुत ही सरलता से बोले,—"परन्तु विलायत आने के लिए मुझे ईश्वर की ओर से प्रेरणा हुई है। और इस प्रेरणा के पीछे कुछ-न-कुछ कारण तो होना ही चाहिए। इसीलिए मैंने अपने विचार को एक तरफ़ रख दिया है और मैं अन्त तक उसमें आशा और विश्वास रखूँगा।" लन्दन के कुछ पत्रों में इन पर निन्दा-भरे आक्षेप किये गये थे, उनकी बात मैंने निकाली और कहा—"मुझे आशा है कि आप इन चीजों से बेचैन नहीं हो रहे होंगे।" गांधीजी ने कहा,—"नहीं, इनसे मैं बेचैन तो नहीं हूँ, परन्तु इनसे मेरे हृदय में गहरी वेदना हो रही है। ज़रा आप इस बात को तो सोचिए कि मैंने अखबार-नवीसों के साथ कितनी स्पष्ट और स्वतंत्रता से बात-चीत की है। मैंने उन्हें सभी बातें बताई हैं, इतना होते हुए भी वे लोग ऐसे निन्दा-वचन और सफेद झूठ बातें लिखते हैं। इन बातों को सामने देखकर मुझे बेहद दुःख होता है। फिर भी वे कुछ हँसकर आगे बढ़े—"परन्तु इससे मैं अपने मन को संताप की आग में नहीं जलाता। ऐसे लेखों से कुछ नुकसान नहीं होगा। सत्य को हानि कौन पहुँचा सकता है?" इसके बाद मैंने दूसरे दिन आनेवाले सोमवार की—उनके मौन-दिवस—की बात निकाली और पूछा,—"आप परिषद् में हाज़िर रहेंगे?" उन्होंने अपने स्मित-हास्य को मुक्त हास्य में परिवर्तित करते हुए कहा,—"हां, मैं एक भी शब्द नहीं बोलूँगा, पर आप यह तो सोचें कि मुझे सुनने का कितना अच्छा अवसर प्राप्त होगा?" हमने अन्य कुछ विषयों पर बात की और उठते वक्त मैंने उनका समय लेने के लिए क्षमा-याचना की, क्योंकि वहां अन्य लोग प्रतीक्षा कर रहे थे।

उन्होंने मेरा हाथ पकड़ा और कहा,—"आप जब-तब आ सकें, ज़रूर [illegible]
शायद इन्तज़ार तो करना पड़ेगा। परन्तु आप जब तक लन्दन में हैं
आपसे मिलना रहना चाहता हूँ।" ये शब्द कहते समय उनके मुख-मु[illegible]
स्मित था।

इसके बाद मैंने गांधीजी को रविवार की प्रार्थना में देखा। य[illegible]
ही स्त्री-पुरुष प्रार्थना में भाग लेने आये हुए थे। महात्माजी
ज़मीन पर बैठे थे, वे खादी की चादर ओढ़े थे और उन
कम्बल पड़ा हुआ था। वे बैठे-बैठे ही प्रार्थना के विषय में बोले
मानता हूँ, और इसीलिए प्रार्थना करता हूँ।" प्रार्थना से उन्हें [illegible]
भी सब लोगों को उन्होंने बताया और बोले,—"अगर मैं प्रार्थना
मैं कुछ भी न कर सकता।" आध्यात्मिक जीवन की इस [illegible]
अनुभव अपनी शान्त भावना से हमारे आगे वर्णन करते हुए
ही [illegible] हो गई। मैं जिस अगली पंक्ति में बैठा था, उसमें [illegible]
के उनकी आवाज़ सुनाई दे रही थी कि नहीं इसमें सन्देह [illegible]
आत्मा में अधिक रहे, अधिक अन्तर्मुख होते हुए [illegible] आ
आत्मा के अनुसन्धान की—शायद इसकी अपेक्षा जो थी [illegible]
[illegible] हमारे सामने [illegible] नये अनुसन्धान की शिक्षा दी और
ऐसी नाजुक घड़ी में शब्दों की तो आवश्यकता ही नहीं [illegible]
स्थिति के कारण उस छोटे-से कमरे में जो [illegible] फैल
सब लोग ओत-प्रोत हो गये थे। [illegible]
जा सकता।

इसके बाद मैं गांधीजी से [illegible] तक नहीं मिल
भोजन कर रहे थे तब मैं उनके पास जाकर बैठा। [illegible]
थे। स्वभावतः मैं उनके नज़दीक बैठा। उनके सामने [illegible]
रखा था। गोद में एक [illegible] ([illegible]
[illegible]) उसमें [illegible] की [illegible]

प्यारेलाल उनके पास बैठे थे, पर उन्होंने हमारी बातचीत में भाग नहीं लिया। गोलमेज़ परिषद्, मेयर वाकर की मुलाक़ात की प्रार्थना, फिलस्तीन और यहूदी तथा उसका भारत के साथ सम्बन्ध, महात्माजी की अमेरिका-यात्रा आदि अनेक विषयों पर हम लोगों ने बातें कीं। आखिर में मैंने उनसे विदा ली ; क्योंकि मैं शुक्रवार को यहां आनेवाला था, और उनसे पुनः मिलने की मुझे आशा नहीं थी। उन्होंने तुरंत ही कटोरा और थाली एक तरफ़ रख दी। मुझसे हाथ मिलाया और कहा,—"हम दुबारा अमेरिका या भारत में मिलेंगे। परन्तु यदि हम लोग कभी न मिलें तो भी हम लोग साथ ही रहेंगे।"

दूसरे दिन रात को देवदास गांधी ने मुझे ढूँढ़ निकाला और कहा कि गांधीजी मुझसे मिलना चाहते हैं। मुझे आश्चर्य हुआ। गांधीजी सेन्ट जेम्स के महल में थे जहां कि गोलमेज़ परिषद् हो रही थी। मैं जल्दी-जल्दी देवदास के साथ वहां पहुँचा। गांधीजी समितियोंवाले कमरे में भोजन कर रहे थे। वह एक बड़ी गद्दीवाले तख़्ते पर बैठे थे। उन्होंने मुझे अपने पास बिठाया। अमेरिका से एक संदेश आया था, उसके विषय में उन्हें मुझसे बातचीत करनी थी। हमने आधे घण्टे तक बातचीत की। इस बीच गांधीजी की मण्डली के आदमी कमरे में आ-जा रहे थे। बाद में ऐसी खबर मिली कि नौकर लोग महल को बन्द करने का इन्तज़ार कर रहे हैं। इसलिए हम सब लोग उठे और मोटर में बैठ गये। गांधीजी ने मुझसे पूछा,—"आप किंग्सली हाल तक मेरे साथ मोटर में आ सकते हैं?" बेशक मैंने निमंत्रण स्वीकार किया और मैं उनके साथ मोटर में बैठा। हम लोग पूरब की तरफ़ शहर की मज़दूर-बस्ती की ओर मुड़े। हमारी मोटर घर के सामने आई तो हमने देखा कि दरवाज़ा बच्चों की भीड़ से रुका हुआ है। भारत से आये इस विचित्र आदमी के प्रति आसपास के बच्चों का कुतूहल बहुत ही जागृत हो गया था। सुबह-शाम गांधीजी को मोटर में आता-जाता देखने के लिए वे गली में इकट्ठे हो जाते थे। आज रात घर वापस आने में देर हो गई थी, तो भी ये बच्चे तो खड़े ही थे। गांधीजी के मोटर से उतरते ही इन्होंने ख़ूब शोर मचाया! गांधीजी चले और उन्होंने हँसमुख चेहरे से बच्चों की ओर नज़र डाली। बच्चों ने फिर किलकारियां

लगीं, और गांधीजी का हाथ और उनकी शाल को छूने के लिए
मैंने जल्दी से गांधीजी से विदा ली। और वे अपने कमरे में चले
मकानी गली में होकर जा रहा था तब मुझे उन बच्चों की आवाज़ प
दे रही थी। इसलिए मुझे गेलिली के उस पुरुष की याद आई जि
कहा था कि—"छोटे बच्चों को मेरे पास आने दो। उन्हें इन्कार
स्वर्ग का राज तो इन्हीं लोगों से बना है।"

यह तो गांधीजी के साथ मेरी मुलाक़ात हुई। यह तो
और इसमें मेरे अकेले के सिवा और किसी को रस भी नहीं आ
अनेक तत्त्व ऐसे हैं जो मेरे निजी अनुभव की मर्यादा से भी
मैं एक ऐसे पुरुष से मिला हूँ जो एक पुरुष से बहुत कुछ अधि
ऐतिहासिक व्यक्ति हैं और हमारे इस युग के लिए और भा
लिए महत्त्व के हैं। इनके गुणों के बारे में मेरे मन पर क्या अ
जगत के जिस प्रसंग में ये गुण सिलसिलेवार में भाग ले रहे
उन गुणों के बीच का जो संबंध है, उसके बारे में मेरे क्या वि

सबसे पहले तो मैं यही कहूँगा कि बरसों के अभ्यास औ
मैंने गांधीजी के बारे में जो कल्पना की थी, वह बिलकुल
नहीं, परन्तु कुछ-कुछ बातों में तो मैंने उन्हें अपनी कल्पना
मैंने अपने मन में उनकी जैसी धारणा की थी वे वैसे ही नि
उनकी सौम्यता, यदि सौम्यता नहीं कोई अन्य शब्द हो
असर डाले बिना रहती ही नहीं। इस पुरुष के तेज को जो
प्रकार, [illegible] में बल्ब निकल जाते हैं, उसी प्रकार
ऐसा अनुभव तो उन मिलनेवाले को होता ही है। परन्तु
कि उनकी सौम्यता [illegible] की नहीं है। वह सौम्य
जाती है। सुन्दर और सौन्दर्य से भरा हुआ कुछ जिस
से पोषण-तत्त्व खींच लेता है, उसी तरह उनके ये गुण हैं
सौम्यता उनके अन्तरंग की कोमलता, पवित्रता, सम्पूर्

निधि के कारण हैं। यह पुरुष प्रेम की भावना से प्रेरित है। यह प्रेम सारे संसार तक पहुँचता है। और छोटे-से-छोटे प्राणी को भी अपने बाहुपाश में बांध लेता है। उनके हृदय में प्रेम एकदम उभर आता है, इसीलिए उनका विवेक अत्यन्त मधुर होता है। अपने साथियों के साथ शान्ति से रहनेवाली आत्मा की वे जीती-जागती मूर्त्ति हैं।

बेशक इन सब गुणों को गांधीजी में देखने की मैंने धारणा की थी। गांधीजी के हृदय से पैदा होनेवाली उनकी व्यक्तित्व की मोहकता तो उनके बारे में लिखे गये एक-एक वर्णन में पूरी तरह से व्याप्त है। परन्तु उनमें और भी बहुत-से गुण हैं जो इन लेखों में कहीं नहीं देखे जाते। उनके चारित्र्य और प्रभाव डालने के गुणों के बारे में तो मुझे बिल्कुल ही आशा नहीं थी, इसलिए इन गुणों को देखकर तो मेरे आश्चर्य का ठिकाना न रहा।

इन गुणों में सबसे पहला गुण जो मैं यहां कहने जा रहा हूँ, वह है उनके शरीर की असाधारण सहन-शक्ति। वे तपस्वी हैं, इसलिए उनका शरीर कृश ज़रूर है, पर उनमें टक्कर झेलने और सहन करने की गज़ब की ताक़त है। मुझे डर था कि हिन्दुस्तान की गरमी से अभी आये उनके शरीर पर, जिस पर अधूरे ही वस्त्र हैं, इंग्लैण्ड की बरसातवाली आबहवा का ज़रूर कुछ खराब असर होगा। परन्तु उनके शरीर पर ज़रा भी इस हवा का खराब असर नहीं हुआ और वह अकेले ही ऐसे व्यक्ति थे जिन्हें इस चीज़ की फिक्र नहीं थी। दूसरा गुण उनका घण्टों परिश्रम करने के बाद भी थकान का अनुभव न होना था। सुबह चार बजे वे एकान्त में प्रार्थना करने के लिए उठ जाते हैं। इसके बाद गलियों में तेज़ चाल से घूमने चले जाते हैं। इसके बाद सुबह का नाश्ता, मन्त्रियों के साथ बात-चीत, और मुलाक़ातें शुरू होती हैं। दस बजे गोलमेज़ परिषद् में जाते हैं। वहां सारा दिन मुलाक़ात और चर्चाओं में जाता है। सांझ को सात बजे वे अपने मित्रों व कुटुम्बियों के साथ सान्ध्य प्रार्थना करते हैं। इसके बाद फिर मुलाक़ातें और सभा-समितियां चलती हैं, और ये रात को देर तक होती रहती हैं। इन सब कार्यों के बीच पत्र लिखना, कातना और इसके अलावा अन्य नियमित प्रवृत्तियाँ भी चलती ही रहती हैं। इस

प्रकार प्रतिदिन १९ से २० घण्टे तक का कार्य पूरा कर
सकते हैं ? क्या सूक्त-पान की प्रार्थना के बल पर ?
उनके शरीर को थकावट लगती है, पर उन्हें हानि नहीं
इन प्रश्नों का जवाब आप लोगों को कैसे देना हो ? मैं
महात्माजी की शारीरिक ताकत अद्भुत है। एक
दिन हुए लिखा था कि उनके चेहरे पर थकावट के
नाम नहीं जानता। जिस थकावट में हम लोगों में
जाते हैं, उस थकावट में गांधीजी ने कभी की शक्ति

उनका एक और अद्भुत गुण उनकी मानसि
...क कर, पुस्तक-नाम्ना कहा है कि गांधीजी
आत्मा की पवित्रता के साथ जो बुद्धि-बल के सं
सही परम्परा में नहीं आई है, उसके कारण भी
रहूँ। और जिस तरह की असाधारण शक्ति
गांधीजी में अभाव था, शायद इसलिए भी मे

ही इन सबके लिए काफ़ी थे। और आखिर में इस बुद्धि-बल की लड़ाई में गांधीजी की विजय हुई और विचक्षण अंग्रेजों ने यह स्वीकार कर इतना हर्पनाद किया कि वह चारों दिशाओं में फैल गया। इसलिए दोस्तो, आप लोग भ्रम में न पड़ें! महात्माजी आध्यात्मिक दृष्टि से जितने प्रभुपरायण हैं उतने ही वे बुद्धि-बल में समर्थ हैं। हिन्दुस्तान में अपने नेतृत्व के बारे में तो वे अपना सानी नहीं रखते।

उनका एक और गुण देखकर मुझे आश्चर्य हुआ और अब भी है। उस गुण का वर्णन मैं नहीं कर सकता। गांधीजी के स्वभाव में अमुक कठोरता और निश्चलता भी है, यहां मैं उसी की बात कर रहा हूं। हम लोग उसे कठोरता कह सकते हैं—पर गांधीजी के मन में जो सौम्यता वास करती है, उसके सामने तो कठोरता का कोई मेल ही नहीं खाता। मेरे मन में उनके जिन गुणों ने घर कर लिया, उनमें विचारों की सरलता, श्रद्धा की कठोरता, किये जानेवाले काम के लिए एक-निष्ठा, आदि हैं। अपनी एक-निष्ठा में तो वे जहाज़ के दाण्ड के समान हैं जो उसे ठीक-ठीक दिशा में ले जाता है। उनके इस गुण को तो मैंने उनके पहले भाषण में ही जो उन्होंने लन्दन में अपनी स्वागत-सभा में दिया था, जान लिया था। यह भाषण शान्त आवाज़ में दिया गया था; तो भी इसके जैसा सभी दृष्टियों से सम्पूर्ण भाषण आज तक मैंने नहीं सुना। यही गुण उनके गोलमेज़ परिषद के पहले भाषण में भी नज़र आता है। इस भाषण में उन्होंने राजा के अमलदारों से कहा,—"एक समय ऐसा था जब मैं स्वयं ब्रिटिश जनता होने में और कहे जाने में अभिमान महसूस करता था। लेकिन आज अनेक वर्षों से मैंने अपने को ब्रिटिश-जनता कहना छोड़ दिया है। आज प्रजा की अपेक्षा मैं अपने को सरकार का विद्रोही कहलना अधिक पसन्द करूंगा।" उसी परिषद् में उन्होंने जो दूसरा भाषण दिया था, उसमें भी इन गुणों का स्वस्थ और शान्त प्रदर्शन स्पष्ट था। उस समय उन्होंने मेज़ के आसपास नज़र डाली और धीमी आवाज़ से कहा,—"हमें जिस भारतीय जनता का प्रतिनिधि होना चाहिए, वास्तव में हम उसके प्रतिनिधि नहीं हैं, अपितु सरकार द्वारा नामज़द किये गये हैं।" उनके इस गुण का सबसे अच्छा उदाहरण तो लंकाशायर की उनकी नाटक की-सी एक मुलाक़ात में मालूम हुआ। लंकाशायर के भूखे और दुःखी स्त्री-

पुरुषों को देखकर उनके मन को बेहद दुःख हुआ। तो भी उन्होंने उन
कहा,—"आपके यहाँ तीस लाख मनुष्य बेकार हैं, परन्तु हमारे यहाँ तो
तीस करोड़ आदमी वर्ष में छह मास बेकार रहते हैं...मैं तुम्हारा भला -
परन्तु हिन्दुस्तान के करोड़ों कंगालों की कब्रों पर जीने की इच्छा तो अ
करें।" गांधीजी में फ़ौलाद की-सी ताकत है। वह शायद ही झुकें—
शर्तों के विषय में बातचीत करने के लिए वे अनेक बार झुके हैं प
टूट नहीं सकते, यानी निराशा की चोटों से घबरा नहीं सकते। उनकी
तलवार जैसी चाहो वैसी मुड़ सकती है; परन्तु वह निर्दयता से प्रहार
मर्मस्थल तक पहुँच जाती है। इस विषय में गांधीजी ईसामसीह की
नम्र हैं पर 'भीषण नम्र' हैं।

आखिर में गांधीजी की विनोदवृत्ति, उनकी हँसी-दिल्लगी और
स्वभाव की बात कहूँ? उनके जैसा जल्दी और मुक्त-हास्य करनेवाला
तक मैंने कोई नहीं देखा। सहज ही, परन्तु कारण के मिलते ही,
झरने की तरह उभर आता है। इसी कारण उनकी हँसी में
यह हँसी उन्हें एकाएक और बिना धारणा के नहीं आती,
स्वभाव में हमेशा की तरह कायम ही रहती है। पहले तो मुझे
आनन्द और मुक्त-हास्य देखकर असमंजस हो गया था। मुझे
के सिर पर अपने देश का इतना बड़ा बोझा है। साम्राज्य के
विषम प्रसंग इस क्षण उनके सामने हैं। संसार में करोड़ों लो
और एक-एक कान आतुरता से सुनते हैं और देखते हैं। तो
या आश्चर्य-भरी बातों को सुनकर इतने आनन्द के नशे में कैसे
इतनी अधिक महत्त्व की घटनाओं के घटित होने पर भी
हँस सकते हैं, यह आश्चर्यजनक नहीं तो और क्या? तो
की कोशिश की। मुझे ऐसा मालूम पड़ा कि गांधीजी का
सोता उनकी आत्मा के गूढ़तम स्थान से फूटता है।
— है, या, क्यों न हँसे?

इस तरह गांधीजी संसारी जीवन की हर एक चिन्ता से मुक्त हैं। अन्य सांसारिक चिन्ताएँ, जिनसे और मनुष्य दबे रहते हैं, उनके आस-पास नहीं हैं। उन्हें सुबह के बाद अपने शाम के भोजन की चिन्ता नहीं है। न तो उन्हें अपने कपड़ों की चिन्ता है, और न अपने शृङ्गार की। वे पैसा तो अपने पास रखते ही नहीं हैं, फिर उन्हें उसके खोने की चिन्ता ही कहाँ ? उनके पास अपनी सम्पत्ति नहीं है; इसलिए उन्हें कोई लूट नहीं सकता। दूसरे शब्दों में कहें तो पृथ्वी की नश्वर चीज़ों के संग्रह में जो चिन्ताएँ हैं, उनसे वे बिलकुल मुक्त हैं, "जहाँ जीव-जन्तु और और जंग चीज़ों को बरबाद कर देते हैं और जहाँ चोर सेंध मार कर धन चुरा लेते हैं, ऐसी पृथ्वी पर उन्होंने संपत्ति नहीं जमा की।" उनकी सम्पत्ति तो "स्वर्ग में संग्रहीत है, जहाँ न जीव-जन्तु उसे खराब कर सकते हैं, न जंग लग सकता है और न जहाँ चोर ही सेंध लगा सकता है।" उनका मन स्वस्थ और हृदय मुक्त है।

परन्तु इससे भी ज़्यादा महत्त्व की एक चीज़ और है। महात्माजी ईश्वर पर पूरी-पूरी श्रद्धा रखते हैं। यह चीज़ हम जड़वादी पश्चिमवासियों को शायद अद्भुत लगे, परन्तु गांधीजी तो वास्तव में यही मानते हैं। उन्हें अपनी प्रार्थना में भगवान् के दर्शन होते हैं। उनका तो यह दृढ़ विश्वास है कि जो लोग ईश्वर को खोजते हैं, उन्हें ईश्वरीय इच्छा का स्पष्ट दर्शन होता है; और जो ईश्वर को चाहते हैं, उन्हें उसी की इच्छा के मुताबिक चलना होता है। गांधीजी की नज़रों में ईश्वर की इच्छा के मुताबिक चलना सबसे बड़ी चीज़ है। उसके परिणाम का विचार वे संतोष और विश्वासपूर्वक उस राजाधिराज पर छोड़ देते हैं। इन मामलों में गांधीजी अपने हिन्दू-शास्त्रों का श्रद्धापूर्वक अनुसरण करते हैं। क्योंकि भगवद्गीता में यह स्पष्ट कहा गया है कि मनुष्य का अधिकार सिर्फ कर्म करने में है। और उस कर्म का फल ईश्वर के हाथ में है। इसलिए गांधीजी कभी चिन्ता नहीं करते, परन्तु श्रद्धा रखते हैं। अनन्त काल पर विश्वास है, इसलिए वे वर्तमान काल में सुखी रह सकते हैं।

यह चीज़ हमें गांधीजी के सामर्थ्य की स्पष्ट ही झाँकी दिला देती है। लन्दन की फ्रेण्ड्स मीटिंग हाउस वाली स्वागत-सभा में मि० लारेन्स हाउसमैन ने कहा

था,—"आपको अपने देश में भी बहुत-से लोग नहीं जानते। ".
सत्यनिष्ठ हैं कि हममें से बहुत-से लोग उसे देखकर द्विविधा में पड़ ज
वास्तव में ऐसे पुरुष के सामने हम क्या कर सकते हैं? वे
सामान्य पुरुष की तरह आवें तो उन्हें पहुँचा जा सकता है। यदि
में तलवार लें तो उससे भी ज़बरदस्त तलवार हमें ज़मीनदोज़ कर
अगर सेना का आसरा लें तो उससे भी बलवान् सेना शिकस्त दे देती
की स्थिति में भी बहुत ही आश्चर्य होता है कि ब्रिटेन इस विद्रोही र
;अपने लन्दन के टावरवाले क़ैदखाने में डालकर उस पर राजद्रोह का
नहीं चलाता। उसके मुकाबले में यह पुरुष तो लन्दन में खुले शरीर
से आता है। उनके पास के हथियारों में सिर्फ़ 'श्रद्धा की ढाल' अ
तलवार' ही तो है। ऐसे आदमी को कैसे हराया जा सकता है?
विरु-नियमरूपी बख़्तर हो, उसे कैसे परास्त किया जा सकता है?
है, उसी तरह न तो इन्हें शारीरिक बल से हराया जा सकता है, व
से। सिर्फ़ आत्मबल से हराया जा सकता है।" गांधीजी अमोघ हैं,
उन्होंने बलों से अपने विरोधियों पर विजय पा ली है। *

परिशिष्ट २

गांधीजी का 'ऑफ़िस'

(नं० ८८ नाइट्सब्रिज, लन्दन)

एगेथा हेरीसन

सन् १९३१ सितम्बर मास से पहले बहुत कम लोगों ने इस घर की तरफ़ ध्यान दिया होगा। यह एक ही रात में एकदम मशहूर हो गया ; क्योंकि दूसरी गोलमेज़ परिषद् के समय महात्मा गांधी ने अपना कार्यालय इसी जगह रखा था। परिषद् के अन्य सदस्य तो मेफ़ेर के आमोद-प्रमोद के सभी साधनों से परिपूर्ण होटल में ठहरे थे। परन्तु इस पुरुष ने लन्दन के पूर्वी भाग में जहाँ ग़रीब मज़दूर वर्ग रहता है, वहां अपने रहने के लिए किंग्सली हाल के निमंत्रण को स्वीकार किया था। परिषद् के अन्य सदस्यों को यह जगह बहुत दूर पड़ती थी, वो मुहल्ला शहर से लगभग छह मील दूर था। परिषद्-सम्बन्धी बातचीत रात-दिन चलती थी। इसलिए यह आवश्यक था कि गांधीजी किसी मध्यवर्ती स्थान में ठहरें। मित्रों ने उन्हें समझाया ; और उन्होंने सेण्ट जेम्स के महल से कुछ अधिक नज़दीक—नं० ८८ नाइट्सब्रिज को दिन के काम-काज के लिए अपना दफ्तर बनाना स्वीकार किया।

मैं नहीं समझती कि इस व्यवस्था से गांधीजी कभी .खुश हुए हों। उसमें सभी तरह की सहूलियतें थीं, यह वे मानते थे। परन्तु इस कारण जो खर्च हो रहा था, उसकी तो वे रात-दिन ज़िक्र किया करते थे। नाइट्सब्रिज में रहने की क़ीमत तो चुकानी ही पड़ेगी। गांधीजी इस क़ीमत का अर्थ भारत में भूखों मरनेवाली प्रजा की .खुराक समझते थे। इसी घर की बात को लेकर गांधीजी और चार्ली एण्ड्रूज़, इन दो परम मित्रों में मतभेद हो गया था। मि० एण्ड्रूज़ समझते थे—और उनका

यह समझना स्वाभाविक ही था कि गांधीजी को अनेक महत्व के कार्य
इसीलिए उनकी शक्ति और समय बचाने के हेतु जितना ख़र्च करना पड़े
दिल से करना चाहिए। गांधीजी हमेशा ख़र्च की चिन्ता किया करते।
को बहुत कम मौका मिलता था, फिर भी वे ज़िद करके किंग्सली हॉल
बीतने पर भी लौट जाते थे। परन्तु दूसरे वक्त, जब परिषद् की बैठक न
तब वे नं० ८८ नाइट्सब्रिज में ही अपना समय बिताते थे।

थोड़े ही समय में यह घर दफ़्तर बन गया। एण्ड्रूज़ के हिस्से
सा कोने का कमरा आया। वे गांधीजी की मदद में अपना समय औ
लगा देते थे। जब उन्हें थोड़ा-सा समय मिलता तब वे अपनी '
क्राइस्ट' (मैं ईसा का कितना ऋणी हूँ) नामक किताब लिखने
शायद गड़बड़ी के दिनों में उन्होंने मुझे अपनी उस किताब के
दुबारा लिखवाये थे। वे उस किताब की पाण्डुलिपि को लेकर अपने
यहाँ बैठते, उसे ध्यान से पढ़ते और फिर उसमें संशोधन करते
विलायत-यात्रा की सफलता के लिए वे जी-तोड़ मेहनत करते थे।

दूसरी थीं मिसेज़ पोलक। उन्होंने दक्षिण अफ्रिका में गांधी
थीं। यहाँ भी वे अपना सारा काम छोड़कर गांधीजी को शार्ट
काम द्वारा मदद देने के लिए आ गई थीं। मिसेस पोलक हेन
लगती हैं। पोलक ने गांधीजी को दक्षिण अफ्रिका में बहुत ही
स्वयं जेल भी गये थे। श्रीमती पोलक द्वारा लिखी गई 'गांधी'
नामक पुस्तक उनके दक्षिण अफ्रिका के ऐतिहासिक दिनों का व-
है, और यह किताब पढ़ने लायक भी है। लाडीवाले
ठहरे हुए थे और उनकी पत्नी ने सचमुच वहां गृहिणी का
था। हमारे एक और सुन्दर साथी कुटनुक के रहनेवाले थे
उन्होंने जिस मौन शुभ वृत्ति से हमारी सेवा का कार्य किया,
लिखा और जान ही कौन सकता है? इसके अलावा और भी
में आते-जाते रहते थे।

हमारे उस परिवार का वर्णन तो असंभव है, लेकिन उस नाटक के मुख्य पात्रों में से कुछ के बारे में थोड़ा-थोड़ा कहा जाय तो अनुचित न होगा। उन पात्रों में सबसे पहला नम्बर तो महात्मा गांधी का आता है।

इस पुरुष का सटीक मूल्यांकन करना कम-से-कम मेरे लिए तो मुश्किल ही है। क्योंकि आजकल इस अटपटी और कपटी दुनिया में जब सम्पूर्ण सत्यनिष्ठ और सरल-चित्तवाले मनुष्य का दर्शन होता है, तो उसके विषय में वर्णन करने के लिए बरबस ही हमारा मुँह सिल जाता है। ऐसे लोग सरकार का काम कितना कठिन कर देते हैं, यह मैं स्पष्ट समझ सकती हूँ, क्योंकि इनकी सत्यनिष्ठा और सरलता देखकर वे लोग असमंजस में पड़ जाते हैं। इसीलिए अनेक बार मैं यह भी सोचने लगती हूँ कि गांधीजी अपनी इन दोनों चीज़ों में सामने के पक्ष की मुसीबतों को देखकर थोड़ी ढील दें तो अच्छा हो। उनके साथ काम करना बहुत ही मुश्किल है, पर उनमें पूरी-पूरी मानवता तो है ही। इसलिए हमारे मन में उनके प्रति बहुत ही प्रेम उत्पन्न हो जाता है। इतनी अधिक गड़बड़ी में भी वे अपना काम कर लेते हैं, यह देखकर आश्चर्य होता है। वे बहुत ही कम अकेले रहते हैं। उन्हें अकेले देखने का एक ही प्रसंग मुझे मिला था। गोलमेज़ परिषद् के अन्तिम भाग में उसकी जो प्रसिद्ध बैठक हुई थी, उसमें प्रधान मन्त्री ने सरकारी नीति की घोषणा की थी, और गांधीजी ने जो उसका जवाब दिया था, उसमें भावी घटनाओं की भविष्य-वाणी थी। इसके बाद वे तुरन्त ही नं० ८८ के अपने कार्यालय पर आये और आग के सामने बैठकर कातने लगे। मैं उन्हें कमरे के दूसरे किनारे से देख रही थी। मैं मन-ही-मन सोचने लगी कि सारी पृथ्वी का भार अपने निर्बल कन्धों पर उठानेवाले उस ऐटलस की दन्तकथा के जैसी ही इनकी भी स्थिति है।

गांधीजी गुप्त मंत्रणा में विश्वास नहीं करते। अत्यन्त महत्व की बात चल रही हो तो भी आस-पास तरह-तरह के स्त्री-पुरुष तो बैठे ही रहते हैं। तार और पत्र इधर-उधर पड़े रहते हैं, क्योंकि गांधीजी मनुष्यों पर पूरा-पूरा विश्वास रखते हैं। भारत जाने का समय आया, उस समय आखिरी वक़्त गांधीजी मुझसे पूछने लगे,—"आप इन दोनों देशों—भारत और ब्रिटेन—के आपसी समझौते के काम को

अपने हाथ में लेंगी ?" ये बातें जब शुरू हुईं तब मैं, गांधीजी और [illegible] जेण्डर तीन जने थे। परन्तु थोड़ी ही देर में अच्छी खासी भीड़ जमा हो [illegible] सब लोगों की उपस्थिति में ही मेरे काम और उसके लिए धन की व्यव[illegible] बात चली, और मैं किस तरह रहती हूँ तथा मेरा कितना खर्च होता है, [illegible] में सबके सामने ही गांधीजी ने मुझसे सवाल पूछे और मैंने उनका उत्तर [illegible]

उनके उपवास के समय मुझे ऐसा महसूस हुआ कि अपने काम [illegible] उनसे सलाह लेनी चाहिए। अतः मैंने उन्हें तार दिया। थोड़े ही [illegible] जवाब आया,—'आपकी कठिनाई मैं समझता हूं। भगवान उ[illegible] दर्शन करेंगे।"

इसके बाद आते हैं उनके सखा महादेव देसाई। दुनिया के लिए [illegible] आवश्यक है; क्योंकि भारत की परिस्थिति में उनका स्थान बहुत ऊँ[illegible] और वे गांधीजी के दाहिने हाथ हैं। इस समय वे गांधीजी के साथ [illegible] हैं। एक बार मैंने महादेव से पूछा,—"आप राष्ट्रीय आन्दोलन में [illegible] वे बोले,—"बहुत समय हुआ जब श्री गोखले दक्षिण अफ्रिका हो[illegible] उनका भाषण सुना था। उसमें उन्होंने गांधीजी के बारे में बहुत- [illegible] गांधीजी की ताकत के बारे में उन्होंने एक वाक्य कहा था, वह [illegible] भी घर किये हुए है। उन्होंने कहा था,—"यह पुरुष मिट्टी के [illegible] सकता है।" ऐसी शक्तिवाले पुरुष के विषय में महादेव ने [illegible] चाहा। इसी का यह परिणाम हुआ कि आज गांधीजी जिन [illegible] आधार मानते हैं, उनमें से एक महादेव भी हैं।

महादेव ने भारत जाने से पहले अपने छोटे पुत्र के लि[illegible] खरीदने के लिए मेरी मदद चाही। साबरमती आश्रम में [illegible] अपनी फोटो भी बनाई। वह पांच वर्ष का गोल-मटोल बालक [illegible] मिलनेवालों को मोह में डाल देता था। नं० ८८ के [illegible] यह बच्चों के खिलौनों के लिए मशहूर है। वहां की बहु[illegible] [illegible] परन्तु जिस शोभा से खिलौनों को [illegible]

देखकर हमें बेहद दुःख हुआ। मैं जानती थी कि एक धनी मित्र ने उन्हें अमुक रकम दी थी और कहा था कि बच्चे के लिए कोई खिलौना लेना। महादेव बोले, "दूसरे बच्चों को खाना तक नसीब नहीं होता, और मैं अपने बच्चे के लिए खिलौने कैसे खरीदूँ ?" इन वाक्यों को बोलते समय उनके चेहरे पर जो भाव थे, वे मैं कभी भूल नहीं सकती। मैं तुरन्त ही उन्हें वूल्वर्थ की दूकान पर ले गई। वहाँ हमने बच्चे के लिए छह पेनी की रंग की डिब्बी और चित्र निकालने की एक कापी भी ली। मैं सोचती हूँ, महादेव के जेल जाने से पहले उसे वह डिब्बी और कापी मिली होगी या नहीं ? पैसे के व्यवहार का काम महादेव के हाथ में था। मैंने जिन-जिन संस्थाओं में कार्य किया था, उनमें कोई भी संस्था इतनी बारीकी से पैसे का हिसाब नहीं रखती थी।

अब देवदास गांधी सामने आते हैं। उनकी और उनके पिता की मुखाकृति में बहुत ही कम साम्य है। सिर्फ पिता का तेजस्वी हास्य ही इनमें आया है। इनमें मनुष्यों के मन जीत लेने की शक्ति भी है। यहाँ लोगों पर उन्होंने अच्छा प्रभाव डाला। क्योंकि वे हरेक के साथ मिलते-जुलते और बात करते थे और इसके अलावा राजनीति में भी इनकी बुद्धि बहुत ही गहराई तक जाती है। अन्य लोगों के साथ ये भी परिषद् में उपस्थित रहते तथा और भी बहुत-से काम करते थे। इस मण्डली के जाने के थोड़े दिनों बाद मैं नं० ८८,के पास के एक दुग्धालय में गई। वहाँ लोगों ने मुझसे बहुत ही प्रेम से देवदास की खबर पूछी। और जब उन्हें यह मालूम हुआ कि वे जेल में हैं तो वे दुःखी हुए।

गांधीजी के एक और साथी श्री प्यारेलाल हैं। ये स्वभाव के सौम्य और चतुर हैं। पुस्तकों और संगीत के शौकीन हैं और स्वप्न-द्रष्टा भी हैं। उन्होंने भी गांधीजी के निकट आने के लिए त्याग किया है और जीवन-दान दिया है। श्री प्यारे-लाल और मैंने अनेक बार साथ-साथ काम किया है, इसीलिए हम लोग एक-दूसरे के निकट परिचय में भी आये। गांधीजी के अनुयायी को कितने कठोर नियमों का पालन करना पड़ता है, यह मैंने इन्हीं से सीखा। एक बार गांधीजी ने एक पत्र माँगा, वह मिलता ही नहीं था। जहाँ रोज़ हज़ारों पत्र आते हों, और उन्हें

सँभालनेवाले थोड़े मनुष्य हों, वहाँ एक-आध पत्र का खो जाना मामूली
अनेक घण्टों की खोज के बाद मैंने कहा, – "अब छोड़िए न इस बला को
लाल बोले,—"ढूँढ़े बिना चारा नहीं। 'नहीं मिलता' ऐसा गांधीजी से न
जा सकता।" और सचमुच दो दिन की खोज के बाद पत्र मिला।
जब फुरसत मिलती तब श्री प्यारेलाल मुझे भारत की, अपने कुटुम्ब और
कांग्रेस के आन्दोलन में भाग लेनेवाली अपनी वृद्धा माता की, डाक्टरी
अपनी बहन की बातें बताते। बाद में मैंने अखबारों में पढ़ा कि
गई हैं। उनकी बहन का एक पत्र मेरे पास आया था, उसमें आदि
के जीवन पर क्या असर हुआ, आदि बातों का ज़िक्र था और लिखा
दिनों बाद हमारे विचारों पर भी आक्रमण होगा।" और आज
मुझे बार-बार याद आ रहा है, जो मैं कभी नहीं भूल सकती।

एक और भाई बरनार्ड आलुविहारी थे। ये भाई लंका के
चुके हैं और आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी में अध्ययन करते थे। उनके
नहीं है। नं० ८८ में उनका काम टेलीफोन-व्यवहार सँभालना
व्यवहार को चलाने की उनकी तरकीब अद्वितीय थी। टेलीफोन
बज उठती। कभी उस पर से हमें महत्वपूर्ण संदेश मिल
बार बेवकूफी-भरी बातें। इसलिए टेलीफोन करनेवाले को क
का उत्तर दिया जाना स्वाभाविक ही था। एक क्षण में हृदय-स्
संदेशा मिलता तो दूसरे ही क्षण कोई अखबार-नवीस पूछ
गांधी सिर्फ कच्छ पहनकर ही सम्राट् से मिलनेवाले हैं, न
पास बैठी-बैठी देख रही थी। बरनार्ड ने ऐसे प्रश्न पूछनेव
और गम्भीरता से मजाक-भरा जवाब दिया,—"नहीं, नहीं,
पतलून और फ्राक कोट पहनकर जायँगे।" इसके बाद
स्वाभाविक ही था। इसी प्रकार यदि किसी ऊँचे ओहदे
का जवाब दिया जाता तो मुश्किल हो जाती। परन्तु
... नम्र और होशियार नौजवान की कुशलता से ...

बढ़ता ही जाता था। भारत पहुँचने के थोड़े दिन वाद यह जवान भी पकड़ लिया गया।

आखिरी वारी है मीरा बहन की। वे एक अंग्रेज़ अफसर, नौ-सेना के बड़े अफसर, एडमिरल की पुत्री हैं। गांधीजी की शिष्या होने के हेतु ही उन्होंने सांसारिक जीवन त्यागा है। विलायत आने से पहले उनके वारे में अनेक वातें हो रही थीं। उनमें से कुछ एक वातें तो ठीक थीं और कुछ एक असंगत और अश्लील थीं। मैं इनसे मिलने के लिए वहुत उत्सुक थी। परन्तु मुझे तव वहुत ही आश्चर्य हुआ जव मैंने उन्हें किंग्सली हाल के गांधीजी के छोटे-से कमरे को झाड़ते देखा। मीरा वहन को इस रूप में देखना मेरे लिए एक अजीव कल्पना थी। थोड़ी ही देर में हम दोनों में दोस्ती हो गई, और इसके वाद के सप्ताहों में मेरा और उनका गाढ़ परिचय हो गया। एक दिन मैंने उनसे पूछा,—"आपको इस पुराने वातावरण में रहकर अफसोस या पश्चात्ताप नहीं होता?" इस प्रश्न का उत्तर देते हुए उनके चेहरे पर जो भाव थे, वे आज भी मेरे मन पर अंकित हैं। उन्होंने कहा,—"मैंने जव इस जीवन में पदार्पण किया, उस समय मुझे लगा कि अव मैं वास्तव में अपने घर पहुँची हूँ।" विलायत में अखवारनवीस इनका पीछा नहीं छोड़ते थे, इनकी इच्छा प्रकट में आने की क़तई नहीं थी और इस चीज़ को रोकने के लिए वे पूरा-पूरा प्रयत्न भी करती थीं। वे वहुत ही कम सभाओं में भाषण देतीं, परन्तु जहां वोलतीं वहां उनके भाषण का जनता पर गहरा असर पड़ता था। उनके सगे-सम्वन्धी जो उनसे मिलना चाहते थे, उन्हें नं० ८८ के कार्यालय में ही आना पड़ता था और जिस छोटी-सी कोठरी में मीरा वहन वैठकर गांधीजी के लिए खाना तैयार करती थीं उसमें वैठकर उनसे वातचीत करनी पड़ती थी। एक घटना मुझे विशेषतः याद आ रही है। लिसियम क्लव में परिषदों के सदस्यों का सत्कार करने के लिए एक समारंभ किया गया था। उसमें हम दोनों भी गई थीं। अनेक वार इस क्लव में वड़े-वड़े और प्रभावोत्पादक जल्से होते रहे हैं। पोशाक उतारनेवाले कमरे के नौकर को मीरा वहन ने अपनी सादी खद्दर की शाल दी। यह शाल अन्य स्त्रियों की मखमल और रुएँदार पोशाकों के साथ ही रखी जानेवाली थी। उसी

समय मीरा बहन ने कहा,—"आखिरी बार मैं जब इस कक्ष में आई थी,
तो मैं इसकी सदस्या थी।" इस महिला का वर्णन करते हुए, मुझे
कहना उचित प्रतीत होता है कि इस महिला को तो वास्तव में अपना
गया है। अन्य किसी भी तरीके से इनका वर्णन नहीं हो सकता।
बम्बई की जेल को अपनी दूसरी यात्रा का समय पूरा कर रही हैं।

गांधीजी की अल्प काया की रक्षा के हेतु सरकार ने जिन दो
अधिकारियों को नियुक्त किया था, उनका वर्णन किये बिना यह चित्र
जायगा। इस जोड़ी को सामान्यतः खास-खास राजाओं के पीछे घूमने
किया जाता है। ये लोग तो हरेक मनुष्य के अवगुण देखने के
परन्तु अब इनका काम दूसरा ही हो गया। वे लोग स्नेह-पूर्वक गां
पुरुष" कहते थे। गांधीजी के सहवास से उनके मन में गांधीजी
हो गया। अब वे गांधीजी को अपना मित्र समझने लग गये थे
तरह की सेवा करने को हमेशा तैयार रहते थे। हमारा काम
तब ये लोग स्वेच्छा से हमारी मदद करने लगे। गांधीजी के
एक उच्च अधिकारी ने उनसे पूछा,—"मैं आपको और क्या
गांधीजी ने नम्रता से कहा,—"इन दो गुप्त पुलिस के आद
ब्रिंडिसी तक सफर करने की इजाज़त दीजिए।" अधिक
क्यों?" गांधीजी ने कहा,—"ये लोग मेरे ही परिवार के हैं
यह प्रार्थना स्वीकार की गई और गांधीजी ने जब तक यूरो
ये दोनों साथ रहे। ये दोनों आदमी आज भी जब अपना
हैं, तो उनकी जेबों में भारत से गांधीजी द्वारा भेजी हुई
उन घड़ियों पर अंग्रेज़ी में लिखा है,—"मोहनदास गांधी
भेंट।" गुप्त पुलिस के अधिकारियों को आज यदि अ
स्वतंत्रता हो तो आज ये दोनों आदमी कितनी ही बातें
गांधीजी के बारे में बता सकते हैं।

—जो लिखी थीं; उनका

साधारण संयोगों में तो ये स्त्रियाँ दिन में अमुक घण्टे ही काम करती हैं। परन्तु हमारे यहाँ की स्त्रियाँ तो रात-दिन खुशी से काम करती थीं। दरवाज़े की घंटी निरन्तर बजती हो तो ये तुरन्त ही जाकर दरवाज़ा खोलतीं और दिन-रात किसी भी समय हमारे परिवार के लोगों को भोजन कराने के लिए तैयार रहतीं।

इन दिनों के संस्मरण गिने नहीं जा सकते। इनमें से अमुक संस्मरणों को विशेष महत्त्व देना भी उतना ही कठिन है। तो भी कुछ प्रसंग तो एकदम याद आ ही जाते हैं। सांध्य प्रार्थना के समय कमरा ठसाठस भर जाता। लोग इस महापुरुष के रहन-सहन के बारे में कुछ अधिक बातें जानने की उत्कण्ठा से आते थे। सुबह शीघ्र ही जब गांधीजी आते तब ऐसा महसूस होता था कि उनकी परछाईं जैसी कोई चीज़ उनके कमरे में प्रवेश कर रही है। इतने में वे तुरन्त ही मोटर से कूदकर और थोड़ी ही देर में अपने कमरे की आग के सामने आकर कातने लगते। कमरे के हरेक कोने में मशहूर शिल्पी और चित्रकार उनकी मूर्ति बनाने के लिए बैठे रहते थे। तुरन्त ही जवाब देनेवाले पत्र और तार आस-पास अस्त-व्यस्त पड़े रहते थे। परिषद् के सदस्य परिषद् शुरू होने से पहले उनके अभिप्राय जानने के लिए ज़मीन पर बैठे रहते थे। दुनिया-भर से आये हुए लोग उनका एक ही शब्द सुनने को आतुर रहते। चार्ली एण्ड्रूज़ और होरेस एलेक्ज़ेंडर इन सबके बीच बैठे काम करते रहते थे। मिसेस चीसमैन कागज़-पेन्सिल लेकर इस इन्तज़ार में धीरज से बैठी रहती थीं कि गांधीजी कब उन्हें खास-खास पत्र लिखाते हैं। और इन सबके बीचों-बीच गांधीजी की शान्त अविकल मूर्ति विराजमान रहती थी। परिषद् का समय होते ही वे तुरन्त उठकर बाहर खड़ी हुई मोटर में जा बैठते। गुप्त पुलिस के अधिकारी हाँफते-हाँफते उनके पीछे जाकर मोटर में बैठते और साथ-ही-साथ गांधीजी का कोई सहायक उनका ऐतिहासिक चरखा और भोजन का टोकरा लेकर दौड़ता-दौड़ता मोटर के पास पहुँच जाता।

एक और प्रसंग मेरी स्मृति में अभी तक जमा हुआ है। शाम का समय था। अमेरिका के शिकागो शहर से बिशप फिशिर का फोन आया। वे गांधीजी को अमेरिका आने का निमंत्रण देना चाहते थे। गांधीजी ने आग्रह से स्वयं फोन लेकर

उनसे बात की। मैं और एण्ड्रूज़ पास ही खड़े रहे कि कहीं ऐसा न हो
कि फोन ठीक-ठीक सुनाई न पड़े। क्योंकि वे बहुत ही कम फोन पर बात
बातचीत को जानने के लिए अखबारों के संवाददाता बाहर चक्कर
परन्तु गांधीजी ने इस खर्चीली बातचीत को तुरन्त ही निपटा दिया।
उन्हें यही विचार हुआ होगा कि इस फोन की बातचीत के पीछे कितना
होगा, और वही खर्च गरीबों को दिया जाय तो उनका कितना लाभ

अनेक विनोदी घटनाएं भी हुईं। एक दिन मीरा बहन ने देखा
लिए खास सँभालकर रखी हुई सेलेड की भाजी गायब है। वे
खोज करने लगीं और आखिर में सबने हँसते-हँसते चार्ली एण्ड्रूज़
गुनहगार ठहराया।

वे दिन अवर्णनीय हैं। बहुत काम की वजह से ज़रा भी
फिर भी लोग पानी की लहरों की तरह आते-जाते ही रहते थे।
हमने मुलाक़ातियों के हस्ताक्षर के लिए एक नोटबुक रखी
होता। अगर ऐसा होता तो हम यह आसानी से जान सकते कि
राजनीतिज्ञ, कितने धार्मिक-नेता तथा अन्य कितने विचारक स्त्री-
पुरुष उनसे मिलने आते थे। इस पुरुष के इस देश में आकर रहने के
के लोग समझे होंगे? अखबारों में बड़े-बड़े अक्षरों के साथ
आज गांधीजी चार्ली चैपलिन से मिले, आज बर्नार्ड शा से मि
कच्छ पहनकर बकिंघम के महलों में जाने का भी साहस कि
भी उन्होंने गोलमेज़ परिषद् में जिस अमंगल भविष्य की
ओर लोगों का बहुत कम ध्यान गया। आज हमें अनुभव
समय के बयान कितने सच्चे और स्थायी थे।

इस समय लन्दन में तीसरी गोलमेज़ परिषद् हो रही
पाठकों के सामने आयेगा, तब तक इस परिषद् का फ़ैसला
इस समय जब वहाँ भारत के बारे में चर्चा चल रहे हैं
——— को बिना मुक़दमा चलाये ही यरवदा जेल में "न

इच्छा हो तब तक" बन्द है। जिस तरह किसी ने कहा है कि "गांधीजी ब्रिटिश जेलों के अन्दर बैठे हुए भी भारत पर अपना राज चला रहे हैं" यह बिल्कुल सही है।

आज से दस या बीस वर्ष बाद नं०८८ नाइट्सब्रिज के दरवाजे पर शायद एक ऐसा तख्ता लगा होगा, जिस पर लिखा होगा, "१९३१ में जब गांधीजी गोलमेज़ परिषद् के लिए यहां आये थे तब वे यहां ठहरे थे।"[१] आज जब कभी हम लोग इस घर के सामने से गुज़रते हैं, तो हमें जाज्वल्यमान अक्षरों में यह सवाल लिखा हुआ नज़र आता है, "आप लोगों ने गांधीजी का क्या किया?"[२]

१—युद्ध के दिनों में यह घर नष्ट हो गया है।

२—शिकागो के 'क्रिश्चियन सेंचरी' नामक साप्ताहिक पत्र में सन् १९३२ में यह लेख छपा था। लेखिका की अनुमति से यहां उसका अनुवाद दिया गया है।



गांधीजी बैरिस्टर की [illegible]